टाल्स्टाय ग्रन्थावलि

प्रेम में भगवान्

सस्ता साहित्य मण्डल

सस्ता साहित्य मण्डल

सर्वोदय साहित्य माला : नब्बेवाँ ग्रंथ

[९०]

[टॉल्सटॉय-ग्रंथावली : तीसरी पुस्तक]

प्रेम में भगवान्

[टॉल्सटॉय की सत्रह शिक्षाप्रद कहानियाँ]

अनु०

श्री जैनेन्द्रकुमार

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

—शाखायें—

दिल्ली : लखनऊ : इन्दौर

प्रकाशक

मार्तण्ड उपाध्याय, मंत्री,

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

संस्करण

फरवरी १९४० २०००

दाम

बारह आना

मुद्रक,

एस. एन. भारती,

हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस

नई दिल्ली।

निवेदन

टॉल्स्टॉय की ये कहानियाँ अपने समय, समाज या भूमि के बारे में जानकारी पहुँचाने के लिए उतनी नही, जितनी नैतिक समाधान के विचार से लिखी गई है। अधिकाश मुझे ऐसा ही प्रतीत हुआ है। इससे विषय को सुलभ रखने के खयाल से अनुवाद मे वैसे ब्यौरो को कुछ देशी कर दिया गया और थोडी स्वतन्त्रता बरत ली गई है।

दरियागंज, दिल्ली
२ फरवरी १९४०

—जैनेन्द्रकुमार

विषय-सूची

प्रेम में भगवान

: १ :

प्रेम में भगवान

एक नगर मे मार्टिन नाम का एक मोची रहा करता था। नीचे के तल्ले मे एक तग कोठरी उसकी थी। वहाँ से खिडकी की राह सडक साफ नजर आती जहाँ आने-जाने वालो के चेहरे तो नही, पर पैर दिखाई दिया करते थे। मार्टिन लोगो के जूतो से ही उनको पहचानने का आदी हो गया था। क्योकि वहाँ एक मुद्दत से रहता था और बहुतेरे लोगो को जानता था। पास-पडौस मे शायद कोई जोडा जूता होगा जो उसके हाथो न निकला हो। सो खिडकी की राह वह अपना ही काम देखा करता। कुछ जोडियो मे उसने तला बैठाया था तो कुछ मे और मरम्मत की थी। कुछ ऐसे भी होते कि पूरे के पूरे उसीके बनाये हुए। काम की मार्टिन को कमी नही थी, क्योकि काम वह सचाई से करता था। माल अच्छा लगाता और दाम भी वाजिब से ज्यादा नही लेता था। बडी बात यह थी कि वह वचन का पक्का था। जिस दिन की माँग होती अगर उस दिन पूरा करके दे सकता तो वह काम ले लेता था, नही तो साफ कह देता था। वादे करके झुठलाता नही था। इसलिए आस-पास सरनाम था और काम की उसके पास कभी कमी नही होती थी।

यो तो आदमी वह नेक था और नीति की राह उसने कभी नही छोडी। लेकिन उमर ज्यादह होने पर वह और भी आत्मा की भलाई की और ईश्वर की बाते सोचने लग गया था। अपना निजी काम शुरू करने का वक्त आने से पहले ही, यानी जब वह दूसरे के यहाँ मजूरी पर काम किया करता था, तभी उसकी स्त्री का देहान्त हो गया था। पीछे एक तीन बरस का बच्चा वह छोड गई थी। बालक तो और भी हुए थे, पर छुटपन मे ही सब जाते रहे थे। पहले तो मार्टिन ने सोचा कि बच्चे

को देहात मे बहन के यहाँ भेज दूँ। पर, फिर बालक को पास से हटाने को उसका जी नही हुआ। 'वहाँ दूसरे के घर बालक को जाने क्या भुगतना पडे, क्या नही। इससे चलो अपने पास ही जो रहने दूँ।'

सो मार्टिन नौकरी छोड, घर किराए ले, बच्चे के साथ वही रहने और अपना काम करने लगा। पर बालक का सुख उसकी किस्मत मे न लिखा था। बालक बारह बरस का हो चला था और उम्मीद बँधने लगी थी कि बाप के काम मे अब कुछ सहाई होने लगेगा। कि तभी आया बुखार, हफ्ते भर रहा होगा, और बालक उसमे चल बसा। मार्टिन ने बच्चे को दफनाया, लेकिन मन मे उसके ऐसा दु ख समा गया, ऐसा दुख कि ईश्वर तक को कोसने को जी होता था। दुख मे बार-बार वह कहता कि हे भगवान, मुझे भी उठा लो। तुम कैसे हो कि मेरा इकलौता, नन्ही-सी उमर का जो मेरे प्यार का बच्चा था, उसे तो तुमने उठा लिया और मुझ बूढे को छोड दिया! सो इस करनी पर जैसे उसने हठ ठान कर परमात्मा को अपने से विसार दिया।

एक दिन उसी के गाँव के एक बुजुर्ग, जो घर छोड पिछले आठ बरस से तीरथ-तीरथ घूम रहे थे, यात्रा की राह मे मार्टिन के पास आये। मार्टिन ने अपने दिल का घाव उनके आगे खोल दिया और सब दुख कह सुनाया। बोला—"अब भाई, मुझे जीने की भी चाह नही रह गई है। बस भगवान् करे मै जल्दी यहाँ से उठ जाऊँ। तुम्ही कहो जग मे अब कौन आस मुझे बाकी है ?"

उन वृद्ध यात्री ने कहा—"ऐसी बात मुँह से नही कहते, मार्टिन। ईश्वर की लीला भला हम क्या जाने। कोई हमारा चाहा यहाँ थोडे ही होता है। ईश्वर की मर्जी ही चलती है। उनकी ऐसी ही मर्जी है कि बच्चा चला जाय और तुम जीओ, तो इसी मे कोई भलाई होगी। और जो निराशा की बात करते हो सो वजह यह है कि तुम बस अपने ही सुख के लिए रहना चाहते हो।"

मार्टिन ने पूछा—"नही तो भला किसके लिए रहना चाहिए ?"

वृद्ध ने कहा—"ईश्वर के लिए, मार्टिन। उसने हमे जीवन दिया।

सो उसीके लिए हमे रहना चाहिए। उसके निमित्त रहना सीख जाओ, कि फिर कोई क्लेश भी न रहे। फिर सब सहल हो जाय।"

सुनकर मार्टिन कुछ देर चुप रहा। फिर बोला—"पर ईश्वर के लिए रहना कैसे होगा ?"

वृद्ध ने उत्तर दिया—"सन्त लोगो के चरित से पता लग सकता है कि ईश्वर के लिए जीने का भाव क्या है। अच्छा तुम बाँच तो सकते हो न। तो इजील की एक पोथी ले आना। उसे पढना। उसमे सब लिखा है। उससे पता लग जायगा कि ईश्वर की मर्जी के अनुसार रहना कैसा होता है।"

यह वचन मार्टिन के मन मे बस गये। उसी दिन वह गया और बडे छापे की इजील की पोथी ले आया और बाँचना शुरू कर दिया।

पहले विचार था कि छुट्टी के दिन सातवे रोज पढा करूँगा। लेकिन एक बेर पढना शुरू किया कि उसका मन बडा हल्का मालूम हुआ। सो वह रोज़-रोज पढने लगा। कभी तो पढने मे इतना दत्तचित्त हो जाता कि लालटेन की वत्ती धीमी पडते-पडते बुझ तक जाती, तब कही पोथी हाथ से छूटती। देर रात तक पढता रहता। और जितना पढता उसे साफ दीखता कि ईश्वर की आदमी से क्या चाहना है और ईश्वर मे होकर आदमी को कैसे जीवन बिताना चाहिए। उसका दिल खूब हलका हो गया था। पहले रात को जब सोने लेटता तो मन पर बहुत बोझ मालूम हुआ करता था। बच्चे की याद करके वह बडा शोक मानता था। लेकिन अब वह बार-बार हल्के चित्त से यही कहता कि हे भगवान, तू ही है। तू ही जगदाधार है। तेरा ही चाहा हो।

उस समय से मार्टिन की सारी ज़िन्दगी बदल गई। पहले चाय पिया करता था और कभी-कभी दारू भी ले लेता था। पहले कभी ऐसा भी हो गया है कि किसी साथी के साथ जरा ज्यादा चढा आये और आकर वाही-तबाही बकने लगे और खरी-खोटी कहने लगे। लेकिन अब यह सब बात जाती रही। जीवन मे उसके अब शान्ति आ गई और आनन्द रहने लगा। सबेरे वह अपने काम पर बैठ जाता और दिनभर काम

करने के वाद साँझ हुई कि दिया लिया और इजील की पोथी खोल वाँचने बैठ गया। जितना पढता उतनी ही उसकी वुद्धि साफ होती और मन खुलकर प्रसन्न होता हुआ मालूम होता।

एक वार ऐसा हुआ कि इजील की पुस्तक लेकर मार्टिन रात वहुत देर तक बैठा रह गया। सत ल्यूक की कथनी वह पढ रहा था। छठे अध्याय मे उसने वाँचा —

"जो तुझे एक गाल पर मारे, तू दूसरा भी उसके आगे कर दे। जो कोट उतारना चाहे, कुरता भी उसे सौप दे। जो माँगे सवको दे। और जो ले जाय उससे तू वापिस कुछ न माँग। और जो तू चाहता है कि ऐसे लोग तुझसे वरते, वैसे ही तू उनसे वरत।"

फिर वह प्रसग उसने पढा जहाँ प्रभु मसीह कहते है —

"तुम 'प्रभु' 'प्रभु' तो मुझे कहते हो। पर मेरा कहा करते नही हो। जो मेरे पास आता है, मेरा कहा सुनता है और सुना करता है, वह उस आदमी के समान है जिसने गहरे खोद अपने मकान की नीव चट्टान पर जमाई है। वाढ आई और लहरे टकरा-टकरा कर हार गई, पर मकान नही हिला। क्योकि नीव चट्टान पर खडी थी। पर जो सुनता है और करता नही, वह उस आदमी के समान है जिसने धरती पै मकान खडा किया, पर बुनियाद न दी। आई पानी की वाढ, और टकराना था कि मकान ढह गिरा। उसका सव डूव गया, कुछ वाकी न रहा।"

मार्टिन ने ये बचन पढे तो मन भीतर से गद्‌गद् हो गया। आँख से ऐनक उतार उसने पोथी पर रख दी और माथे पर अगुली देकर उस कथन पर वह गहरा सोच करने लगा। उन बचनो से वह अपने जीवन की तोल-परख कर रहा था।

अपने से ही वह पूछने लगा कि अव मेरा मकान चट्टान पर है कि रेत पर खडा है। चट्टान पर है तो ठीक है। पर यहाँ इकले मे बैठे तो सव सही-दुरुस्त मालूम होता है। जैसे ईश्वर की मर्जी के मुताबिक ही मै चल रहा हूँ। लेकिन आँख झपकी कि मन मे विकार हो आता है। तो भी जतन मुझे छोडना नही चाहिए, जतन मे ही आनन्द है। हे भगवान, तुम्ही मालिक हो।

यह सब विचार कर वह फिर सोने को हुआ । पर पोथी उससे नही छूटती थी । सो फिर वह सातवा अध्याय बाँचने लगा । वहाँ जहाँ कि सौ-वरस का बूढा प्रभु के पास आता है और विधवा के पुत्र का जिक्र है और सन्त जॉन के शिष्य लोग मिलते हैं । पढते-पढते फिर वह जगह आई जहाँ एक धनी-मानी ईशु मसीह को अपने घर भोजन देते हैं । फिर वह स्थल कि जहाँ एक पापिनी आँसुओ से उनके चरण पखारती और केशो से उन्हे पोछती है । उस समय प्रभु उसका पक्ष लेते और उसे आशीष और आशा देते हैं । पुस्तक का चवालीसवाँ वन्ध आया और मार्टिन ने पढा—

"तव प्रभु उस स्त्री की ओर होकर साइमन से वोले—'इस स्त्री को देखो । मै तुम्हारे घर अतिथि हूँ । पर तुमने मेरे पैरो पर पानी नही दिया । और यह है कि अपने आँसुओ से इसने मेरे पैर धोये है और केशो से उन्हे पोछा है । तुम मुझसे वचे हो और जवसे मै आया हूँ, यह मेरे पैरो को ही चूमती रही है । तुमने मेरे सिर पर भी तेल नही दिया, और यह है कि मेरे पॉव स्नेह से भिगोती रही है—' "

ये शब्द पढते-पढते मार्टिन सोचने लगा—"उसने पैरो पर पानी नही दिया, उन्हे छूने से वचा । सिर को तेल नही दिया " मार्टिन ने ऐनक उतार वही पोथी पर रखदी और सोच मे डूब गया ।

"वह आदमी मेरी तरह का रहा होगा । अपनी-ही-अपनी सोचता होगा । कैसे खुद अच्छा खा लेना और आराम से रह लेना । वस, अपना ही सोच, मेहमान की चिन्ता नही । कुल अपना ही अपना उसे ख़याल था । मेहमान की तनिक परवाह नही थी । और कौन मेहमान ? स्वय भगवान् । जो कही वह मेरे यहाँ पधार जॉय तो क्या मै भी वैसा ही करूँ ?"

उस समय दोनो वाह चौकी पर डाल उसी पर मार्टिन ने अपना सिर टेक दिया । ऐसे वैठे-वैठे जाने फिर कव उसे नीद आ गई ।

कि इतने मे जैसे विलकुल कान के पास से वडे सूक्ष्म सुर मे किसी ने कहा—"मार्टिन !"

मार्टिन मानो नीद से चौक कर उठा । वोला—"कौन है ?" मुडकर दरवाजे के वाहर झाका, पर कोई न था । उसने फिर पुकार दी । पुकार

के जवाव मे उसे साफ-साफ सुनाई दिया। "मार्टिन, कल गली पर ध्यान रखना। मै आऊँगा।"

अब मार्टिन उठा। खडा होगया, आखे मली। समझ नही सका कि उसने ये शब्द जागते में सुने थे, कि सपने मे। फिर उसने दिया बुझा दिया और सो गया।

अगले दिन तडका फूटने से पहले ही वह उठा और भजन-प्रार्थना कर, आग जला, अगीठी पर खाना चढा दिया। फिर अपनी खिडकी के तले आकर काम मे जुट गया। काम करते-करते रात की वात सोचने लगा। कभी तो उसे मालूम होता कि वह सब सपना था। कभी जान पड़ता कि सचमुच की ही आवाज उसने सुनी थी। सोचा कि ऐसी वाते पहले भी तो घटती रही है।

खिडकी के तले बैठा, रह-रह कर, वह सडक पर देखने लगता था। काम से ज्यादा उसे किसीके आने का ध्यान था। अनपहचाने जूते गली पर चलते देखता तो झाक उठता कि उनका पहनने वाला जाने कौन है। इस तरह एक झल्लीवाला नये चमचमाते जूतो मे उधर को निकला। फिर एक कहार गया। इतने मे एक पुराना सिपाही, जिसने पुराने राजा का राज देखा था, उस गली मे आया। हाथ मे उसके फावडा था। जूतो से मार्टिन उसे पहचान गया। पुरानी चाल के घिसे-से जूते थे। पहनने वाले का नाम स्टेपान था। एक पडौसी लालाजी के घर मे वह रहता था और उनका कुछ काम-धाम निवाह दिया करता था। यही झाडू-सफाई वगैरह कर देना। दया-भाव से लाला ने उसे रक्खा हुआ था। वहीं स्टेपान गली मे आकर झाडू से वर्फ हटाने लग गया था। रात वर्फ खूब पडी थी और जमा होगई थी। मार्टिन ने उसे एक निगाह देखा। कुछ देखते रह कर फिर नीचे सिर डाल अपने काम मे लग गया।

मन ही मन वह हस आया। बोला—"मै भी उमर से बुढा गया हूँ, नही तो क्या। देखो कि मै भी कैसा वहकने लगा हूँ। आया तो स्टेपान है गली साफ करने, और मुझे सूझा कि मसीह प्रभु ही आ गये हैं। है न बात कि मै सठिया गया हूँ।"

लेकिन कुछ टाके भरे होगे कि खिडकी की राह वह फिर वाहर देख उठा। देखा कि फावडा जरा टेक कर दीवार का सहारा ले स्टेपान या तो सुस्ता रहा है या फिर जरा गरम होने के लिए सास ले रहा है। स्टे-पान की उमर काफी थी। कमर झुक चली थी और देह मे कस वहुत नही रहा था। वरफ हटाने के लायक भी दम नही था। वह हाप-सा रहा था।

मार्टिन ने सोचा—"वुलाकर मै उसे चाय को पूछू तो कैसा! चाय वनी हुई है ही।"

सो, आरी को वही जूते मे उडसा छोड, खडे होकर झटपट चाय की सव तैयारी कर डालने लगा। फिर खिडकी के पास जाकर थपथपा कर स्टेपान को इशारा किया। स्टेपान सुनकर खिडकी पर आया। मार्टिन ने उसे अन्दर बुलाया और खुद वढकर दरवाजा खोल दिया। वोला—"आओ, थोडा गरमा न लो। तुम्हे ठण्ड लग रही मालूम होती है।"

स्टेपान वोला—"भगवान तुम्हारा भला करे। हा, मेरी देह मे सरदी वैठ गई है और जोड दर्द करते है।"

कहकर स्टेपान अन्दर आया और देह की वरफ द्वार के वाहर ही झाड दी। फिर यह सोचकर कि कही फर्श पर निशान न पडे वह वाहर ही पैर पोछने लगा। इसमे देह उसकी मुश्किल से सँभली रह सकी और वह गिरते-गिरते वचा।

मार्टिन वोला—"रहने दो, रहने भी दो। फर्श झड जायगा। सफाई तो रोज होती ही है। कोई वात नही भाई आ जाओ। वैठो, लो चाय पियो।"

दो गिलास भर कर एक मार्टिन ने स्टेपान के आगे सरका दिया और रकावी मे डाल कर दूसरे मे से खुद पीने लगा।

स्टेपान ने अपना गिलास खत्म कर औधा रख दिया। वह चाय के लिए बहुत धन्यवाद देने लगा। लेकिन प्रकट था कि और भी एक गिलास मिल जाय तो वुरी वात न होगी।

मार्टिन ने गिलास भरते हुए कहा—"एक और लो, अरे, लो भी।

कहकर साथ ही उसने अपना भी गिलास भर लिया। पर पीता जाता था और रह-रह कर मार्टिन सडक की तरफ देखता जाता था।

अतिथि ने पूछा—"क्या किसीकी वाट जोहते हो ?"

"वाट ? भई, क्या वताऊँ। कहते लाज आती है। सच पूछो तो इतजार तो नही है, पर रात एक आवाज सुनी थी जो मन मे दूर नही होती है। वह सचमुच कोई था, या सपना था, कह नही सकता। कल रात की बात है कि मैं धर्म-पुस्तक इजील वाच रहा था। उसमे प्रभु ईसा का वर्णन है न कि कैसे उन्होने दुख उठाए और किस भाति इस धरती पर वह प्रेम और भक्ती से रहे। सो तुमने भी जरूर सुना होगा।"

स्टेपान ने कहा—"सुना तो मैंने है। पर मैं अपढ आदमी हूँ और समझता-बूझता कम हूँ।"

"तो सुनो भाई। उनके जीवन के विषे की वात है। मैं पढ रहा था। पढते-पढते वह प्रसग आया जहा मसीह एक धनवान् आदमी के यहा जाते है। वह धनी आदमी मन से उनकी आवभगत नही करता। अब तुम्हे मैं क्या कहू। मैं सोचने लगा कि उस आदमी ने उनका पूरा आदर कैसे नही किया। मैंने सोचा कि कही मैं होता तो जाने क्या न करता। पर देखो कि उस आदमी ने मामूली भी कुछ नही किया। इसी तरह की बात सोचते-सोचते मुझे नीद आगई। फिर एकाएक जो जागकर उठा तो ऐसा लगा कि कोई मुझे नाम लेकर धीमे से कह रहा है कि देखना, इतजार मे रहना, मैं कल आऊँगा। ऐसा दो वार हुआ। सच कहूँ तो भाई, वह बात मेरे मन मे वैठ गई। यो तो मुझे खुद शरम आरही है, पर क्या वताऊँ, मन मे आस लगी ही है कि खुद भगवान् कही न आते हो!"

स्टेपान सुनकर चुप रहा, और सिर हिला दिया। फिर गिलास की चाय खत्म कर गिलास को अलग रख दिया। लेकिन मार्टिन ने सीधा कर फिर उसे चाय से भर दिया।

"लो लो भाई। पीओ भी। हा, मैं सोच रहा था कि इस पृथ्वी पर मसीह प्रभु कैसे रहते थे। नफरत किसीको नही करते थे और

मामूली-से-मामूली लोगो के बीच मिल-जुलकर रहते थे। साथी उनके साधारण जन थे और हम जैसे अधम और पापी लोगो को उन्होने शरण देकर उठाया था। उन्होने कहा कि जो तनेगा उसका सिर नीचा होगा। सो जो झुकेगा वही उठेगा। उन्होने कहा, तुम मुझे बडा कहते हो। और मै हूँ कि तुम्हारे पैर धोऊगा। कहा, कि सबसे आगे वही गिना जायगा जो सबसे पीछे रहकर सेवा जानेगा। क्योकि जो दीन है और दयावान है और प्रीत रखते है, वही धनी है।

स्टेपान सुनते-सुनते अपनी चाय भूल गया। बुड्ढा आदमी था और जल्दी उसे आसू आ जाते थे। सो वहा बैठे-बैठे भगवद्-बानी सुनकर उसके दोनो गालो पर आसू ढुलकने लगे।

मार्टिन ने कहा--"लो, लो। यही और।"

लेकिन स्टेपान ने माफी मागी, धन्यवाद दिया, और गिलास को अलग कर उठ खडा हुआ।

"तुम्हारा मुझपर बडा अहसान हुआ, मार्टिन। तुमने मेरे तन और मन दोनो को खुराक दी है और सुख पहुँचाया है।"

मार्टिन बोला---"कब तो अतिथि मिलते है। भाई, फिर भी इधर आया करना। मुझे बडी खुशी होगी।"

स्टेपान चला गया। उसके बाद बाकी बची चाय मार्टिन ने निबटाई, फैला सामान सगवाया, और काम पर आ बैठा।

बैठकर वही आरी से जूते के तले की सीवन ठीक करने लगा। तला सीता जाता था और खिडकी से बाहर देखता जाता था। ईशू की तस्वीर उसके मन मे थी और उन्हीकी करनी और कथनी की याद से उसका अत करण भरा था।

इतने मे दो सिपाही उधर से निकले। एक सरकारी जोडी पहने थे। दूसरे के पैरो मे देसी जूते थे। फिर पडौस के एक मकान-मालिक निकले जिनका बढिया कामदार जोडा था। फिर एक झाबा लिये नानबाई उधर से गुजरा। ऐसे बहुतेरे लोग चलते हुए गये। बाद एक स्त्री आई जिसके पैरो मे देहाती जूतिया थी। वह खिडकी के सामने मे तो गुजरी, लेकिन

आगे दीवार के पास जाते-जाते रुक गई। मार्टिन ने खिडकी मे से उसे देखा। वह इधर के लिए अनजान मालूम होती थी। कपडे मामूली थे और गोद मे बच्चा था। दीवार के पास वह हवा को पीठ देकर खडी होगई थी। बच्चे को हवा की शीत से बचाने को वह उसे बार-बार ढकने का जतन करने लगी। लेकिन उढाने को कपडा उसके पास नही के बराबर था। इन जाडे के दिनो मे गरमी के-से कपडे वह पहने थी। ये भी झीने और फटे थे। खिडकी मे से मार्टिन ने बच्चे का रोना सुना। स्त्री उसे मना-मनाकर चुप करना चाहती थी और वह चुप नही होता था। मार्टिन उठा और द्वार से बाहर जाकर बोला—"सुनना माई। इधर सुनो।"

स्त्री सुनकर मुडी।

"वहा सर्दी खुले मे बच्चे को लेकर क्यो खडी हो? अन्दर आजाओ, यहा बच्चे को ठीक तरह उढा भी लेना। इधर आओ, इधर।"

एक बुड्ढा आदमी, नाक पर ऐनक चढाये इस तरह उसे बुला रहा है, यह देखकर स्त्री को अचरज हुआ। लेकिन वह चलती आई।

साथ-साथ दोनो अन्दर आये और कमरे मे पहुँचे। वहा मार्टिन ने हाथ से बताकर कहा—"वह खाट है, वहाँ बैठ जाओ। आग है ही, ज़रा गरमा लो और बच्चे को भी दूध पिला लो।"

"दूध मेरे कहाँ है। सबेरे से मैने कुछ खाया नही है।" यह कहने पर भी बच्चे को उसने छाती से लगा ही लिया।

मार्टिन ने सिर खुजलाया। फिर रोटी निकाली और एक तश्तरी। फिर अँगीठी से उतारकर कुछ शोरबा रकाबी मे दे दिया। दलिये की पतीली भी उतारी, लेकिन वह अभी हुआ नही था। सो बस रोटी-रसा ही सामने कर दिया।

"लो, बैठजाओ और शुरू करो। बच्चा लाओ मुझे दो। देखती क्या हो, बच्चे क्या मुझे हुए नही है? देखलेना, मै बच्चो को खूब मना लेता हूँ।"

स्त्री बैठकर खाने लगी। मार्टिन ने बच्चे को बिछौने पर लिटा दिया और खुद बैठ गया। वह तरह-तरह से बच्चे को बहलाने लगा। कभी

कैसी आवाज़ निकालता और कभी कुछ बोली बोलता। लेकिन दाँत थे नही और आवाज उससे ठीक नही निकलती थी। सो बच्चे का रोना जारी रहा। तब उँगली दे-देकर वह बच्चे को गुदगुदाने लगा। फिर एक खेल किया। उँगली सीधी बच्चे के मुह तक ले जाता, फिर चट से खीच लेता। यह उसने बार-बार किया, पर उँगली बालक को मुह मे नही लेने दी। क्योंकि उँगली वह काम से तमाम काली हो रही थी। मोम-बोम जाने क्या उसमे लगा था। बच्चा पहले तो इस उँगली के खेल को ध्यान से देखने लगा और चुप हो गया। फिर तो एकदम वह हँस पडा। मार्टिन यह देख बडा ही खुश हुआ।

स्त्री बैठी खाती जाती थी और बतलाती जाती थी कि कौन हूँ और क्यो ऐसी हालत मे हूँ।

बोली—"मेरे आदमी की सिपाही की नौकरी थी। फिर कोई आठ महीने हुए जाने उन्हे कहाँ भेजा गया। तब से कुछ खबर उनकी नही मिली। उसके बाद मैंने रोटी पकाने की नौकरी करली। रोटी बनाती थी। लेकिन यह बालक होने को हुआ तो मुझे उन्होने काम से हटा दिया। तीन महीने से मै भटक रही हूँ कि कोई नौकरी मिल जाय। जो पास था, पेट के अर्थ सब बेच चुकी। अब कौडी नही रह गई है। सोचा, मै धाय बन जाऊँ। लेकिन कोई मुझे रखने को राजी नही हुआ। कहते थे कि मै बहुत दुबली और दुखिया दीखती हूँ, सो दूध क्या उतरेगा। मै यहाँ एक लालाइन की बात पर आई थी। वहाँ हमारे गाँव की एक नौकरनी है। उन्होने मुझे रखने को कहा था। मै समझती थी कि सब ठीक-ठाक है। पर वहा गई तो कहा कि अगले हफ्ते तक हमे फुर्सत नही है, फिर आना। वह दूर जगह थी, और आते-जाते मेरा दम हार गया है। बच्चा बिचारा भूखा है, देखो कैसी आँखे हो गई है। भाग्य की बात है कि वह तो मकान की मालकिन दयालु है, भाडा नही लेती। नही तो, मेरा ठौर-ठिकाना न था।"

मार्टिन ने सुनकर सास भरी। पूछा—"कोई गर्म कपडा पास नही है?"

बोली—"गर्म कपडा कहाँ से हो। अभी कल ही छ आने मे अपना चदरा बेचकर चुकी हूँ।

इतना कहकर स्त्री वढी और वच्चे को गोद मे लेलिया। मार्टिन खडा हो गया और अपने कपडो मे खोज-छान करने लगा। आखिर एक वडा गर्म चोगा उसने निकाला। कहा—"यह लो। चीज़ तो फटी पुरानी है, पर चलो वच्चे के कुछ काम तो आ ही जायगी।"

स्त्री ने उस चोगे को देखा। फिर उस दयावान् वूढे की तरफ आख उठाई। फिर चोगे को हाथ मे लेते-लेते वह रो पडी।

मार्टिन ने मुडकर खाट के नीचे झुककर वहाँ से एक छोटा-सा वक्स निकाला। उसे चीज़-वस्त से खाली किया और सामने कर दिया।

स्त्री वोली—"भगवान् तुम्हारा भला करे, वावा। सचमुच ईश्वर ने ही मुझे इधर भेज दिया। नही तो वच्चा ठिठुर कर मर चुका होता। चली मै तव सर्दी इतनी नही थी। अव तो कैसी गजव की ठडी वयार चल रही है। जरूर यह ईश्वर की करनी है कि तुमने खिडकी से वाहर झाका और मुझ गरीविनी पर दया की।"

मार्टिन मुस्कराया। वोला—"यह सच वात है। उसीने मुझे आज इधर देखने को कहा था। कोई यह सयोग ही नही है कि मैने तुम्हे देखा।"

यह कहकर मार्टिन ने उसे अपनी सपने की वात सुनाई। वताया कि कैसे ईश्वर की वाणी हुई थी कि इन्तजार करना, मै आऊँगा।

स्त्री बोली—"कौन जाने? ईश्वर क्या नही कर सकता।" वह उठी और अपने वच्चे को चारो ओर से ढकते हुए चोगा कन्धो पर डाल लिया। तव झुककर मार्टिन को फिर एक वार धन्यवाद दिया।

"प्रभु के नाम पर—यह लो।"

मार्टिन ने कहा और चदरा गिरवी से छुडाने के लिए छ आने स्त्री के हाथ मे थमा दिये। स्त्री ने ईशु प्रभु को स्मरण किया। मार्टिन ने भी प्रभु का नाम लिया और फिर उसे वाहर पहुँचा आया।

स्त्री के चले जाने पर मार्टिन ने देगची उतार कुछ खाया-पीया, वासन-वस्त सभाल कर रख दिए और फिर काम करने वैठ गया। वह वैठा रहा, वैठा रहा, और काम करता रहा। लेकिन खिडकी को नही भूला। छाया कोई खिडकी पर पडती, कि हर वार वह तुरन्त निगाह

करता कि देखू, कौन जा रहा है। उनमे कुछ जान के लोग निकले तो कुछ अनपहचाने भी। पर कोई खास नजर नही आया।

थोडी देर बाद एक सेववाली स्त्री को मार्टिन ने ठीक अपनी खिडकी के सामने रुकते देखा। टोकनी वह एक वडी लिये थी, लेकिन सेव उसमे वहुत नही रह गये दीखते थे। साफ था कि वह वहुत कुछ उसमे से वेच चुकी है। उसकी कमर पर एक वोरा था जिसमे छिपटिया भरी थी। उसे वह घर ले जा रही थी। कही इमारत की मदद लगी होगी, सो वही से वटोर कर लाई होगी। वोरा उसे चुभ आया था और एक कन्धे से दूसरे पर उसे वदलना चाहती थी। सो वोरे को उसने रस्ते के एक ओर रख दिया और टोकरी को किसी खभे से टिका दिया। फिर वोरे की छिपटियो को हलहलाने लगी। लेकिन तभी फटीसी टोपी ओढे एक लडका उधर दौडा और टोकरी से एक सेव ले भागने को हुआ। पर वुढिया ने देख लिया और मुडकर चट से उसकी वाह पकड ली। लडके ने वहुतेरी खीचातानी की कि छुट जाय, लेकिन वुढिया ने अपने हाथ जमाये रक्खे। टोपी वालक की उतार कर फेक दी और उसे वालो से पकडकर झझोडने लगी। लडका चिल्लाया, जिसपर वुढिया और धिक्कार उठी। यह देख मार्टिन ने हाथ की आरी उडसी भी नही, कि हाथसे उसे वही डाल झट से दरवाजे के वाहर आगया। जल्दी मे ऐनक भी छूटी। लड-खंडाते पैरो वह सीढी उतर और दौड सडक पर आ खडा हुआ। वुढिया लडके के वाल झझोट रही थी और गालिया दे रही थी। कहती थी—"तुझे पुलिस मे दूगी। लडका छूटने को मचल रहा था। चिल्ला रहा था कि मैने कुछ नही लिया, मुझे क्यो मार रही हो? मुझे छोड दो।"

मार्टिन ने आकर उन्हे अलग कर दिया। लडके को हाथ से लेकर कहा—"जाने दो, माई। भगवान् के लिए उसे अव माफ कर दो।"

"अजी, मै उसे दिखा दूँगी। जिससे साल-एक याद तो रक्खे। वदमाश को थाने ले जाऊँगी!"

मार्टिन वुढिया को निहोरने लगा।

"जाने दो, माई। फिर ऐसा नही करेगा। भगवान् के लिए उसे जाने दो।"

वुढिया ने लडके को छोड दिया। लडका भाग जाने को हुआ। लेकिन मार्टिन ने उसे रोक लिया।

बोला—"इन मा से माफी मागो। और फिर ऐसा न करना। मैने देखा था तुम्हे सेव ले जाते हुए।"

लडका रो उठा और माफी माँगने लगा।

"ठीक। और यह लो अव अपने लिए एक सेव।" कहते हुए मार्टिन ने टोकरी से एक सेव लिया और लडके को दे दिया। फिर वोला—"इसके पैसे मै दूँगा तुम्हे, माई।"

"इस तरह इन छोकरो को तुम विगाड दोगे।" वुढिया वोली, "इसे कोडे लगने चाहिए थे, कि हफ्ते भर तो याद रहती।"

"ओह, माई," मार्टिन कह उठा, "छोडो-छोडो। यह तरीका हम लोगो का हो, ईश्वर का यह तरीका नही है। अगर एक सेव की चोरी के लिए उसे कोडे लगने चाहिये तो हमे अपने पापो के लिए क्या मिलना चाहिए, सोचो तो ?"

वुढिया चुप रह गई।

तब मार्टिन ने उसे उस कथा की याद दिलाई जहाँ प्रभु तो अपने सेवक पर सारा ऋण छोड देते है, पर वह दास जरा के लिए अपने कर्जदार का गला जा दवोचता है। वुढिया ने यह सव सुना और लडका भी पास खडा सुनता रहा।

"सो प्रभु की वानी है कि हम माफ करे।" मार्टिन ने कहा, "नही तो हम भी माफी नही पायेगे। हर किसीको माफ करो। अनजान बालक को तो और भी पहले माफी मिलनी चाहिए।"

वुढिया ने सिर डुलाया और सास भरी।

बोली—"यह तो सच है। लेकिन वे इतने विगडे जो जा रहे है।"

मार्टिन बोला, "यह तो हम बडो पर है कि न अपने उदाहरण से उन्हे हम अच्छी राह दिखाएँ।"

"यही तो मै कहती हूँ" वुढिया वोली, "मेरे खुद सात हो चुके है। उनमे सिर्फ अब एक लडकी है।" वुढिया वताने लगी कि कैसे और कहा

वह अपनी बेटी के साथ रहा करती थी और कितने धेवती-धेवते उसके थे। बोली—"यह देखो अब मुझमे अगर्चे कुछ कस नही रह गया है, फिर भी उनके लिए मै काम मे जुटी ही रहती हूँ। और बच्चे भी वे भले है। उन्हे छोड और कोई भी तो मेरे पास नही लगता। नन्ही एनी तो अब मुझे छोड किसीके पास जायगी ही नही। कहेगी, "हमारी नानी, हमारी प्यारी अच्छी नानी!"·· और एनी की यह याद आते ही बूढिया की आँखे एकदम भीग आई।

लडके के लिए बोली—"सच तो है। बिचारे का बचपन था, और क्या। ईश्वर उसका सहाई हो।"

यह कहकर जैसे ही वह बोरा उठाकर अपनी कमर पर रखने को हुई कि लडका कुदक कर उसके सामने आ खडा हुआ। बोला—"लाओ यह मै ले चलू, मा। मै उसी तरफ जा रहा हूँ।"

बुढिया ने 'हा' म सिर हिलाया और बोरा लडके की कमर पर रख दिया। फिर दोनो साथ-साथ गली से चलते चले। मार्टिन से सेब के पैसे मागना बुढिया बिलकुल ही भूल गई। दोनो आपस मे बोलते-चालते वहासे गये, और मार्टिन खडा-खडा उन्हे देखता रहा।

आँख से वे ओझल हो गये तो मार्टिन घर वापस आया। जीने पर उसे अपनी ऐनक पडी मिली जो कि टूटी नही थी। उसे उठा और आरी हाथ में ले वह फिर काम पर बैठ गया। थोडा-सा काम किया था कि चमड़े के सूराखो से सूआ निकालना उसकी आखो को मुश्किल होने लगा। तभी बाहर क्या देखता है कि लैम्पवाला गली के लैम्प जलाने गली से निकला जा रहा है।

सोचा—रोशनी का समय होगया दीखता है। सो उसने भी लैम्प ठीक किया, उसे टागा, और फिर अपने काम पर बैठ गया। एक जूता उसने पूरा कर लिया। फिर अदल-बदल कर उसे जाचने लगा। सब दुरुस्त था। सो उसने अपने औज़ारो को समेटा, कटनी-छटनी को बुहार दिया और मोम-धागा और सब चीज-वस्त को ठीक-ठाक रख दिया। फिर लैम्प उतार मेज़ पर रखली और आले से अपनी इजील की पोथी ली। चाहता था

कि वहीसे खोलू जहा पहले दिन निशान लगा छोडा था । लेकिन किताव दूसरी जगह खुल गई । उसे खोलना था कि कल का सपना फिर मार्टिन के सामने आ रहा । साथ ही उसे पैरो की आहट-सी सुन मिली, मानो कोई उसके पीछे चल-फिर रहा हो । मार्टिन मुडा । उसे लगा जैसे अधेरे कोने मे कोई आदमी खडे हो । लेकिन वह चीन्ह न सका कि कौन है । उसी समय एक आवाज फुसफुसाकर मानो कान मे वोली—"मार्टिन, मार्टिन, क्या तुम मुझे नही पहचानते ?"

मार्टिन सदेह के सुर मे वोला—"कौन ?"

आवाज वोली—"यह मै ।"

कहने के साथ अधियारे कोने से निकल स्टेपान आ आगे हुआ । वह मुस्कराया और वादल की भाति फिर अन्तर्धान हो गया ।

फिर आवाज हुई—"और यह मे ।"

और इस पर अधेरे मे से वह स्त्री गोद मे वच्चा लिये आ निकली । वह मुस्कराई, वच्चा हँसा और ये दोनो भी अन्तर्धान हो गये ।

फिर तीसरी आवाज आई—"और यह मै ।"

और कहने के साथ ही वह वुढिया और सेव लिये वह लडका आ सामने हुए । दोनो मुस्कराये और अन्तर्धान हो गये ।

इसपर मार्टिन का हृदय आनन्द से भर आया । उसने प्रभु को स्मरण किया, ऐनक आखो पर रक्खी और ठीक जहा इजील खुली थी, पढने लगा । सफे के ऊपर ही पढा :—

"मै भूखा था और तैने मुझे खाना दिया । मै प्यासा था, तैने मुझे पानी दिया । मै अजनवी था और तैने मुझे ग्रहण किया ।"

और सफे के अन्त मे पढा —

"इन भाइयो मे से एकके लिए, अदना से अदना के लिए, जो तैने किया वह मुझको किया समझ । जो दिया मुझे पहुँचा समझ ।"

उस समय मार्टिन को प्रत्यक्ष हुआ कि उसका सपना सच्चा हुआ है । उसको प्रतीति हुई कि रक्षक प्रभु सचमुच ही उसके घर पधारे थे और उन्होने उसका आतिथ्य पाया था ।

: २ :

खोखला ढोल

इमेल्यान नामका एक मजदूर एक दिन अपने मालिक के काम पर जा रहा था। जाते-जाते एक खेत की मेढ पर कहीसे एक मेढक कूदकर उसके सामने आ गया। मेढक इमेल्यान के पैर से कुचल ही गया था कि वह तो इमेल्यान तरकीब से बचा गया। इतने मे ही सुना कि पीछे से कोई उसका नाम लेकर पुकार रहा है।

मुडकर देखता है कि एक बडी सुन्दर लडकी है। उस लडकी ने कहा—"इमेल्यान, तुम शादी क्यो नही कर लेते हो?"

इमेल्यान ने कहा कि भला मै शादी कैसे कर सकता हूँ। जो पहने खडा हूँ वही कपडे मेरे पास है, और कुछ भी नही है। सो कौन मुझसे शादी करने को राजी होगा?

लडकी ने कहा—"तुम कहो तो मे राजी हूँ। मै बुरी नही हूँ।"

लडकी इमेल्यान के मन को बहुत अच्छी लग रही थी। वह बोला—"तुम तो परी दीखती हो। पर मेरा ठौर-ठिकाना भी तो नही है। हम लोग रहेगे कहाँ और कैसे?"

लडकी बोली—"इसकी क्या सोच-फिकर है। आलस कम किया और मेहनत ज्यादा की तो अपने लायक खाने-पहरने को तो सब कही हो जायगा।"

इमेल्यान ने कहा—"यह बात है, तो चलो, शादी करले। लेकिन बताओ कि चले कहाँ?"

"आओ शहर चलो।"

सो इमेल्यान और लडकी दोनो शहर चले। वहाँ शहर के परले किनारे पर दूर एक झोपडी मे इमेल्यान को लडकी ले गई। दोनो की शादी हो गई और वे घर बसाकर रहने लगे।

एक दिन शहर का राजा वहाँ से गुजरा। इमेल्यान की बीवी भी राजा की सवारी देखने झोपडी से बाहर निकली। राजा ने जो उसे देखा, तो दग रह गया।

राजा ने मन मे कहा—"ऐसी परी-सी सुन्दरी यहाँ कहाँ से आगई!" उसने अपनी सवारी रोककर उसे पास बुलाया। पूछा—"तुम कौन हो?"

सुन्दरी ने कहा—"मै इमेल्यान किसान की बीवी हूँ।"

राजा ने कहा—"ऐसी सुन्दर होकर तुमने किसान से ब्याह क्यो किया? तुम तो रानी होने लायक हो।"

सुन्दरी ने कहा—"आप मुझसे ऐसी बात मत कहे। मेरे लिए तो किसान ही अच्छे है।"

इस कुछ देर की बात के बाद राजा की सवारी आगे बढ गई। लौटकर राजा महलो मे आ तो गया, पर इमेल्यान की स्त्री की मूरत उसके मन से दूर नही हुई। वह रात भर नही सोया। सोचता रहा, कैसे उसे पाऊँ। पर उसकी समझ मे कोई ठीक जुगत नही आई। तब उसने अपने नौकरो को बुलाया और कहा—"कोई तदबीर उस परी को पाने की निकालो।"

राजा के नौकरो ने बताया—"इमेल्यान को काम करने के लिए महल मे बुलाइये। वहाँ हम उससे इतना काम लेगे, इतना काम लेगे कि आखिर वह मर ही जाय। तब उसकी बीवी अकेली रह जायगी और आप उसे ले लीजिएगा।"

राजा ने वैसा ही किया। फर्मान हो गया कि इमेल्यान महल मे काम करने के लिए आवे और स्त्री के साथ वही रहे।

हुक्म इमेल्यान को मिला, तब उसकी स्त्री ने कहा—"इमेल्यान, जाओ। दिन भर काम करना, पर रात को सोने घर आ जाना।"

सुनकर इमेल्यान चला गया। महल पहुँचने पर राजा के दीवान ने पूछा—"इमेल्यान, बीवी को छोडकर तुम अकेले क्यो आये?"

इमेल्यान ने कहा—"उसकी जगह तो वही है। घर उससे बनता है। यहाँ उसे क्या?"

राजा के महलो मे उस अकेले को दो आदमियो का काम दिया गया। आशा तो नही थी कि वह काम पूरा होगा, पर इमेल्यान उसमे जुट गया। और शाम होते-होते अचरज की बात देखो कि काम भी सब पूरा हो गया। दीवान ने देखा कि काम सब निबट गया है। तब अगले दिन के लिए उससे चौगुना काम बता दिया।

इमेल्यान घर लौटा। वहाँ सब चीज़ साफ-सुथरी थी, खाना तैयार था, पानी गरम रक्खा था और बीवी बैठी कपडे सी रही थी और पति की बाट देख रही थी। उसने पति की आवभगत की, हाथ-पैर धुलाये, खाने-पीने को दिया और काम की बात पूछी।

इमेल्यान ने कहा कि काम की बात क्या पूछती हो! काम तो इतना देते है कि बिसात से ज्यादा। काम के बोझ से मुझे मारना चाहते है।

स्त्री ने कहा—"काम के बारे मे झीकना अच्छा नही होता। काम के वक्त आगे-पीछे भी नही देखना चाहिए कि कितना हमने कर लिया, कितना बाकी रह गया। बस काम करते चलना चाहिए। बाकी सब अपने-आप ठीक हो जायगा।"

सुनकर इमेल्यान बेफिकरी से रात को सोया। सवेरे उठकर वह काम पर गया और बिना दाएँ-बाएँ देखे उसमे लग रहा। होनहार की बात कि साँझ से पहले सभी काम पूरा हो गया और अँधेरा होते-होते रात बिताने वह अपने घर पहुँच गया।

राजा के लोग दिन-ब-दिन उसका काम बढाते गये। पर हर रोज शाम होने से पहले सब काम खतम हो जाता और इमेल्यान सोने वही अपने घर पहुँच जाता। ऐसे एक हफ्ता बीत गया। राजा के नौकरो ने देखा कि भारी काम दे-देकर तो वे इमेल्यान का कुछ नही बिगाड सकते। उन्होने तब से मुश्किल और बारीक काम दिया। पर उससे भी कुछ न हुआ। क्या बढई का, क्या राजगिरी का, और क्या और तरह का, सब काम इमेल्यान ठीक तरह और ठीक वक्त से पहले कर देता और मजे मे रात को घर रवाना होजाता। ऐसे दूसरा हफ्ता भी निकल गया।

इस पर राजा ने अपने आदमियो को बुलाकर कहा—"क्या मै तुम्हे

मुफ्त का माल खिलाता हूँ ? दो हफ्ते बीत गये है, तुमने क्या करके दिखाया ? कहते थे, तुम काम से इमेल्यान को थका दोगे । पर शाम होती नही कि खुशी से उसे रोज गाते हुए घर लौटते मे अपनी आँखो से देखता हूँ । क्या तुम लोग मुझे बेवकूफ बनाना चाहते हो ?"

बादशाह के सामने वे लोग इधर-उधर करने लगे । बोले—"हमने अपने बस तो भारी-से-भारी काम उसे दिया । पर उसने तो सब ऐसे साफ कर दिया जैसे झाड़ू से बुहार दिया हो । वह तो थकता ही नही । फिर हमने बारीक काम सौपे । उन्हे भी उसने पार लगा दिया । कुछ भी काम दो वह सब कर देता है । जाने कैसे ! वह, या उसकी बीवी, कोई-न-कोई जादू जरूर जानते मालूम होते है ! हम तो खुद उससे तग है । हाँ, एक बात सोची है । इमेल्यान को बुलाया जाय, कहा जाय कि महल के सामने दिन भर के अन्दर एक मदिर की इमारत तुमको खडी करनी है । अगर वह न कर सके तो उसका सिर कलम कर दिया जाय ।"

राजा ने इमेल्यान को बुला भेजा । कहा—"सुनो इमेल्यान, महल के सामने एक नया मन्दिर बनवाना है । कल शाम तक वह तैयार हो जाना चाहिए । अगर कर दोगे तो इनाम दूँगा । नही करोगे तो सिर उतरवा लूँगा ।"

बादशाह की आज्ञा चुपचाप सुनी और इमेल्यान लौटकर चला आया । उसने सोच लिया कि अब जान गई । घर पहुँच कर पत्नी से कहा—"सुनती हो ? अब तैयारी करो और यहाँ से भाग चलो । नही तो बेमौत मरना होगा ।"

उसकी स्त्री ने कहा—"ऐसे क्यो डर गये हो ? और हम क्यो भाग चले ?"

इमेल्यान ने कहा—"डरने की बात ही है । राजा ने कल-कल मे एक पूरा नया मन्दिर खडा करने का हुक्म दिया है । नही कर सकूँगा तो सिर देना होगा । बस, बचने की एक ही राह है । वह यह कि वक्त रहते हम लोग यहाँ से भाग चले ।"

लेकिन उसकी बीवी ने इस बात को अपने कान पर भी नही लिया ।

वोली—"राजा के पास वहुत-से सिपाही हैं। कहीसे भी वे हमे पकड लायँगे। हम बच नही सकते। और जब तक बस हो हमे राजा का हुक्म मानना चाहिए।"

"हुक्म मैं कैसे मानूँ जबकि काम मुझसे होना मुमकिन नहीं है।"

स्त्री ने कहा—"तो भी जी क्यो हलका करते हो ? जो होगा देखा जायगा। अभी तो खा-पीकर आराम से सोओ। सवेरे तडके उठ जाना और सब काम ठीक हो जायगा।"

इस पर इमेल्यान आराम से सोया। अगले दिन पौ फटते ही बीवी ने उसे जगाया। कहा—"झटपट तैयार होकर जाओ और मन्दिर का काम पूरा कर डालो। यह हथौडी है, ये कीले है। अभी वहाँ एक दिन के लायक बाकी काम मिलेगा।"

इमेल्यान शहर मे गया। चौक मे पहुँचा तो देखता क्या है कि मदिर बना-बनाया खडा है। वह ऊपरी कुछ काम करने मे लग गया जो शाम तक सब पूरा हो गया।

राजा ने जगने पर देखा कि सामने मन्दिर तैयार खडा है और इमेल्यान यहाँ-वहाँ कुछ कीले गाड रहा है। मदिर बना देखकर राजा को खुशी नही हुई। इमेल्यान को सजा अब वह कैसे दे ? और उसकी बीवी कैसे हाथ लगे ? फिर उसने नौकरो को इकट्ठा किया। कहा—"इमेल्यान ने यह काम भी पूरा कर दिया। बताओ उसे किस बात पर खत्म किया जाय ? इस बार कोई पक्की तरकीब निकालो। नही तो उसके साथ तुम सब के भी सिर उतारे जायँगे।"

इस पर उन लोगो ने तय किया कि इमेल्यान से महल के चारो तरफ एक दरिया बहाने को कहा जाय, जिसमे किश्तियाँ तैर रही हो और किनारे-किनारे पक्के घाट हो। राजा ने इमेल्यान को बुला भेजा और यही हुक्म सुना दिया। कहा—"अगर एक दिन मे तुम पूरा मदिर बना सकते हो, तो यह काम भी एक रात मे कर सकते हो। कल सब हो जाय। नही तो तुम्हारा सिर धड पर न रहेगा।"

इमेल्यान अब सब आस छोड बैठा और भारी जी से घर आया।

घर मे पत्नी ने पूछा --"ऐसे उदास क्यो हो ? क्या राजा ने और नया काम बताया है ?"

जो हुआ था इमेल्यान ने कह सुनाया। बोला—"चलो, अब भाग ही चले।"

लेकिन बीबी ने कहा—"राजा के सिपाही है। उनसे कहाँ बचोगे ? जहाँ पहुँचोगे वही से वे पकड लेगे। इससे भागना नही, हुक्म मानना ही भला है।"

"लेकिन मुझसे उतना सब काम कैसे होगा ?"

स्त्री ने कहा—"जी मत छोटा करो। खा-पीकर आराम से सोओ। सवेरे उठ पडना और भगवान् ने चाहा तो सब ठीक हो जायगा।"

चिन्ता छोडकर इमेल्यान सो गया। सवेरे ही उसकी पत्नी ने उठाकर कहा—"उठो, अब महल जाओ। वहाँ सब तैयार है। महल के सामने दरिया के किनारे जरा जमीन उठी हुई है। लो यह फावडा, उसे हमवार कर देना।"

सवेरे उठते ही राजा ने अचम्भे से देखा, जहाँ कुछ नही था वहाँ दरिया मौजे ले रहा है, पाल खोले कश्तियाँ तैर रही है और इस तरफ जरा-सी जमीन को इमेल्यान फावडे से हमवार कर रहा है। राजा को अचरज तो हुआ, पर न तो पानी से भरी नदी और न उस पर खेलती हुई हसिनी-सी नौकाओ को देखकर उसके मन मे जरा खुशी हुई। इमेल्यान को पकड न पाने पर वह इस कदर बेचैन था। उसने सोचा कि अब मै करूँ तो क्या करूँ ? यह सोचकर उसने फिर अपने नौकरो को बुलवाया।

"देखो तुम लोग," राजा ने कहा, "कोई-न-कोई काम निकालो जो उससे न हो। समझे ? जो कहते है वह सब कर देता है। और अब तक उसकी औरत हमको नही मिल सकी है।"

सोचते-सोचते नौकरो ने एक युक्ति लगाई। राजा के पास जाकर कहा—"इमेल्यान को बुलाकर कहिए कि देखो इमेल्यान, वहाँ जाओ कि जाने-कहाँ और वह चीज लाओ कि जाने-क्या। तब वह बचकर नही

निकल सकेगा। वह फिर जहाँ कही भी जायगा, आप कह दीजिए कि वहाँ के लिए नही कहा था। और जो लायेगा, कह दीजिए कि वह हमने मगाया ही नही था। यह कहकर मौत की सजा दे दीजिए और उसकी बीवी ले लीजिए।"

राजा सुनकर खुश हुआ। कहा—"यह तुमने ठीक सोचा है।"

इमेल्यान को बुलाया गया और राजा ने कहा—"इमेल्यान, वहाँ जाओ कि जाने-कहाँ और वहाँ से वह लाओ कि जाने-क्या। अगर नही ला सके तो तुम्हारा सिर सलामत नही है।"

इमेल्यान ने घर आकर बीवी से राजा की बात कह सुनाई। सुनकर बीवी सोच मे पड गई।

बोली—"लोगो ने राजा को इस बार तुम्हे पकडने की ठीक तरकीब बता दी है। अब हमे होशियारी से चलना चाहिए।"

यह कहकर वह बैठी सोचती रही। आखिर बोली—"देखो, दूर एक दादी बुढिया है। सिपाहियो की वह धरती-मा जैसी है। उससे मदद माँगना। अगर वह तुम्हे कुछ दे, या बताये, तो उसे लेकर महल मे आना। मै वही रहूँगी। मै अब राजा के लोगो से बच नही सकती। वे मुझे जबर्दस्ती ले जायँगे। पर थोडे दिन की बात है। अगर तुम दादी की बात पर चलोगे तो मुझे जल्दी बचालोगे।"

उसने यात्रा के लिए पति को तैयार कर दिया। साथ मे कुछ कलेवे को बाँध दिया और चरखे का एक तकुआ दे दिया। कहा—"देखो, यह तकुआ दादी को देना। इससे वह पहचान जायँगी कि तुम कौन हो।" यह कहकर ठीक रास्ता बताकर उसे भेज दिया।

इमेल्यान चलते-चलते एक जगह पहुँचा जहाँ सिपाही कवायद कर रहे थे। इमेल्यान खडा होकर उन्हे देखने लगा। कवायद के बाद बैठकर सिपाही आराम करने लगे। उसने पास जाकर पूछा—"भाइयो, आप लोग जानते है कि कौन रास्ता वहा-जाने-कहा जाता है और मै कैसे वह-जाने-क्या चीज पा सकता हूँ?"

सिपाहियो ने अचरज से उसकी बात सुनी। फिर पूछा—"तुमको किसने यह काम देकर भेजा है?"

"मुझको राजा ने यह हुक्म दिया है।"

सिपाहियो ने कहा—"हम भी जिस दिन से सिपाही की नौकरी मे आये है उसी दिन से वहा-जाने-कहा जा रहे है और अभी कही नही पहुँचे है। और वह-जाने-क्या ढूंढ रहे है और अभी तक कुछ नही पासके है। हमसे भाई, तुम्हे कुछ मदद नही मिल सकती।"

इमेल्यान कुछ देर सिपाहियो के साथ ठहर कर आगे बढा। कोस-पर-कोस चलता गया। आखिर एक जगल आया। जगल मे एक झोपडी थी और सिपाहियो की धरती-माँ, वही बुढिया दादी, चर्खे पर सूत कात रही थी और रो रही थी। कातते-कातते वह उँगलियो को लेजाकर मुह के नही आख के पानी से गीला करती थी। इमेल्यान को देखकर बुढिया ने चिल्लाकर कहा—"कौन है ? तू यहाँ क्यो आया है ?"

तब इमेल्यान ने वह तकुआ बुढिया को दिया और कहा—"मेरी स्त्री ने यह देकर मुझे तुम्हारे पास भेजा है।"

बुढिया इसपर एकदम मुलायम पड गई और हाल-चाल पूछने लगी। इमेल्यान ने सब बता दिया। कैसे लडकी मिली, कैसे वे व्याह करके गाव मे बसे, कैसे मदिर बनाया और किश्ती-घाटवाला दरिया बनाया, और कैसे अब उसे राजा ने वहा-जाने-कहा जाने और वह-जाने-क्या लाने का हुक्म देकर भेजा है—यह सब उसने बता दिया।

सुनकर दादी का रोना रुक गया। मन मे बोली—"अब मेरे सकट कटने का वक्त आया है।" प्रकट मे इमेल्यान से कहा—"अच्छा बेटा, बैठो, कुछ खा-पीलो।"

खिला-पिलाकर दादी ने बताया कि देखो, यह सूत का पिडा है, इसे लो और सामने लुढका दो। इसके सूत के पीछे-पीछे तुम चलते जाना। चलते-चलते समदर तक पहुँच जाओगे। वहा एक बडा शहर दीखेगा। उसमे चले जाना। शहर के पार आखिरी मकान पर एक रात ठहरने को जगह मागना। वहा आख खोलकर रहना। तब तुम्हारी चीज मिल जायगी।

इमेल्यान ने कहा—"दादी, मै पहचानूगा कैसे कि यही वह चीज है ?"

बुढिया ने कहा—जब तुम ऐसी चीज देखो, जिसकी लोग माँ-बाप से भी ज्यादा सुने, समझ लेना वही है। उसीको राजा के पास लेजाना। तब राजा कहेगा, यह वह चीज नही है। तुम कहना, अगर यह वह नही है तो लाओ मैं उसे तोडे देता हूँ, और तब तुम उसे धमाधम पीटने लगना। पीटते-पीटते नदी तक ले जाना और टुकडे-टुकडे करके उसे नदी मे फेक देना। तब तुम्हारी स्त्री तुम्हे वापिस मिल जायगी और मेरे आँसू पुछ जावेगे।

इमेल्यान ने दादी को प्रणाम करके विदा ली और सूत के गोले के पीछे-पीछे चला। गोला लुढकता और खुलता हुआ आखिर समदर के किनारे तक पहुँच गया। वहा एक वडा शहर था और उसके दूसरे सिरे पर एक वडा मकान। इमेल्यान ने रात को ठहरने के लिए वहा जगह मागी और मिल गई।

सवेरे उसने सुना कि घर मे बाप लडके को जगा रहा है कि भैया, उठकर जाओ, जगल से कुछ लकडी काट लाओ।

लेकिन लडके ने सुना-अनसुना करके कहा—"अभी बहुतेरा वक्त है। ऐसी जल्दी अभी क्या है।"

माँ ने कहा—"उठो बेटा, जाओ। तुम्हारे पिताजी के बदन की हड्डी दुखती है। तुम नही जाओगे तो उन्हे जाना पडेगा। बेटा, दिन बहुत निकल आया है।"

पर लडके ने कुछ बहाना बना दिया और करवट लेकर फिर सोगया। इमेल्यान ने यह सब सुना।

तभी एकाएक बाहर सडक पर से किसी चीज की दमादम ज़ोर की आवाज होनी शुरू हुई। और देखता क्या है कि वह आवाज सुनते ही लडका फौरन उछल कर उठा और चट कपडे पहन घर से निकल भागा। इमेल्यान भी कूद कर देखने पीछे लपका कि क्या चीज है जिसका हुक्म लडका मा-बाप से ज्यादा मानता है। देखता क्या है कि सडक पर एक आदमी पेट के आगे बाधे एक चीज लिये जा रहा है जिसे वह दोनो तरफ दो कमचियो से पीट रहा है। वही चीज़ थी जो इस ज़ोर से गूज

रही थी और जिसकी आवाज पर लडका घर से भाग आया था। वह चीज गोल थी। दोनो सिरो पर खाल मढी थी। पूछा, कि इसका क्या नाम है?

लोगो ने वताया—"ढोल।"

"क्या यह अन्दर खोखला है?"

"हा, अन्दर यह खोखला है।"

इमेल्यान ताज्जुव मे रह गया। उसने कहा—"यह हमे देदो।" पर देनेवाले ने नही दिया। इस पर इमेल्यान ढोलवाले के पीछे-पीछे हो लिया। सारे दिन साथ लगा रहा। आखिर जव ढोलवाला सोया, तव ढोल उठा कर इमेल्यान भाग आया।

भागा-भाग, भागा-भाग, आया अपनी वस्ती मे। पहले तो वीवी को देखने पहुँचा घर। पर वहाँ वह नही थी, इमेल्यान के जाने के अगले दिन उसे राजा के लोग लेगये थे। इस पर इमेल्यान महल की डचौढी पर पहुँचा और अन्दर खवर भिजवाई कि इमेल्यान लौट आया है जो वहाँ गया था कि जाने-कहा और वह ले आया है कि जाने-क्या।

सुनकर राजा ने हुक्म दिया कि कह दो, अगले दिन आवे।

इस पर इमेल्यान ने कहलवाया—"मै वह चीज लेकर आया हूँ जो राजा ने चाही थी। राजा मेरे पास उसे लेने नही आ सकते तो मै ही उनके पास आता हूँ।"

इस पर राजा वाहर आये। उन्होने पूछा—"अच्छा, तुम कहाँ गए थे?"

इमेल्यान ने ठीक-ठीक वता दिया।

राजा ने कहा—"वह असली जगह नही है। अच्छा, लाए क्या?"

इमेल्यान ने ढोल दिखा दिया। लेकिन राजाने उसे देखा भी नही। कहा—"यह वह चीज नही है।"

इमेल्यान ने कहा—"अगर यह वह चीज नही है तो मै इसे पीटकर तोडे देता हूँ। फिर देखा जायगा।"

यह कहकर इमेल्यान ढोल पीटता हुआ महल से वाहर निकल आया। ढोल का पिटना था कि पीछे-पीछे राजा की फौज निकल आई और इमेल्यान को सलाम करके उसके हुक्म के इतजार मे खडी हो गई।

राजा ने अपनी खिडकी मे से यह देखा तो अपनी फौज को चिल्ला-चिल्ला कर कहा कि इमेल्यान के पीछे मत जाओ। पर किसीने कुछ नही सुना और सब ढोल के पीछे चल पडे।

राजा ने जब यह देखा तब हुक्म दिया कि इमेल्यान की बीवी उसको दे दो और वापिस वह ढोल मागा।

पर इमेल्यान ने कहा—"यह नही हो सकता। इसको तोडकर मुझे नदी मे फेक देना है।"

यह कहकर इमेल्यान ढोल पीटता हुआ नदी की तरफ बढ गया। सिपाही सब उसके पीछे थे। नदी पहुँचकर ढोल को टुकडे-टुकडे करके इमेल्यान ने नदी की धार मे फेक दिया। और सिपाही सब अपने-अपने घर भाग गये।

तब इमेल्यान अपनी बीवी को साथ लेकर अपने घर पहुँच गया। उसके बाद राजा ने उन्हे नही सताया और वे सुख से रहने लगे।

: ३ :

सूरत की बात

हिन्दुस्तान के सूरत शहर मे एक अतिथिशाला थी। उसीकी बात है। सूरत शहर उन दिनो बढा-चढा बन्दरगाह था और दुनियाभर से देश-विदेश के यात्री वहाँ आया करते और उस अतिथिशाला मे मिला करते थे।

एक दिन एक फारसी आलिम वहाँ आये। उन्होने ईश-तत्व पर मनन-चिन्तन करने मे जीवन बिताया था और उस विषय पर बहुत कुछ लिखा-पढा था। ईश्वर के बारे मे उन्होने इतना सोचा, इतना पढा और इतना लिखा था कि आखिर उनकी बुद्धि भ्रम मे पड गई थी और ईश्वर की सत्ता से भी उनका विश्वास जाता रहा था। यह पता पाकर वहाँ के शाह ने अपने देश फारिस से उन्हे देश-निकाला दे दिया था।

जीवन भर सृष्टि के आदि-कारण पर विवाद करते-करते यह बिचारे तत्वभेदी आखिर विभ्रम मे पड गये थे और बजाय यह समझने के कि उनकी बुद्धि मे विकार है, वह मानने लग गये थे कि सृष्टि की व्यवस्था मे ही कोई मूल-चेतना काम नही कर रही है।

इन फाज़िल आलिम के साथ एक अफ्रिका का हब्शी गुलाम भी था। वह सग-सग रहता था। आलिम अतिथिशाला मे आये तो गुलाम दरवाज़े के बाहर ही ठहर गया। वहाँ वह धूप मे एक पत्थर पर बैठ गया, और मक्खियाँ बहुत थी, सो बैठा-बैठा मक्खियाँ उडाने लगा।

वह फारसी आलिम अन्दर पहुँच कर आराम से मसनद पर जम गये और एक अफीम के शरबत के प्याले का हुक्म दिया। उसकी घूट लेने पर उनके दिमाग की नसो मे तेजी आगई। उस वक्त शाला के

खुले दरवाज़े मे से उधर बैठे गुलाम से वह बोले—"क्यो रे, क्या ख़याल है तेरा ? ख़ुदा है या नही है ?"

"वह तो है—"

गुलाम ने कहा और कमर पर बधी अपनी पेटी मे से लकडी की एक मूरत उसने निकाली । बोला—

"—जी, देखिए, यह है । इसी खुदा ने मेरे पैदा होने के रोज से मुझे बचाया और पाला है । हमारे देश मे हरेक आदमी जिस बरगद की पूजा करता है, यह खुदा मेरा उसीकी लकडी का बना है ।"

वहाँ अतिथिशाला मे जमा हुए और लोग आलिम मालिक और बेवकूफ गुलाम की यह बात-चीत अचरज से सुनने लगे । पहले तो उन्हे मालिक के सवाल पर आश्चर्य था । लेकिन गुलाम के जवाब पर और भी आश्चर्य हुआ ।

उन्ही लोगो मे एक ब्राह्मण पडित थे । गुलाम की बात सुनकर उन्होने उस तरफ मुँह किया और बोले—

"अधम मूर्ख, क्या तुम सभव समझते हो कि ईश्वर को तुम अपनी पेटी मे लिये फिर सकते हो ? ईश्वर एक है, अखिल है । वह ब्रह्म है । समस्त सृष्टि से वह बडा है, क्योकि स्रष्टा है । ब्रह्म ही सत् है, वही सत्ताधीश ईश्वर । उसीकी महिमा-पूजा मे गगा-तट पर अनेकानेक हमारे मन्दिर बने हुए है जहाँ सन्निष्ठ ब्राह्मण उसकी पूजा-अर्चा मे निरत रहते है । सत्य परमेश्वर का ज्ञान उन्हीको है और किसीको नही है । सहस्त्र-सहस्त्र वर्ष होगये, परन्तु कई काल-चक्रो के अनन्तर भी ब्राह्मण ही उस ब्रह्म-ज्ञान के अधिकारी है, क्योकि स्वय ब्रह्मा उनके रक्षक है ।"

ब्राह्मण पडित ने इस भाव से यह कहा कि उपस्थित मण्डली सब उनके प्रभाव से विश्वस्त हो रहेगी । लेकिन वही एक यहूदी दलाल थे । जवाब मे वह बोले—

"नही, सच्चा ईश्वर हिन्दुस्तान के मन्दिरो मे नही है । न ब्राह्मण लोग ईश्वर को विशेष प्रिय है । सच्चा ईश्वर ब्राह्मणो वाला ईश्वर नही है । बल्कि इब्राहीम, इसाक, याकूब का खुदा सच्चा खुदा है । और उसका

साया सबको छोड पहले इजराईल वालो को मिला है। दुनिया शुरू हुई तब हमारी जाति को ही उसकी शरण का वरदान मिला है। हम लोग जितने उसके निकट है और कोई नही। अगर हम आज दुनिया पर छितरे हुए फैले है, तो इसका और मतलब नही है, यह तो हमारी परीक्षा है। क्योंकि उसका वचन है कि एक दिन होगा कि उसकी प्रिय (हमारी) जाति के सब जन येरुशलम मे जमा होगे। तब येरुशलम का हमारा प्राचीन मन्दिर अपनी पहली महिमा पर आ जायगा और हज़रत इजराईल वहाँ बैठकर तमाम जातियो और मुल्को पर हकूमत करेगे।"

यह कहकर वह यहूदी भावावेश मे आँसू गिरा आये। वह और भी कहना चाहते थे, लेकिन एक रोमन पादरी भी वहा थे। वह बीच मे पडकर यहूदी की तरफ मुखातिब होकर बोले—

"तुमने जो कहा सत्य नही है। तुम ईश्वर के माथे अन्याय मढते हो। वह तुम्हारी जाति को औरो से ज्यादा प्यार नही कर सकते। नही, अगर यह सच भी हो कि पहले इजराईल के लोग ईश्वर को विशेप प्यारे थे, तो इधर १९०० साल से उन लोगो ने उसे अपनी करतूतो से नाराज़ कर दिया है। जभी तो ईश्वर ने अपने क्रोध मे तुम्हारी तमाम जाति को तितर-बितर कर डाला है। अब अपने मजहब मे औरो को तुम बढा भी नही सकते हो, और उसके माननेवाले जहाँ-तहाँ थोडे-ही-बहुत रहते जा रहे है। परमात्मा किसी खास जाति के साथ पक्षपात नही करता। हा, रोमन-चर्च को उसने विशेप प्रकाश दिया है और जिसका कल्याण होनेवाला है उसको वह उस चर्च की शरण भेज देता है। इससे रोमन-चर्च के सिवाय मुक्ति का उपाय दूसरा नही है।"

रोमन पादरी ने यह कहा था कि वहा एक प्रोटेस्टेट भी थे जिनका चेहरा पीला हो आया और रोमन पादरी की तरफ मुडकर वह बोले—

"कैसे कहते हो कि मुक्ति तुम्हारे धर्म मे है। असल मे रक्षा और मुक्ति उन्हीको मिलेगी जो ईशु के उपदेशो को मन से और सचाई से मानेगे और उसके अनुसार चलेगे।"

उस समय एक तुर्क जो सूरत मे ही चुगी दफ्तर मे अफसर थे, चुरट

पीते वही बैठे थे, उन दोनो पादरियों की तरफ उन्होंने ऐसे देखा कि दोनो भूल मे है। और बोले—

"रोमन या दूसरे ईसाई धर्म मे आपका ईमान रखना अब फिजूल है। बाहर सौ बरस हुए कि उसकी जगह एक सच्चे मजहब ने ले ली है। उसके नबी हजरत मोहम्मद पर ईमान लाइये। वह मजहब है इस्लाम। आप देखते ही है कि इस्लाम किस तरह दोनो मुल्क योरप और एशिया मे बढता जा रहा है। यहाँ तक कि इल्मो-हुनर के मरकज चीन मे भी वह फैल रहा है। आपने अभी खुद कहा था कि खुदा ने यहूदियो का साथ छोड दिया है। यह इससे भी साबित है कि यहूदियो की छीछा-लेदर हो रही है और उनका मजहब फैल नही रहा है। तो फिर इस्लाम की सचाई का आपको इकबाल करना होगा, क्योंकि उसको दूर-दराज तक फतह हासिल हो रही है। आखिर बहिश्त मे उन्हीको जगह होगी जो मोमिन होगे। और मोहम्मद को खुदा का आखिरी पैगम्बर मानकर उसपर ईमान लावेगे। उनमे भी वह जो उमर के पैरोकार होगे, अली के नही। अली को माननेवाले काफिर है।"

इसके जवाब मे उन फारसी आलिम ने कुछ कहना चाहा, क्योंकि वह अली के तबके के थे। लेकिन तबतक तो वहाँ उपस्थित नाना मत-सम्प्रदायो के लोगो के बीच खासा विवाद छिड आया था। अबीसीनिया के ईसाई वहाँ थे और तिब्बत के लामा, इस्माईली और अग्निपूजक सब के सभी परमात्मा के बारे मे और उसकी सच्ची राह-पूजा के बारे मे झगड रहे थे। सबका आग्रह था कि उन्हीकी जाति और देश को सच्चे ईश्वर का ज्ञान मिला है और उन्हीकी विधि सच्ची है।

बहस हो रही थी और चिल्लाहट मची थी। पर उनके बीच एक महाशय चुप थे। वह चीन देश के थे और कनफ्यूशस मे श्रद्धा रखते थे। एक कोने मे अपने शात बैठे थे और विवाद मे भाग नही ले रहे थे। चुपचुप वह चाय पी रहे थे और दूसरे लोग जो बोल रहे थे सबकी सुनते थे पर अपनी कुछ नही कहते थे।

उस तुर्क ने उन सज्जन को इस तरह बैठे देखा और बोला—"ऐ चीनी

दोस्त, जो मैंने कहा उम्मीद है उसकी ताईद मुझे तुमसे मिलेगी। तुम चुप बाँधे बैठे हो, लेकिन अगर बोले तो मै जानता हूँ कि मेरी राय की ताईद ही करोगे। तुम्हारे मुल्क के व्यापारी जो चुगी के मामले मे मेरी मदद लेने आते है, उनका कहना है कि चीन मे अगर्चे बहुतेरे मत चले, लेकिन चीन के लोगो को इस्लाम ही सबसे बढकर मालूम हुआ और वे खुशी से उसे कबूल करते जा रहे है। मेरी बात की तुम ताईद करोगे मै जानता हूँ। इससे बोलो कि खुदा और उनके सच्चे रसूल की बाबत तुम्हारा क्या खयाल है।"

दूसरे लोगो ने भी उन चीनी आदमी की तरफ मुडकर कहा—"हाँ, हाँ, बताओ कि इस विषय मे तुम क्या सोचते हो?"

कनफ्यूशस के अनुयायी उन चीनी सज्जन ने आँखे बन्द की, जैसे अपनी ही थाह ली। फिर आँखे खोली, और अपनी चौडी आस्तीनो मे से बाहर निकाल दोनो हाथो को अपनी छाती पर ले लिया और शान्त ओर सौम्य वाणी मे उन्होने कहना आरम्भ किया—

"भाइयो, मुझे मालूम होता है कि बडा कारण अहकार है। वही धर्म-विश्वास के मामलो मे हमको आपस मे सहमत होने से रोकता है। आप लोग मेहरबानी करे और आपकी इच्छा हो तो एक कहानी कहकर मै इस बात को साफ करना चाहूँगा।

"हम लोग यहाँ चीन से एक अँग्रेजी जहाज पर सवार होकर आये है। वह जहाज दुनिया भर का चक्कर लगा चुका है। राह मे पानी के लिए हमे ठहरना था। सो सुमात्रा द्वीप के पूरबी किनारे पर हम उतरे। दुपहरी का वक्त था, ऊपर धूप। इससे उतर कर हम कुछ जने समुद्र के किनारे नारियलो की छाह मे बैठ गये। पास ही वहाँके लोगो का गाँव था। हम उस समय जगह-जगह और मुल्क-मुल्क के आदमी वहाँ जमा थे।

"बैठे हुए थे कि एक अन्धा आदमी उसी तरफ आया। पीछे मालूम हुआ कि लगातार बहुत काल सूरज की तरफ देखते रहने से वह आदमी अन्धा हुआ है।

"असल मे आँख गाडकर वह सूरज का भेद और उसकी ज्योति को

अपनी समझ मे पकड रखना चाहता था । उस कोशिश मे वह एक अर्से तक रहा । सदा उधर ही ताका करता । नतीजा यह हुआ कि सूरज की रोशनी से उसकी आँखो का नुकसान हुआ और वह अन्धा हो गया ।

"अन्धा होने पर तो और भी वह अपने मन मे तर्क चलाने लगा । सोचता कि सूरज की रोशनी कोई तरल पदार्थ तो है नही, क्योकि तरल होती तो इस बरतन से उस बरतन मे ढाली जा सकती और पानी की भाति हवा मे वह यहाँ-वहाँ भी हिलती-डुलती दीखती । और न वह आग है । आग होती तो पानी उसे बुझा सकता । न ही चेतन वह आत्मा है, क्योकि आत्मा तो अदृश्य है और रोशनी आँखो से दीखती है । फिर न वह कोई जड वस्तु है, क्योकि उसे उठा-पकड नही सकते । और यदि सूरज की रोशनी तरल नही है, अग्नि अथवा चेतन या जड भी नही है तो सिद्ध हुआ कि वह ही नही है । अत वह असिद्ध है ।

"इस तरह उसका तर्क चलने लगा । और सदा सूरज की तरफ देखने और बुद्धि लगाये रखने से उसने अपनी आँख भी और बुद्धि भी दोनो को खो दिया । सो जब वह अन्धा हो गया तब तो उसे और पक्का हो आया कि सूरज की रोशनी कोई सत्-वस्तु ही नही है ।

"इस अन्धे आदमी के साथ एक दास भी था । उसने मालिक को नारियल के पेडो की छाह मे बिठा दिया था और जमीन पर से एक नारियल उठाकर रात के लिए रोशनी का इन्तजाम करने लगा था । बटकर नारियल की जटा की उसने बत्ती बनाई, गिरी को कुचल कर उसीके खोल मे तेल निकाल लिया और बत्ती को उस तेल मे भिगोकर रख दिया ।

"वह दास वहा बैठा जब यह कर रहा था तभी उसका अन्धा मालिक उससे बोला कि क्यो रे, मैने तुझे ठीक कहा था न कि सूरज नही है । देखो यह कैसा गुप्प अधेरा चारो तरफ है । फिर भी लोग कहते है कि सूरज है अगर है तो भला क्या है ?

"दास बोला—'यह तो मै नही जानता कि सूरज क्या है । सो जानने से मुझे है भी क्या । पर रोशनी क्या है यह तो मै जानता ही हूँ । यह

मैंने अपना तैयार कर लिया है दीया। उसके सहारे उंगली पकड़कर मैं आपको राह दिखाने के काम भी आ जाऊँगा और रात को झोपड़ी मे उससे जो चीज आप चाहे पाकर दे भी सकूंगा।'

''इतना कहकर उसने अपने नारियल के दीपक को ऊपर उठा लिया। बोला—

'' सो मेरा तो यही सूरज है।'

''पास ही वहा एक लगडा आदमी भी बैसाखी रक्खे बैठा था। यह सुनकर वह हस दिया और अन्धे आदमी से बोला—'मालूम होता है तुम जनम के अन्धे हो। तभी तो नही जानते सूरज क्या है। मै बताता हूँ क्या है। वह एक आग का गोला है। हर सवेरे समुन्दर मे से उगता है और शाम हमारे टापू की पहाडियो मे जाकर छिप जाता है। हम यह रोज देखते है। आँखे होती तो तुम भी देख लेते।'

''यह बात-चीत एक मछुआ मल्लाह भी सुन रहा था। वह लगडे आदमी से बोला कि दीखता है तुम अपने इस छोटे से टापू से बाहर कभी कही नही गये हो। जो तुम लगडे न होते और मेरी तरह डोगी लेकर बाहर निकल सकते तो देखते कि सूरज तुम्हारी पहाडियो मे जाकर नही छिपता है। लेकिन जैसे कि हर सवेरे वह निकलता समन्दर से है, वैसे ही हर रात डूबता भी समन्दर मे ही है। जो कह रहा हूँ उसको तुम बिल्कुल सच्ची बात मानना। क्योकि हर रोज मै यह अपनी आखो देखता हूँ।

''उस समय हमारे दल मे एक हिन्दुस्तानी भी थे। बात के बीच मे पडकर वह बोले—'कोई समझदार आदमी तो नासमझी की ऐसी बात कर नही सकता। तुमने कहा उसपर मुझे अचरज होता है। आग का गोला पानी मे उतरे तो भला बिना बुझे कैसे रहेगा? असल मे वह गोला नही है, न आग है। वह तो एक देवता है जो सात घोडो के रथ मे बैठकर स्वर्ण-पर्वत मेरु की प्रदक्षिणा करते है। कभी राहु और केतु नाम के असुर उन देवता पर चढाई करते है और ग्रस लेते है। तब दुनिया पर अन्धकार छा जाता है। लेकिन हमारे पडित-पुरोहित होम-स्तवन आदि

करते है । उससे देवता मुक्त हो जाते है और फिर प्रकाश देने लगते है । तुम जैसे अनजान लोग जो बस अपने द्वीप के इर्द-गिर्द रहते है और आगे का कुछ नही जानते, वही ऐसी बचपन की बात कह सकते है कि सूरज उन्हीके देश के लिए होता है ।'

"एक मिस्री सज्जन भी वहा मौजूद थे। उनका पहले एक अपना जहाज था। अपनी बारी लेकर वह बोले—'तुम्हारी बात भी सही नही है। सूरज कोई देवता नही है। और न तुम्हारे हिन्दुस्तान के या तुम्हारे स्वर्ण-पर्वत के चारो तरफ ही घूमता है। मै दूर-दूर घूमा हूँ। काले सागर गया हूँ, अरब का किनारा मेरा देखा है, मेडागास्कर और फिलिप्पन के टापू भी मैने घूमे है। सूरज हिन्दुस्तान को ही नही सारी धरती को रोशनी देता है। कोई एक पहाड का चक्कर वह नही करता, पर पूरब मे दूर कही जापान के टापू के पार वह उगता है और पच्छिम मे उधर इग्लिस्तान के द्वीपो के परली तरफ कही छिपता है। जभी तो जापान के लोग अपने देश को 'निपन' कहते है, जिसका मतलब होता है सूर्योदय। मै इस बात को पूरे भरोसे से कह सकता हूँ, क्योकि अव्वल तो मैने खुद कम नही देखा-जाना है, और फिर अपने दादा से सुनकर भी मै बहुत जानता हूँ। ओर से छोर तक समन्दर तमाम हमारे बाबा का छाना हुआ था।'

"अभी वह मिस्री सज्जन और आगे भी कहते। लेकिन हमारे जहाज के एक अग्रेजी नाविक जो वही थे, बीच मे काटकर बोलने लगे—

"'असल मे तो हमारे इग्लैण्ड देश के रहनेवाले लोगो से सूरज की गति के बारे मे ज्यादह और कोई नही जान सकता। हमारे मुल्क का बच्चा-बच्चा जानता है कि सूरज न कहीसे निकलता है, न कही छिपता है। वह तो सदा पृथ्वी के चारो तरफ घूमता रहता है। इसका पक्का सबूत यह है कि हमने धरती का पूरा चक्कर लगाया है, पर सूरज मे तो जाकर हम कही नही टकराये। जहाँ गये, सूरज सवेरे दीखने लगता और रात को आख से छिप जाता। ठीक जैसे कि यहा होता है।

"यह कहकर वह अग्रेज छडी से रेत मे नकशा बनाकर अपनी बात

समझाने लगे कि किस तरह सूरज धरती के चारो तरफ आस्मान मे चक्कर लगाता है । लेकिन वह साफ-साफ नही समझा सके । इससे जहाज के बडे अफसर को बताकर बोले कि वह मुझसे ज्यादह इन बातो को जानते है । वह ठीक-ठीक आपको समझा सकेगे ।

"वह सज्जन समझदार और बुर्दबार थे । अबतक चुपचाप सब सुने जा रहे थे । खुद कहे जाने से पहले वह नही बोले थे । अब सबका उनसे अनुरोध होने लगा । इसलिए बोले—

" 'आप सब लोग एक-दूसरे को असल मे बरगला रहे है और खुद भी धोखा खा रहे है । सूरज धरती के चारो तरफ नही घूमता, बल्कि धरती उसके चारो तरफ घूमती है । इस सफर मे वह खुद भी अपनी धुरी पर घूमती जाती है । यह उसका एक चक्कर चौबीस घटे मे पूरा होता है । इतने समय मे न सिर्फ जापान, फिलिप्पन या जहाँ हम बठे है, वह सुमात्रा का टापू ही सूरज के सामने आ जाते है, बल्कि अफ्रीका, योरप, अमरीका या और जो मुल्क हो उस सूरज के सामने हो रहते है । सूरज किसी एक पहाड या टापू या एक समन्दर या एक धरती के लिए नही चमकता । बल्कि हमारी पृथ्वी की तरह और ग्रह है, उनको भी वह चमकाता है । अगर आप अपने पैर के नीचे की धरती के बजाय ऊपर आसमान पर भी निगाह रक्खा करे तो आप सभी लोग यह आसानी से समझ सकते है । तब यह मानने की जरूरत आपको न रहेगी कि सूरज आपके लिए या आप ही के देश के लिए उगता और प्रकाश करता है ।'

"जगत् के देश-देश देखे हुए और ऊपर आसमान पर भी निगाह रखनेवाले उन अनुभवी ज्ञानी ने उनको यह सद्बोध दिया ।"

कन्फ्यूशस के चेले वह चीनी महोदय ऊपर की कहानी सुनाकर अन्त मे बोले—"इस तरह मत-मतातर के बारे मे यह अहकार ही है जो हम मे फूट डालता है और भूल करवाता ह । सूरज की उपमा से ईश्वर को भी जान लीजिए । सब लोग अपना-अपना परमात्मा बनाना चाहते है । या कम-से-कम अपने देश-जाति के लिए एक विशेष ईश्वर को मानना चाहते है । हरेक मुल्क और जाति के लोग उस ईश्वर को अपने मन्दिर-गिरजो

मे घेरकर बाँध लेना चाहते है, कि जो मारे ब्रह्माड से भी बडा है और कुछ जिससे खाली नही है ।

"क्या आदमी का बनाया कोई मन्दिर-गिरजा इस कुदरत के मदिर की बराबरी कर सकता है ? खुद भगवान ने यह जगत् सिरजा है कि सब लोग यहाँ एक रहे और सिरजनहार माने । अरे, आदमी के तमाम देवालय उसीकी नकल तो है । और भगवान का आलय स्वय यह जगत् है । मदिर क्या होता है ? उसमे आगन होता है, छत होती है, दीपक होते है, मूर्ति-चित्र होते है । वहा उपदेश लिखे मिलते है, शास्त्र पुराण रक्खे होते है । वेदी होती है, पुजारी होते है और पुजापे की भेट-पूजा चढती है । लेकिन किस देवालय का समदर जैसा खुला आँगन है ? आकाश के चन्दोए जैसा किस मन्दिर का कलश है ? सूरज, चाँद और तारे किसके प्रकाश-दीप है ? सजीव भक्ति से भीगे उदार सन्तो के समान स्फूर्ति-दायक चित्र-मूर्तियाँ और कहाँ है ? आदेश और आलेख्य ईश्वर की महिमा के ऐसे सुलभ और कहाँ है जैसे इस जगती पर ? यहाँ हर कही तो उस दया धाम की दया के अनुकम्पा के स्मृति-चिन्ह है । और कहाँ वह नीति-शास्त्र है जिसका वचन आदमी के भीतर की वाणी जितना स्पष्ट और अविरोधी है ? कौन पूजक और कौन पुजापा उस आत्माहुति से बढकर है जो इस पृथ्वी पर स्त्री-पुरुष नित्य एक-दूसरे के प्रति दे रहे और देकर जी रहे है ? और कौन वेदी है जो सत्पुरुष के हृदय की वेदी की उपमा मे ठहर सके, कि जहाँका चढा उपहार स्वय भगवान् ग्रहण करते है ?

"ईश-कल्पना जितनी ही ऊँची उठती जायगी उतना सद्ज्ञान बढेगा । उस ज्ञान के साथ-साथ मनुष्य स्वय उत्तरोत्तर वैसा ही होता जायगा । उसी महामहिम की भाँति कल्याणमय, दयामय और प्रेममय । फिर वह जीवमात्र को उसीकी भाति स्नेह करेगा ।

"इसलिए सब जगह जो उसीका प्रकाश और उसीकी महिमा देखता है, वह किसीकी त्रुटि नही निकालेगा, न किसीको हीन मानेगा । जो उस ज्योति की बस एक रेख लेकर, मूर्त्ति बना उसीमे भगवान् को देख लेता है, उसकी श्रद्धा भी स्खलित नही करेगा । न तो वह उस नास्तिक को हीन

भाव मे देखेगा जो दुर्दैव से ही अन्धा होकर सूरज की रोशनी मे अकस्मात् वचित बन गया है ।"

इन शब्दो मे कन्फ्यूशस के शिष्य चीन के उस सत्पुरुष ने अपनी मान्यता प्रकट की । सुनकर वहाँ मौजूद सब आदमी शान्त और गम्भीर हो आये और मत-मतान्तर के बारे मे अपना सब विवाद भूल गये ।

: ४ :

देर हो, अंधेर नहीं

पाटनपुर नगर मे हरजीतराय नाम का एक व्यापारी रहता था। उसके दो दुकान थी और रहने का अपना निज का घर। हरजीत जवान था। स्वस्थ शरीर, बाल घुँघराले, हँसता चेहरा। विनोदी स्वभाव का था और गाने का उसे शौक था। उमर पर उसे शराव का चस्का भी लगा था और पैसा होने पर उसे रगरेली सूझती थी। लेकिन शादी हो गई, तो उसकी आदते धीमे-धीमे बदल गई। खास मौको की वात दूसरी, नही तो शराव उसने अव छोड दी थी।

एक वार वह कातकी के मेले को जा रहा था। जाने लगा और पत्नी से विदा ले रहा था कि वह वोली, "देखो, आज न जाओ, मुझे बुरा सपना दीखा है।"

हरजीत हँस दिया। वोला, "मै जानता हूँ कि तुमको यह डर है कि मै मेले मे गया तो वहक जाऊँगा और पैसा वरबाद करके आऊँगा। यही न?"

बीवी ने कहा कि ठीक मालूम नही कि यही डर है कि दूसरा है। लेकिन मुझे बुरा सपना हुआ है। सपने मे दीखा कि तुम जव लौटे और टोपी उतारी तो सारे वाल तुम्हारे सफेद-फक पडे हुए है।

हरजीत और भी हँसा। वोला, "यह तो और अच्छे भाग्य का सपना है। देख लेना कि इसका फल होगा कि मै जितना माल ले जाता हूँ, वह सव विक जायगा और तुम्हारे लिए तरह-तरह की सौगात लेकर लौटूँगा।"

इस भाति उसने परिवार से राजी-खुशी विदा ली और चल दिया।

आधे पडाव चलने पर उसे अपनी जान-पहचान का एक और

व्यापारी मिला। वे दोनो एक साथ सराय मे ठहरे। साथ ही खाया-पीया और फिर पास-पास के कमरो मे सोने चले गये।

सवेरे देर तक सोने की हरजीत की आदत नही थी। और ठण्ड-ठण्ड मे रास्ता चलना भी आसान होता है। इसलिए तडका फूटने से पहले उसने गाडीवान को जगाया। कहा कि गाडी जोतो और चलो।

यह कहकर वह सराय के मालिक के पास गया जो वहीं पिछवाडे रहता था। सरायवाले का लेना चुकाया, उसे धन्यवाद दिया और हरजीत अपने सफर पर आगे बढा।

कोई दसेक कोस चलने पर उसने बैल खोले कि कुछ उन्हे खिला-पिला दे। खुद भी जरा आराम किया। सुस्ताने के बाद फिर सरायवाले को चाय के लिए कहकर अपनी बसरी निकाल बजाने लगा।

तभी एक इक्का आकर वहाँ रुका। इक्का सजा-बजा था और घोडे के गले मे घटी बज रही थी। उसमे से एक अफसर उतरे, पीछे दो सिपाही। आकर अफसर ने हरजीत से सवाल पूछने शुरु किये कि तुम कौन हो, कहाँ से आये हो ?

हरजीत ने सवालो का माकूल जवाब दिया और कहा—"आइये, चाय मे मेरा साथ दीजिएगा ?"

लेकिन अफसर निमत्रण को अनसुना करके अपनी जिरह पर कायम रहे। "पिछली रात तुम कहाँ थे ? अकेले थे ? या और कोई व्यापारी साथ था ? आज सवेरे वह दूसरा आदमी तुम्हे मिला ? अँधेरे-तडके तुम सराय से क्यो चल दिये ?" इत्यादि—

हरजीत अचरज मे था कि ये सब प्रश्न उससे क्यो किये जा रहे है ? तो भी जैसा था, वह सब बताता चला गया। फिर उसने कहा, 'आप तो मुझसे इस तरह सवाल-पर-सवाल पूछ रहे है जैसे मै कोई चोर-डाकू हूँ। अपने काम से मै जा रहा हूँ, मुझसे ऐसे और सवाल पूछने की जरूरत नही है।"

अफसर ने इस पर साथ के सिपाहियो को पास बुला लिया। कहा, "मै इस जिले का पुलिस अफसर हूँ। सवाल मै इसलिए पूछता

हूँ कि जिसके साथ तुम कल रात ठहरे थे, उसका आज गला कटा हुआ पाया गया है । अब हम तुम्हारी तलाशी लेगे ।"

इसपर वे तीनो कमरे मे आ गये और अफसर-सिपाही सबने मिलकर हरजीत का सामान खोलना और खोजना शुरू किया और देखते क्या हैं कि सामान मे से एक छुरा बरामद हुआ ।

अफसर ने कहा—"यह किसका है ?"

हरजीत देखता रह गया। खून से दागी उस छुरे को अपने सामान मे से निकलते देखकर वह अचकचा गया था । वह डर आया ।

"इस चाकू पर खून के निशान कैसे है ?"

हरजीत ने जवाब देने की कोशिश की । लेकिन शब्द उसके मुँह से ठीक नही निकले । लडखडाती आवाज मे कहा, "मैं—मेरा ' नही—मैं नही जानता ।"

पुलिस अफसर ने कहा, "इसी सवेरे अपने बिस्तर पर वह व्यापारी मरा पाया गया है । किसीने गला काट दिया है । एक तुम्ही हो सकते हो जिसने यह काम किया । मकान अन्दर से बन्द था और तुम्हारे सिवाय वहाँ और कोई न था । तुम्हारे सामान मे से फिर यह छुरा भी निकलता है । इसपर खून के निशान तक मौजूद है । तिसपर तुम्हारा चेहरा और तरीका भी भेद खोले दे रहे हैं । इसलिए सच कहो कि तुमने उसे कैसे मारा और कितना रुपया तुम्हे हाथ लगा ?"

हरजीत ने शपथ-पूर्वक कहा, "यह मेरा काम नही है । शाम को साथ ब्यालू करने के बाद मैंने उस व्यापारी को फिर देखा तक नही । मेरे पास अपने पाँच हज़ार रुपयो के अलावा और कुछ नही है । यह चाकू मेरा नही है ।"

लेकिन यह कहते हुए उसकी जबान लडखडाती थी, चेहरा पीला था और डर से वह ऐसा काँप रहा था कि मुजरिम ही हो ।

पुलिस-अफसर ने सिपाहियो को हुक्म दिया कि इसको बाँधकर गाडी मे लेलो ।

सिपाहियो ने हाथ-पैर बाँधकर उसे गाडी मे पटक दिया । हरजीत

के आँसू आगये और उसने प्रार्थना की शरण ली। उसके पास न माल रहा, न रकम। सब छीनकर उसे नजदीक कस्बे की हवालात मे बन्द होने भेज दिया गया। पाटनपुर मे उसकी बाबत पूछताछ हुई कि वह कैसे चाल-चलन का आदमी है। वहाँके व्यापारियो ने और दूसरे लोगो ने बताया कि पहले तो वह पिया करता था और वक्त मौज मे गँवाता था। लेकिन वह आदमी भला है और इधर आकर राह-रस्त पर चलता है। खैर, मुकदमा चला और अजबपुर के एक व्यापारी की हत्या करने, ओर उसके आठ हजार रुपये चुराने का आरोप उसके सिर लगा।

हरजीत की स्त्री सुनकर शोक मे बेसुध-सी होगई। उसे समझ न पड़ा कि कैसे वह अपने कानो पर विश्वास करे। बच्चे उसके सब छोटे थे। एक तो दूधपीती बच्ची थी। सबको साथ ले वह शहर मे गई जहाँ उसका पति जेल मे था। पहले तो उसे मुलाकात की इजाजत न मिली। बहुत उनहार करने और कोशिश करने मे आखिर इजाजत उसे मिली और वह पति के पास ले जाई गई। जेल के कपड़ो और बेड़ियो मे चोर-डाकुओ के साथ बन्द जब उसने अपने पति को देखा तो वह सह न सकी और धड़ाम से गिरी। काफी देर बाद उसे होश हुआ। तब उसने बच्चे को गोद मे खीच पति के पास बैठकर घर-बार की बातचीत शुरू की। उसने पूछा कि यह क्या हुआ?

हरजीत ने जो हुआ था सब बतला दिया।

पूछने लगी—"अब क्या करना चाहिए?"

"राजा के पास अर्जी भेजनी चाहिए कि एक निरपराध आदमी की मौत से रक्षा की जाय।"

स्त्री ने कहा, "अर्जी तो मैने भेजी थी। लेकिन वह मजूर नही हुई।"

हरजीत इसका जवाब नही दे सका। आँखे नीची डालकर देखता रहा।

स्त्री ने कहा, "सुनते हो, सपना वह मेरा बेमतलब नही था कि मैंने एकदम तुम्हारे बाल सफेद देखे थे। याद है? उस रोज तुम्हे चलना नही चाहिए था। लेकिन—"

आगे वह खुद कुछ नही कह सकी। फिर पति के बालो मे उँगली

फिराते हुए बोली, "मेरे स्वामी, अपनी स्त्री से देखो झूठ न कहना। सच कहना—तुमने हत्या नही की ?"

"ओ, सो तुम भी मुझे सन्देह करती हो !" कहकर हाथो मे मुँह को छिपा हरजीत फूटकर रोने लगा।

उस वक्त सिपाही ने आकर कहा कि मुलाकात का वक्त हो गया। अब चलो।

स्त्री-बच्चे चल दिये और हरजीत ने आखिरी बार अपने परिवार को हसरत से देखकर विदा किया।

उनके चले जाने पर हरजीत को ध्यान हुआ कि सब तरफ क्या-क्या कहा जा रहा है। ओर तो और, स्त्री तक ने उसपर शुबह किया। यह याद कर उसने मन मे धार लिया कि ईश्वर ही बस सचाई जानता है। उसीसे अब तो प्रार्थना करनी चाहिए। उसीसे दया की आशा रखनी चाहिए। और कुछ नही। यह सोच हरजीत ने फिर कोई दरख्वास्त नही की। आशा-अभिलाषा उसने छोड दी और ईश्वर की प्रार्थना मे लीन रहने लगा।

उसे कोडो की और डामुल की सजा मिली। सो पहले उसे भीगे बेत के कोडे लगे। जब उसके जख्म भर आये तो और कैदियो के साथ उसे फिर डामुल भेज दिया गया।

छब्बीस बरस वह वहाँ कालेपानी मे कैदी रहा। इस बीच बाल उसके रुई-से सफेद हो गये। मैले सन के-से रग की दाडी बढ आई। हँसी-खुशी उसकी उड गई। कमर झुक आई। अब धीमे चलता था, थोडा बोलता था, ओर हँसता कभी न था। अक्सर प्रार्थना मे रहता था। और कही उसे आस न थी।

जेल मे उसने जूते गाँठना सीख लिया था। उससे कुछ पैसो की बचत भी हो गई थी। उन पैसो से उसने 'सन्तो की जीवनी' नाम की किताब मगाली थी। जेल मे पढने लायक चादना रहता कि वह उस किताब को पढने लगता और पढता रहता। इतवार के दिन वह भजन-पद गाकर सुनाता। उसकी आवाज अब भी खासी थी और बडी भाव-भक्ती के साथ वह पद कहता था।

जेल-अफसर हरजीत को चाहते थे। वह सीधा, नेक और विनयी था। और कैदी भी उसकी इज्जत करते थे। वे उसे 'दादा' या 'भगतजी' कहा करते थे। जब उन्हे जेलवालो से किसी बात के लिए अरदास करनी होती, या कुछ कहना-सुनना होता तो हरजीत को ही अपना मुखिया बनाते थे। और जब आपस मे झगडा होता, तब भी उसीके पास आकर निबटारा और फैसला मागते थे।

घर मे हरजीत को कोई खबर नही मिली। उसे पता नही था कि उसकी बीबी-बच्चे जीते भी है कि नही।

एक दिन उनकी जेल मे कैदियो की एक नई टुकडी आई। सो शाम को पुराने कैदी नये वालो के आस-पास जमा हो बैठे। पूछने लगे कि कहाँ-कहाँ से आये हो? और कितनी-कितनी सजा लाये हो? और किस-किस जुर्म की सजाये है?...इत्यादि। इन्ही सबके बीच हरजीत भी था। वह नये आनेवालो के पास बैठा था और निगाह नीची डाले, जो कहा जाता, सुन रहा था।

नये कैदियो मे से एक आदमी अपना किस्सा बयान कर रहा था। वह लम्बा, तगडा कोई साठक बरस का आदमी था। दाढी उसकी बारीक छँटी थी। मजे मे आप-बीती कह रहा था —

"दोस्तो, मैं बताता हूँ। बात यह कि मैंने गाडी मे से खोलकर एक घोडा ले लिया। सो उसके लिए मै पकडा गया और चोरी का इल्जाम लगा। मैने कहा कि वाह, मैने घर आने के लिए घोडा खोला था ताकि जल्दी पहुँच जाऊँ। घर आकर मैने उसे पास भी नही रक्खा, खुला छोड दिया। तिस पर वह गाडीवाला आदमी मेरा दोस्त था। इसलिए मैने अदालत से कहा, 'इसमे कोई बुराई नही है।'

"उन्होने कहा, 'चुप रहो। तुमने चोरी की है।'

"लेकिन कहा और कैसे चोरी की है, यह वह साबित न कर सके। एक बार हाँ, मैने सचमुच जुर्म किया था और उसके लिए मुझे कालेपानी की सज़ा कभी की मिल जानी चाहिए थी। लेकिन उस मेरे जुर्म का किसीको पता ही न चला और मैं नही पकडा गया। और अब यहाँ

आया तो एक न-कुछ बात के लिए . लेकिन दोस्तो, मै झूठ बकता हूँ। मै यहाँ पहले भी आ चुका हूँ। लेकिन ज्यादा दिन नही ठहरा।"

एक ने पूछा—"हो कहांके ?"

"पाटनपुर मेरा गाँव है। वतन मेरा वही है। नाम बलवन्त। वैसे मुझे 'बल्ली-बल्ली' कहते है।"

हरजीत ने पाटनपुर का नाम सुनकर सिर उठाया। पूछा, "तुम पाटनपुर के राय घराने के लोगो को जानते हो ? उनका क्या हाल है ? क्या उनमे कोई अभी जीता है ?"

"क्या पूछा, जानता हूँ ? खूब, जानूँगा क्यो नही। वे मालदार लोग है। हाँ, उनका बाप यही-कही डामुल मे हम चोर-डाकुओ की तरह कैद है। लेकिन दादा, तुम यहा कैसे आए ?"

हरजीत को अपने दुर्भाग्य की कथा कहना नही रुचा। उसने लम्बी साँस ली। बोला, "छब्बीस साल से यही अपने पाप की सजा काट रहा हूँ।"

बलवन्त ने कहा, "पाप क्या ?"

हरजीतराय ने कहा, "अँह, छोडो भी। कुछ तो किया ही होगा।"

हरजीत और कुछ न कहता। लेकिन साथियो ने बल्ली को बताया कि हरजीतराय क्योकर यहाँ जेल मे पहुँचे। किसी हत्यारे ने एक सौदागर की हत्या की और चाकू इनके सामान मे छिपा दिया। इस तरह बेकसूर इन्हे सजा मिली।

यह सुनकर बलवन्त हरजीतराय की तरफ देख उठा। फिर घुटनो पर हाथ मारकर बोला कि यह खूब रही ! वाह, यह एक ही रही ! लेकिन दादा, तुम बुढा कितने गये हो ?

और लोग पूछने लगे कि तुमको इनके बारे मे इतना अचम्भा क्यो हो रहा है, जी ? क्या तुमने पहले इनको कही देखा था ? कहाँ देखा ?

लेकिन बल्ली ने जवाब नही दिया। उसने सिर्फ यही कहा कि दोस्तो, है सजोग की बात कि हम लोग यहाँ आकर मिले !

इन शब्दो से हरजीत को भी आश्चर्य हुआ। मन मे उसके गुमान

हुआ कि यह आदमी जानता है कि किसने उस व्यापारी को मारा था। पूछा, "बलवन्त, शायद तुमने उस मामले की बाबत सुना होगा। हाँ, हो सकता है कि तुमने मुझे पहले देखा भी हो।"

"सुनता कैसे नहीं? दुनिया बातों से भरी है। कान किसीके बन्द थोडे रह सकते हैं। लेकिन एक मुद्दत हुई। अब क्या याद कि मैंने क्या सुना था।"

हरजीत ने पूछा कि शायद तुमने सुना हो कि किसने व्यापारी का खून किया?

बलवन्त इस पर हँसने लगा। बोला, "क्यों, जिसके सामान में से छुरा निकला, वही तो हत्यारा। अगर किसी और ने वहाँ रख दिया—तो वह जब तक पकडा न जाय, मुजरिम कैसा? तिसपर दूसरा कोई तुम्हारे थैले मे चाकू रख कैसे सकता था, जब कि थैला तुम्हारे सिर के नीचे था! ऐसे तुम जग न जाते?"

हरजीत को यह सुनकर पक्का हो गया कि इसी आदमी ने वह हत्या की होगी। इस पर उसका जी खराब हो आया और उठकर वह वहाँसे चला गया।

सारी रात वह जागता रहा। उसको बहुत कष्ट था। कल पल को न थी। तरह-तरह की तस्वीरें उसके मन मे आती थीं। स्त्री का चेहरा आया, जब वह मेले मे जाने के लिए उससे विदा ले रहा था। उसे ऐसा मालूम हुआ जैसे वह सामने जीती-जागती मौजूद हो। ऐसी प्रत्यक्ष, कि उसे छू सकता हो। मानो उसकी हँसी की आवाज और बातचीत का एक-एक शब्द सुन पाता हो। फिर उसके मन मे बच्चो की तस्वीरें आईं। फूल से बच्चे! एक बडे से चोगे मे दुबका था, दूसरा माँ का दूध पी रहा था। अनन्तर वह खुद अपने को देखने लगा, जैसा कि वह हुआ करता था। जवान, खुश, और तन्दुरुस्त और खूबसूरत। उसे याद आता कि सराय मे कैसा मगन मैं बँसी बजा रहा था। चिन्ता की रेख छू नहीं गई थी। कि तभी पकड लिया गया! फिर वह जगह और दृश्य याद आया जहाँ कोडे लगे थे। अफसर-लोग और कुछ कैदी इर्द-गिर्द खडे थे। इसके बाद

इन जेल के छब्बीस बरसो का समूचा जीवन उसकी आँखो के आगे फिर गया। वहाँकी मुसीबते, कुसग, बेडियाँ और समय से पहले उसपर आ उतरा बुढापा। इस सबको यादकर उसका जी भारी हो आया। उसे बडी व्यथा हुई, ऐसी कि मौत माँगने की इच्छा हुई।

"और यह सब उस दुष्ट के कर्म है।"—हरजीत सोचने लगा। उस बलवन्त के खिलाफ उसे बडा गुस्सा आया। मन मे होने लगा कि चाहे मरना पडे, पर उस बदमाश को फल देना चाहिए। वह रात भर प्रार्थना करता रहा, पर उसे शान्ति नही हुई। दिन मे वह बलवन्त के पास से बचता रहा, न ऊपर नजर उठाई।

इस तरह दो हफ्ते निकल गए। रात को हरजीत सो न सकता था, उसे इतना त्रास था। समझ नही आता था कि क्या करूँ, क्या न करूँ?

एक रात जेल मे घूम रहा था कि उसे पास कहीसे मिट्टी गिरती हुई मालूम हुई। वह रुका कि क्या है। इतने मे देखता है कि एक तरफ दीवार के नीचे से बलवन्त का मुह उँझक आया ह। हरजीत को देखकर बलवन्त का चेहरा डर मे राख हो गया। हरजीत ने चाहा कि इस बात को दरगुज़र करदे। पर बलवन्त ने बाहर निकलकर उसको हाथ से पकड लिया। कहा कि मैंने कोठरी मे से रास्ता खोद डाला है। रोज मिट्टी को जूतो मे रखकर काम पर बाहर जाने के वक्त इधर-उधर फेक आया करता था। लेकिन अब तुम चुप रहो। हल्ला मत करना। चलो, तुम भी मेरे साथ निकल चलो। और अगर तुमने कुछ आवाज की तो मुझे पकडकर चाहे मार-मारकर, वे फिर मेरी जान ही निकाल डाले, लेकिन तुम्हे तो पहले ही खत्म कर दूँगा।"

हरजीत अपने शत्रु को देखकर गुस्से मे कापने लगा। उसने अपना हाथ झटककर अलग कर लिया। कहा—"मै भागना नही चाहता और तुम अब क्या और मुझे खत्म करोगे। पहले ही सब कर चुके हो। और तुम्हारी खबर देने की जो बात हो—तो मै नही जानता। जो परमात्मा करेगा होगा।"

अगले दिन जब कैदी बाहर काम पर गये तो वार्डरो ने देखा कि एक

जगह मिट्टी का ढेर-सा हो रहा है। किसी कैदी ने ही ला-लाकर यहा डाली होगी, और कौन डालता ? जेल तलाश किया गया तो उस चोर रास्ते का भी पता लग गया। जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट आये और सबसे पूछा कि किसकी यह करतूत है ? सबने इन्कार कर दिया कि हमें पता नही। जो जानते थे उन्होने भी भेद नही दिया। क्योकि बता देते तो बलवन्त की जान की खैर न थी। आखिर सुपरिन्टेन्डेन्ट ने हरजीत से पूछा। सुपरिन्टेन्डेन्ट भी उसका मान करते थे और मानते थे कि हरजीत सत्यवादी है।

"हरजीत, तुम सच्चे और नेक आदमी हो। ईश्वर से डरते हो। सच बताओ कि यह काम किसका है ?"

बलवत ऐसा बना रहा जैसे उसे मतलब न हो। सुपरिन्टेडेण्ट पर उसने आँख लगा रक्खी और भूले भी हरजीत की तरफ नही देखा। साहब के सवाल पर हरजीत के हाथ काँपने लगे और ओठ भी कापे। बहुत देर तक एक भी शब्द उसके मुँह से न निकला। एक बेर सोचा कि जिसने मेरी जिन्दगी बरबाद कर दी, उसे ही मैं किसलिए बचाऊँ ? मैने कितना दुःख उठाया है। अब मिलने दूँ उसे बदला। लेकिन फिर खयाल हुआ कि मैं कह दूँगा तो जेलवाले इसकी जान के गाहक हो जावेगे। तिसपर क्या पता कि मेरा शक ही हो और बात सच न हो। फिर जो हुआ सो हुआ, अब उसकी तकलीफ से क्या हाथ आनेवाला है ?

सुपरिन्टेडेण्ट ने दुहराकर पूछा, 'सुनते हो, न हरजीत ? तुम पाप से डरते हो। सच बताओ दीवार मे कूबल किसने किया है ?"

हरजीत ने बलवत की तरफ देखा। फिर कहा, "मै नही बता सकता हुजूर ! ईश्वर की आज्ञा नही है कि मैं बतलाऊँ। इसके लिए मेरा जो चाहे कीजिये, मैं आपके हाथ मे हूँ।"

साहब ने और जेल-दारोगा ने बहुतेरी कोशिश की। लेकिन हरजीत ने आगे कुछ नही कहा। अब क्या होता ? सो मामले को वही छोड देना पड़ा।

उस रात जब हरजीत अपने बिस्तर पर पडा था और आँखो मे नीद

उतर चली थी कि कोई दबे पाँव आया और चुपचाप पास बैठ गया। अँधेरे मे भेदकर हरजीत ने पहचाना तो वह था बलवन्त।

हरजीत बोला, "अरे, और तुम मेरा क्या चाहते हो ? तुम यहाँ क्यो आये हो ? क्या जी नही भरा ?"

बलवत चुप सुनता रहा। हरजीत उठकर बैठ गया और बोला, "क्या है तुम्हारी मशा ? बुलाऊँ पहरेदार ?"

बलवत हरजीत के चरणो मे झुका जाने लगा। धीमे-से बोला "हरजीत, भाई, मुझे माफ़ कर दो।"

"माफ किसलिए ?"

"मै गुनहगार हूँ। पापी हूँ। मैने ही उस व्यापारी को मारा था और छुरा तुम्हारे सामान मे रख दिया था। मै तुम्हे भी मारना चाहता था, लेकिन बाहर शोर सुन, छुरा तुम्हारे सामान मे दुबका, खिडकी की राह मे भाग गया था।"

हरजीत चुप था। उसे कुछ भी बोल न सूझा। बलवत धरती पर घुटनो के बल आ बैठा। बोला, "हरजीत, भाई, मुझे माफ कर दो। मै सब इकबाल कर लूँगा। कहूँगा, मै हत्यारा हूँ। तब तुम छूट जाओगे। और घर जा सकोगे। हरजीत, देखो मै तुम्हारे पैरो पडता हूँ।"

हरजीत ने कहा, "बलवन्त, अब मै क्या कहूँ। कहना तो आसान है। पर यह छब्बीस बरस जाने मै क्या-क्या नही उठाता रहा हूँ। क्यो ? सब तुम्हारी वजह से। लेकिन अब मै कहाँ जाऊँगा। मेरी स्त्री स्वर्ग गई, बच्चे मुझे भूल चुके। कौन मुझे पहचानेगा ? बलवत, अब मेरे पास जाने को कोई जगह नही है।"

बलवत धरती पर से उठा नही, वही फर्श पर अपना सिर पटककर पीटने लगा।

"हरजीत, मुझे माफ करो। मुझे बेत से पीटा तब इतनी तकलीफ नही हुई जितनी अब तुम्हे देखकर होती है। मुझसे सहा नही जाता मै तुम्हे सताता गया, तुम मुझे बचाते गए· हरजीत, हा-हा खाता हूँ, परमात्मा के लिए मुझे क्षमा करो। मै बडा अधम हूँ, पापी हूँ, दुराचारी हूँ।"

बलवत को सुबकी भर-भरकर रोते हुए सुना तो हरजीत भी रो आया। बोला—"ईश्वर तुम्हे क्षमा करेगा, बलवत। कौन जानता है कि मैं तुमसे सौ गुना अधम नही हूँ।"

यह कहते-कहते उसके अन्तर मे जैसे एक प्रकाश का उदय हो आया। सब चाह जैसे उसकी मिट गई। घर जाने की अभिलाषा और कलख भी उसे अब नही रह गई। जेल से रिहाई की जरूरत ही उसमे न रही। बस ईश्वर की आखिरी घडी अब आये, यही आस उसे शेष रह गई।

हरजीत ने कितना ही कहा, लेकिन बलवत अपने जुर्म का इकबाल करके ही माना। पर हरजीत के जेल से छुटकारे का हुक्म आया कि वह तो देह मे ही छुटकारा पा चुका था!

: ५ :

धर्मपुत्र

(१)

एक दीन किसान के घर एक बालक जनमा। उसने अपने भाग्य सराहे और बडा कृतार्थ हुआ। खुश-खुश एक पडोसी के घर गया कि आप इस बालक के धर्म-पिता बन जावे। पर गरीब के बेटे को कौन अपनावे। सो पडोसी ने इनकार कर दिया। तब दूसरे पडोसी से कहा, उसने भी इन्कार कर दिया। इसपर बेचारा किसान घर-घर घूमा, लेकिन कोई उसके बालक का धर्म-पिता बनने को राजी न हुआ। यह देख वह दूसरे गाँव चला। चलते-चलते राह मे एक आदमी मिला। पूछने लगा—"जयराम जी की, भाई चौधरी, कहाँ जा रहे हो ?"

किसान बोला—"भगवान् की दया हुई है कि जीवन को सारथ करने और बुढापे मे सहारा होने घर मे हमारे उजियाला जनमा है। मरने पर वही हमारी मिट्टी लगायगा, और हमारी आत्मा को दया-धर्म से सीचेगा। लेकिन मै गरीब हूँ और गाँव मे कोई उसका धर्म-पिता बनने को राजी नही है। सो मै उसके धर्म-पिता की खोज मे जा रहा हूँ।"

मुसाफिर ने कहा—"चाहो तो मै धर्म-पिता बन सकता हूँ।"

किसान सुनकर प्रसन्न हुआ और धन्यवाद देने लगा। फिर सोचकर बोला—"यह तो आपने मुझे धन्य किया, लेकिन अब सोचता हूँ कि धर्म-माता के लिए मै किसे कहूँ।"

मुसाफिर ने कहा—"धर्म-माँ के लिए सुनो, सीधे उस नगर मे जाओ। वहाँ चौक मे एक पत्थर की हवेली होगी। सामने नीली खिडकियाँ दीखेगी। वहाँ पहुँचोगे तो द्वार पर ही तुम्हे मकान को मालिक मिलेगे। उनसे कहना कि अपनी बेटी को बालक की धर्म-माता बन जाने दे।"

किसान सुनकर अचकचा आया । वोला—"एक धनी आदमी से मै ऐसी वात कैसे कहूँगा ? वह मुझे तिरस्कार से देखेगे और अपनी लडकी को पास न आने देगे ।"

"सो चिन्ता न करो । तुम जाओ, कहो तो । और कल सवेरे तैयारी रखना । मै ठीक सस्कार के वक्त पहुँच जाऊँगा ।"

किसान घर लौट आया । फिर उन धनी व्यापारी की तलाश मे शहर की तरफ गया । चौक मे पहुँचकर उसने वहली खोली, और मकान की ड्योढी पर पहुँचा था कि सेठ वही मिले । पूछने लगे—"कहो चौधरी, क्या चाहते हो ?"

किसान ने कहा कि भगवान ने दया की है और घर मे दीपक जनमा है । वही हमारी आँखो का तारा है, बुढापे का सहारा है और मौत के वाद हमारे प्रेत को पानी देगा । वडी मेहरवानी होगी जो आप अपनी वेटी को उसकी धर्म-माता वनने दे ।

व्यापारी ने पूछा—"सस्कार कव है ?"

"कल सवेरे ।"

"अच्छी वात है । तसल्ली रक्खो । कल सवेरे सस्कार के समय वह आजायेगी ।"

अगले दिन धर्म-माता आगई, धर्म-पिता भी आगये और शिशु का सस्कार होते ही धर्म-पिता चले गये । किसीको पता भी नही चला कि वह कौन है, कहाँ रहते है । न वह फिर दीखे ।

(२)

वालक चाँद की तरह बढने लगा । माँ-बाप के उछाह का पूछना क्या ! बढकर माता-पिता के लिए छोटी उमर से ही वह सहाई होने लगा । तन्दुरुस्त था और काम को उद्यत, चतुर और आज्ञाकारी । दस वरस का हुआ कि लिखना-पढना सीखने के लिए उसे मदरसे मे भेजा गया । जो और पाँच वरस मे सीखते, वह एक ही वरस मे सीख गया और कुछ ही अरसे मे वहाँकी सव विद्या उसने समाप्त कर दी ।

पूजा-दशहरे के दिन आये और छुट्टियो मे वह अपनी धर्म-माता

को प्रणाम करने गया। जाकर चरण हुए और सामने भेंट रक्खी।

फिर लौटकर घर आया तो माँ-बाप से उसने पूछा—"जी, धर्म-पिता कहाँ रहते हैं ? इस विजयादशमी के दिन मैं उनको भी प्रणाम करना चाहता हूँ और दक्षिणा भेंट दूँगा।"

पिता ने कहा—"बेटे, तुम्हारे धर्म-पिता का हमे कुछ पता नही है। हमे अक्सर उनका खयाल आता है। तुम्हारा नाम-सस्कार हुआ उसी रोज से उनकी कोई खबर नहीं मिली। यह तक मालूम नही कि कहाँ रहते है और अब हैं भी कि नहीं।"

पुत्र बोला कि माताजी और पिताजी, आप दोनो मुझे इजाजत दीजिए। मैं अपने धर्म-पिता की खोज मे जाऊँगा। उन्हे खोजकर रहूँगा और उनके चरणो की रज लूँगा।

माता-पिता ने बालक को अनुमति दे दी और वह अपने धर्म-पिता की खोज मे चल पडा।

(३)

घर से निकल वह सीधी सडक चल दिया। घटो चलता रहा। चलते-चलते एक मुसाफिर मिला। उसने पूछा कि लडके, तुम कहाँ जा रहे हो ?

लडके ने जवाब दिया—"मैं धर्म-माता के दर्शन करने और उन्हे प्रणाम करने गया था। फिर घर आकर मैंने धर्म-पिता के बारे मे पूछा, जिससे उनके भी दर्शन पाऊँ और चरण छू सकूँ। लेकिन मेरे माता-पिता भी उनका पता नही जानते हैं। कहने लगे कि मेरा सस्कार हुआ था उसके बाद से ही उनकी कोई खबर नही मिली, जाने जीते भी है कि नही। लेकिन मैं जरूर अपने धर्म-पिता के दर्शन चाहता हूँ। सो मैं उसी खोज में निकला हूँ।"

मुसाफिर ने कहा—"तुम्हारा धर्म-पिता तो मै ही हूँ।"

बालक सुनकर कृतार्थ हुआ। उसने उनके चरणो मे मस्तक नँवाया। फिर पूछने लगा कि धर्म-पिता, आप अब किधर जा रहे है ? हमारी तरफ जा रहे हो तो मैं भी आपके साथ चल रहा हूँ।

पथिक ने कहा कि अभी तो मेरे पास तुम्हारे घर चलने को समय नही है। जगह-जगह वहुत काम है। लेकिन कल सवेरे मै अपनी जगह पहुँच जाऊँगा। तव वहाँ आकर तुम मुझे मिलना।

"लेकिन धर्म-पिता, मुझे जगह का पता कैसे चलेगा?"

"सुनो, अपने घर से सवेरे सामने सूरज की सीध मे चलते चले जाना। चलते-चलते जगल आ जायगा। जगल को पार करना। फिर एक घाटी मे पहुँचोगे। घाटी मे पहुँचकर वहाँ बैठना और थोडा विश्राम करना। पर चौकस होकर देखते रहना कि आसपास क्या होता है। फिर घाटी के परले किनारे तुम्हे एक वगीचा दीखेगा। वहाँ मकान होगा, जिस की छत सुनहरी झलकती होगी। वही मेरा घर है। तुम सीधे दरवाजे पर आ जाना—वहाँ तुम्हे मै खुद खडा मिलूँगा।"

इतना कहकर धर्म-पिता धर्म-पुत्र के सामने से अन्तर्धान हो गये।

(४)

वालक ने धर्म-पिता के कहे अनुसार किया। वह उठकर सूर्य-भगवान् की तरफ चलता चला गया। चलते-चलते वन आया। उसे पार करने पर घाटी आई। घाटी मे क्या देखता है कि ऊँचा एक वरगद का पेड खडा है। उसकी एक शाख पर रस्सी वँधी है। रस्सी से एक भारी लकडी का लट्ठा लटका हुआ है। लट्ठे के नीचे लकडी की वडी-सी कठौती रक्खी है जो शहद से भरी हुई है। वालक यह देखकर अचरज मे हुआ कि क्यो इस तरह शहद वहाँ भरा हुआ रक्खा है और उसके ठीक ऊपर यह लकडी का लट्ठा क्यो लटक रहा है। लेकिन अचरज का समय भी नही मिला कि उसे किसीके उधर आने की आहट सुनाई दी। देखता क्या है कि कुछ रीछ चले आ रहे है। एक रीछनी है, पीछे-पीछे तीन वच्चे है। दो तो नन्हे-नन्हे है, एक तगडा है। रीछनी सूघती-सूघती शहद की कठौती तक सीधी पहुँच गई। वच्चे भी पीछे लगे रहे। वहाँ पहुँचकर उसने शहद मे मुँह डाल दिया और चाटने लगी और वच्चो को भी आसपास घेर लिया। वे भी नाँद पर चढकर लदर-पदर शहद चाटने लगे। चाटने पाए होगे कि ऊपर का लट्ठा आया और उन वच्चो के वदन मे आकर

लगा। रीछनी ने मुँह से उस लट्ठे को परे हटा दिया था। हटकर वह गया कि लौटकर अब फिर आ गया था। रीछनी ने यह देखकर दूसरी बार अपने पजो से उस लट्ठे को धकिया दिया। वह दूर चला गया। लेकिन फिर उतने ही जोर से लौटा। लौट आकर इस बार जोर से वह एक बच्चे की पीठ और दूसरे के सिर से टकराया। बच्चे दर्द के मारे चीखते चिल्लाते भागे। उनकी माँ ने यह देखकर गुस्से के साथ उस लट्ठे की लकडी को अपने अगले हाथो मे भीचकर पकडा और उठा-कर ज़ोर से फेक दिया। लट्ठा दूर चला गया और मौका देखकर वह रीछ का जवान पट्ठा आया और नाद मे मुँह डाल चटचट शहद खाने लगा। देखा-देखी छोटे बच्चे भी चले आये। लेकिन वे पास पहुँचे न होगे कि लट्ठा लौटकर आया और ऐसी जोर से उस जवान बेटे के सिर मे लगा कि वह वही ढेर हो गया। रीछनी को इस पर और भी गुस्सा चढा। झुझला-कर उसने लट्ठे को जोर से पकडा और पूरी शक्ति से उसे परे फेक दिया। जिस डाल से बँधा था उससे भी ऊँचा वह लट्ठा जा पहुँचा—इतना ऊँचा कि रस्सी ढिला गई। इस बीच रीछनी फिर नाद पर आ गई और बच्चे भी उसी किनारे आ लगे। लट्ठा ऊँचा चलता गया, ऊँचा चलता गया, आखिर वह रुका और फिर गिरना शुरू हुआ। जैसे-जैसे नीचे गिरता, जोर उसका बढता जाता था। आखिर पूरे बल से रीछनी के सिर मे आकर लगा। लगना था कि रीछनी लोट-पोट हो गई। उसके पाँव आसमान मे हिलते रहे और वही जान दे दी। बच्चे अपने बन मे भाग गये।

(५)

बालक अचरज मे भरा यह देखता रहा। फिर उसने आगे की राह पकडी। जगल पार कर घाटी के परले किनारे उसे एक आलीशान बगीचा मिला। वहाँ था एक महल-का-महल। छत उसकी सुनहरी झकझकाती थी। महल के दरवाजे पर बालक को धर्म-पिता मिले। मुस्कराकर उन्होने बालक का स्वागत किया और दरवाज़े मे से उसे अन्दर बगीचे मे लेगये। लडके ने जो सपने मे भी नही देखा वह सच-मुच मे यहा था। क्या बहार, क्या आनन्द! फिर धर्म-पिता उसे महल

के अन्दर ले गये। वहाँकी विभूति का तो कहना ही क्या ! वह अपूर्व थी। धर्म-पिता ने चलकर बालक को महल का एक-एक कमरा दिखाया। उसकी तो आखे न ठहरती थी। एक-से-एक बढ-चढ कर ऐसी शोभा और ज्योति और उल्लास था कि—

आखिर एक कमरे पर पहुँचे जहाँका दरवाजा मुहरबन्द था। धर्म-पिता ने कहा कि यह दरवाज़ा देखते हो न। इसमे ताला नहीं है, बस मुहरबन्द है। वह खुल सकता है, लेकिन खबरदार, उसे खोलना नहीं। तुम यहाँ रहो, जी चाहे जहाँ फिरो। यहाँका सब तुम्हारा है। सब भोग और सब आराम। लेकिन मेरी एक ताकीद है। यह दरवाजा मत खोलना। जो कही तुमने उसे खोला, तो याद करलो जगल मे तुमने क्या देखा था।

यह कहकर धर्म-पिता अन्तर्धान हो गये। लडका उस महल में रहता रहा। वहाँ वह सुख और वह आनन्द थे कि तीस साल ऐसे बीत गये जैसे तीन घटे। जब एक-एक कर तीस साल गुज़र गये तो एक दिन धर्म-पुत्र मुहर-बन्द दरवाजे के पास से गुज़र रहा था। वह ठिठका और अचरज मे आकर सोचने लगा कि धर्म-पिता ने इस कमरे मे जाने की मनाही क्यो की थी।

सोचने लगा कि जरा देखने मे क्या हर्ज है। यह सोचकर उसका तनिक दरवाजे को हाथ से धकियाना था कि मुहर गिर गई और दरवाज़ा खुल गया। अन्दर देखता क्या है कि और सभीसे बढकर और सबसे बडा यह हॉल है। बीच मे उसके सिहासन रक्खा है। कुछ देर वह उस ख़ाली हॉल के वैभव को देखता हुआ इधर-उधर घूमता रहा। अनतर सीढी चढ वह सिंहासन पर जा पहुँचा और वहाँ बैठ गया। बैठकर देखता है कि सिंहासन से टिककर शासन-दड रक्खा हुआ है। उसने उसे हाथ मे ले लिया। उसका हाथ मे लेना था कि हॉल की सब दीवारे हवा हो गई। धर्म-पुत्र ने देखा तो सारी दुनिया उसके सामने बिछी थी और लोग जो कुछ वहाँ कर-धर रहे थे, सब उसे दीखता था। वह सामने देखने लगा कि समदर फैला है और जहाज उस पर आ-जा रहे है। दाये हाथ अजब-अजब तरह की जगली जातिया बसी हुई है। बाये, हिन्दुस्तान के अलावा और लोग बसे दीखते है। चौथी तरफ मुह जो उसने मोडा तो देखा कि उसके आँख

आगे समूचा हिन्दुस्तान फैला है और उसीके जैसे लोग घूम-फिर रहे हैं।

उसने सोचा कि देखे हमारे घर क्या हो रहा है और खेती-झाडी का क्या हाल है। उसने अपने बाप के खेतो को देखा कि बाले खडी हैं और पकने के नज़दीक हैं। वह अन्दाज़ लगाने लगा कि फसल कितने की बैठेगी। इतने मे गाडी मे उसे आता कोई दिखाई दिया। रात का वक्त था। धर्म-पुत्र ने सोचा कि पिता ही होगे, रात को गल्ला ढोले जाना चाहते है। लेकिन देखता क्या है कि वह आदमी तो है नत्थूसिह जो कि एक-नबरी चोर है। रात को आया है कि चुराकर खेत का सारा नाज भर ले जाय। यह देख धर्म-पुत्र को गुस्सा आगया। उसने पुकार कर कहा—"बापा, ओ बापा, उठो हमारे खेत से नाज चुराया जा रहा है।"

बाप रात को अपनी मढैया मे चौकन्ना होकर सोया करता था। वह एकदम से जाग बैठा। सोचा कि मैने सपने मे सही, लेकिन अपने खेत का नाज चोरी होते देखा है। चलू, देखूँ क्या बात है। भागकर वह खेत मे आया तो वहाँ देखता है कि नत्थूसिह मौजूद है। हल्ला मचाकर पास-पडोस वालो को भी उसने इकट्ठा कर लिया और नत्थूसिह की खूब मरम्मत बनाई। उसे पीटा-कूटा और बाध कर थाने ले गये।

उसके बाद धर्म-पुत्र ने शहर की ओर निगाह उठाई जहा धर्म-माता रहती थी। अब उनका विवाह होगया था। इस घडी वह चैन की नीद सो रही थी। इतने मे उनका पति उठा और दबे पाव घर से निकल चला। धर्म-पुत्र ने वहीसे पुकार कर कहा—"मा, उठो, उठो, देखो तुम्हारा पति जाने किस कुकर्म के लिए घर से निकल चला है।"

इस पर धर्म-मा झट से उठी और कपड़े पहनकर उस कुलटा के पहुँची जहाँ पति गया था। जाकर उस नारी को खब बुरा-भला सुनाया, मारापीटा और बाहर खदेड दिया।

इसके बाद धर्म-पुत्र ने अपनी पेट की मा का ख़याल किया। वह अपने घर मे छप्पर के तले सो रही थी। देखता क्या है कि एक चोर घर मे घुस गया है और बक्स का ताला तोड रहा है जिसमे माँ की जमा-जोखो रक्खी है। इतने मे मा जग उठी।

यह देख डाकू ने गडासा ऊपर उठा मा पर वार करना चाहा।

यह देख धर्म-पुत्र से रहा न गया और उसने उस दुष्ट को हाथ का शासन-दड खीच कर मारा। वह जाकर कनपटी पर लगा और चोर वहीं का हो रहा।

(६)

धर्म-पुत्र का चोर को मारना था कि दीवारे फिर चारो ओर घिर आई और हॉल जैसे-का-तैसा होगया।

उसी समय दरवाजा खुला और धर्म-पिता अन्दर आते दिखाई दिये। वहाँ पहुँच, हाथ पकडकर उन्होंने धर्म-पुत्र को सिंहासन से नीचे उतारा और अपने साथ ले चले।

बोले—"तुमने मेरा कहना नही माना और मना करने पर दरवाजा खोला, यह पहली गलती। सिंहासन पर जा बैठे और शासन-दंड हाथ मे ले लिया, यह दूसरी गलती। उसके बाद यह तुमने तीसरी गलती की जिससे दुनिया मे अधेर फैला जा रहा है। ऐसे तो तुम घडी भर सिंहासन पर और रहते तो आधी दुनिया बरबाद हो चुकी थी।"

यह कहकर धर्म-पिता अपने साथ धर्म-पुत्र को फिर सिंहासन पर ले गये और शासन-दड अपने हाथ मे रक्खा। दीवारे फिर उसी तरह सामने से गायब होगई और दुनिया का सबकुछ दिखाई देने लगा।

धर्म-पिता ने कहा—"अब देखो। देखते हो न कि तुमने अपने पिता के हक मे क्या किया। नत्थूसिंह को एक साल की सजा हुई। अब जो वापिस आया है तो जेल से बची-खुची और बुराइयां सीख आया है। रहा-सहा भी अब वह पक्का हो गया है। देखते नही कि उसने अब तुम्हारे बाप के दो बैल चुरा लिये है और खलिहान मे आग लगाये दे रहा है। सो अपने बाप के लिए ये बीज तुमने बोये!"

और सचमुच धर्म पुत्र ने देखा कि आँख-आगे उसके बाप का खलिहान आग की लपटो मे धू-धू करके जल रहा है।

उसके बाद पिता ने वह दृश्य दूर कर दिया और दूसरी तरफ देखने को कहा—

"देखो, यह तुम्हारी धर्म-माता के पति है। एक साल हुआ कि उन्होने बीवी को छोड दिया है। अब औरो के पीछे लगे है। उनकी पहली प्रेयसी की हालत देखते हो ? वह कितनी पतित हो गई है। दुख से पत्नी का हाल भी बेहाल है। गम के मारे उन्हे दौरे पडने लगे है। सो यह सेवा तुमने अपनी धर्म-माता की की है!"

धर्म-पिता ने यह दृश्य भी फिर हटा दिया। अब उसके आगे अपने गाँव का मकान था। वहाँ देखता है कि उसकी माँ रो रही है और अपने अपराधो की क्षमा माँग रही है। पछतावा करती सिर धुनती कह रही है—"हाय, भला होता मुझे चोर उसी रात मार डालता। फिर मुझे ऐसे भोग तो न भुगतने होते!"

धर्म-पिता ने कहा—"देखते हो ? यह कुछ है जो तुमने अपनी माँ के लिए करके रक्खा है!"

वह पर्दा भी दूर हुआ। फिर धर्म-पिता ने सामने देखने को कहा। अब जो उसने सामने देखा तो दो वार्डर जेलखाने के आगे एक डाकू को पकडे खडे है।

धर्म-पिता ने कहा—"पहचानते हो ? इस आदमी के सिर पर दस खून है। वह खुद कर्म-फल का भोग लेकर अपने आप उतारता। लेकिन उसको मारकर उसके पाप तुमने बढाकर अब अपने सिर ले लिये है। अब उन सब पापो के लिए तुम्हे जवाब देना होगा। यह है जो तुमने अपने हक मे किया है! याद करो, रीछनी ने लट्ठे को एक बार हटा कर अपने बच्चो को चोट पहुँचाई। फिर हटाया तो अपने जवान बेटे को खोया। तीसरी बार जोर से हटाया तो अपनी जान से हाथ धो बैठी। वही तुमने किया है। अब मै तुमको तीस साल और देता हूँ कि दुनिया मे जाओ और डाकू के और अपने पापो के लिए प्रायश्चित्त करो। प्रायश्चित्त पूरा नही करोगे तो तुमको उसकी जगह लेनी होगी।"

धर्म-पुत्र ने पूछा—"उसके पाप का उतारा मुझे कैसे करना होगा, पिता ?"

"दुनिया मे जो बदी लाने के तुम भागी हो उसे मिटाना तुम्हारा

काम है । उतना कर लोगे, तो उस डाकू के और तुम्हारे दोनो के पापो का उतारा हो जायगा।"

धर्म-पुत्र ने पूछा—"मै दुनिया की वदी को कैसे मिटाऊँगा, पिता?"

धर्म-पिता ने कहा—"जाओ, सूरज की दिशा मे सीधे चलते चले जाना । चलते-चलते एक खेत मिलेगा, जहाँ कुछ आदमी होगे । देखना कि आदमी क्या कर रहे है और जो तुम जानते हो उन्हे वतलाना । फिर आगे वढना । ऐसे ही वढते जाना । राह में जो देखो याद रखना । चौथे दिन तुम एक वन मे पहुँचोगे । उस वन के वीचो-वीच एक कुटी मिलेगी। वहाँ एक साधु रहता है । उसे जाकर जो हुआ हो सव सुनाना । वह वतायगा कि तुम्हे क्या करना होगा । उसका कहा कर चुकोगे तव डाकू के और तुम्हारे अपने पा ो का उतारा पूरा हो जायगा ।"

यह कहकर धर्म-पिता ने उसको महल के दरवाजे से वाहर कर दिया।

(७)

धर्म-पुत्र अपनी राह वढ चला । सोचता जाता था कि मै जगत् मे से वदी का नाश कैसे करूँगा । वदकारो का नाश हो, ऐसे ही तो वदी का नाश होता है । उन्हे जेल मे डाल दिया जाय या उनका अन्त कर दिया जाय । तव फिर बिना औरो का पाप अपने ऊपर लिये वदी से लड़ना कैसे होगा ।

धर्म-पुत्र ने वहुतेरा विचारा, पर निश्चय पर नही आ सका । वह चला-चलता गया । चलते-चलते एक खेत आया। वहाँ खूव घनी और ऊँची गेहूँ की वाले खडी थी । वस वाले पक ही गई थी और कटने को तैयार थीं । इतने मे क्या देखता है कि एक वछडा खेत मे घुस गया है । उसे खेत मे मुँह मारते देख कुछ लोग लाठी ले उसके पीछे पड गये है । खेत मे से कभी वे उसे उधर खदेडते है, कभी इधर । वछडा वाहर भागने के लिए खेत के जिस किनारे आकर लगता कि उधर ही कुछ लोग सामने मिलते है । डर के मारे वह फिर भीतर लौट जाता है । सव जने खेत मे से होकर इधर-उधर उसका पीछा कर रहे है और खेत खूव रौंदा जा रहा है । इधर यह है, उधर वाहर सडक पर खडी एक औरत रो

रही है कि हायरे, मेरे बछडे को ये लोग भगा-भगाकर मारे डाल रहे है!

धर्मपुत्र ने उन किसानो को कहा—"तुम लोग यह क्या कर रहे हो ? सब जने खेत से बाहर आ जाओ। यह औरत अपने बछडे को आप बुलाये लेती है।"

आदमियो ने ऐसा ही किया। वह स्त्री भी खेत के किनारे आकर पुकारने लगी, "आओ भैया, आओ मुनवा, यहाँ आओ।" बछडे ने कान खडे किये। पल एक सुनता रहा। फिर अपने आप भागा आया और मचलकर अपना मुह स्त्री की गोद मे ऐसे मारने लगा और ऐसी किलोल भरने लगा कि वह बेचारी गिरते-गिरते बची। सब आदमी इससे खुश हुए, स्त्री भी खुश थी, और बछडा भी मगन दिखाई देता था।

धर्म-पुत्र फिर वहाँ से आगे बढा। सोचने लगा कि ऐसे ही बदी-से-बदी फैलती है। जितना आदमी बुराई के पीछे पडते है, वह उतनी ही बढती है। मालूम होता है बुराई बुराई से दूर नही होगी। फिर कैसे दूर होगी, यह भी ठीक पता नही चलता था। बछडे ने तो अपनी मालकिन का कहना मान लिया और चलो सब ठीक हुआ। पर कहना न मानता तो उसे खेत से बाहर करने का क्या उपाय था ?

धर्म-पुत्र फिर सोच मे पड गया और किसी नतीजे पर नही पहुँच सका। खैर, वह बढता ही गया।

(८)

चलते-चलते एक गाँव मिला। गाँव के पार परले किनारे उसने रात-भर टिकने को जगह माँगी। घर की मालकिन अकेली थी और घर की सफाई कर रही थी। उसने उसे ठहरा लिया। घर के अन्दर धर्म-पुत्र पीढे पर बैठा स्त्री को काम करते देखने लगा। फर्श वह बुहारी से झाड चुकी थी, अब चीज-वस्त झाडन से झाडने लगी। सबके बाद उस धूल-भरे मैले झाडन से उसने जोर-जोर से मेज पोछना शुरू की। कई बार पोछी, पर मेज साफ नही होती थी। कपडे के मैल की लकीरे रह ही जाती थी। यह देख वह दूसरे सिरे से हाथ फेरकर पोछना शुरू करती। पर पहली लकीरे मिटती तो उनकी जगह दूसरी बन जाती।

फिर उसने सब-की-सब मेज फिर दुबारा साफ की। लेकिन फिर वही बात। मैल की लकीरें अब भी मौजूद। धर्म-पुत्र कुछ देर चुप-चाप देखता रहा। फिर बोला—"माई, तुम यह क्या कर रही हो ?"

"भैया, देखते हो कि मैं सफाई कर रही हूँ। त्योहार सिर पर है। पर यह मेज़ साफ ही नही होती। मैं तो थक आई।"

धर्म-पुत्र बोला—"मेज झाडने से पहले झाडन को तो साफ कर लो, माई।"

स्त्री ने वैसा ही किया। तब मेज भी साफ चमक आई।

स्त्री ने कहा—"तुमने भली बात बतलाई, भैया। तुम्हारा अहसान मानती हूँ।"

अगले सवेरे वहाँसे विदा ले धर्म-पुत्र अपनी राह आगे बढ लिया। काफी दूर चलने पर एक वन का किनारा आया। वहाँ देखा कि देहात के कुछ लोग लोहे की मोटी हाल लेकर उसे मोडना चाह रहे हैं। और पास आया तो देखता है—कई लोग मिलकर लोहे का सिरा पकडकर ज़ोर लगा रहे हैं। वे घूम पर घूम रहे हैं, पर हाल मुडती नहीं है।

खडा होकर वह उन्हे देखने लगा। लोग चक्कर लगाते है, पर लोहा नही मुडता। बात यह थी कि जिस चीज़ मे लोहा अटका रक्खा था, वह चीज़ खुद लोगो के घूमने के साथ घूम जाती थी। यह देख धर्म-पुत्र ने कहा—"भाइयो, यह आप क्या कर रहे है ?"

"देखते तो हो कि हम पहिए की हाल मोड़ रहे है। सब कर लिया, थक कर चूर हुए जा रहे है। पर यह हाल मुडकर नही देती।"

धर्म-पुत्र ने कहा—"पहले उसे तो थिर करलो जहाँ हाल अटका रक्खी है। नही तो आपके घूमने के साथ वह भी घूम जायगी। यो हाल कैसे मुडेगी ?"

किसानो ने बात मान ली। वैसा किया तो काम ठीक चलने लगा।

वह रात उन लोगो के साथ बिता अगले दिन धर्म-पुत्र आगे बढा। सारा दिन और सारी रात वह चलता रहा। आखिर तडका होते उसे कुछ बनजारे मिले। वह भी फिर वही रह गया। बनजारे बैलो का सौदा-

चौदा कर चुके थे । अब आगे की तैयारी मे वे आग जलाना चाह रहे थे । सूखी छीपटी और पात-फूस वगैरह इकट्ठा करके उन्होने दियासलाई दिखाई । वह जल नही पाई कि ऊपर से हरी घास का ढेर रख दिया । कुछ धुआँ उठा, घास मे सिसकारी-सी हुई और आग बुझ गई । वनजारे फिर सूखी छिपटियाँ बीन कर लाये, फिर जलाया, और फिर वैसी ही गीली घास ऊपर ला रक्खी । आग फिर नही जली और बुझ गई । इस तरह वहुत देर तक वार-बार चेष्टा करते रहे । पर आग जलती ही न थी ।

उस समय धर्म-पुत्र ने कहा—"दोस्तो, घास ऊपर रखने मे जल्दी न करो । पहले सूखी लकडी ठीक तरह बल चले, तब ऊपर कुछ रखना । आग एक बार लहक आने दो, फिर चाहे जितनी घास ऊपर रख देना ।"

बनजारो ने वात मान ली । पहले आग खूब बल जाने दी । इस तरह जरा देर मे आग लपटे दे उठी ।

धर्म-पुत्र कुछ देर उनके साथ रहा, फिर अपनी राह आगे हो लिया । चलता रहा, चलता रहा । सोचता जाता था कि ये तीन बाते जो उसने देखी है, उनका क्या मतलव हो सकता है । लेकिन उसे थाह छू नही मिलती थी ।

(६)

धर्म-पुत्र दिन भर चलता रहा । सध्या समय दूसरे बडे जगल का किनारा आया । वहाँ साधू की कुटिया मिली । उसपर जाकर धर्म-पुत्र ने खटखटाया । अन्दर से आवाज ने कहा—"कौन है ?"

धर्म-पुत्र—"मै एक बडा पापी हूँ जिसे अपने और एक दूसरे के भी पापो का प्रायश्चित करना है ।"

यह सुनकर साधू वाहर आये ।

"वह पाप कौन है जिन्हे दूसरे के लिए तुम्हे उठाना पड रहा है ?"

धर्म-पुत्र ने साधू को सब वात सुना दी । धर्म-पिता की वात कही, रीछनी और उसके बच्चो की घटना सुनाई, मुहरबन्द कमरे और सिहासन का हाल बताया । फिर धर्म-पुत्र ने जो आदेश देकर उसे भेजा था, वह कह सुनाया । रास्ते मे जो किसान बछडे का पीछे करने मे खूब खेत

रौंद रहे थे और कैसे फिर वछडा मालिक की पुकार पर अपने आप खेत से वाहर आ गया, यह सुनाया। अन्त मे वोला कि यह तो मै देख चुका हूँ कि वुराई का मेट वुराई से नही किया जा सकता। पर यह समझ मे नही आता कि उसे फिर मिटाया कैसे जा सकता है। मुझे वताइए कि यह कैसे किया जाय।

साधू ने कहा—"और कुछ तुमने रास्ते मे देखा हो तो वताओ।"

धर्म-पुत्र ने वतला दिया कि कैसे मेज साफ करती औरत देखी थी और कुछ देहाती हाल मोडते हुए मिले थे और वनजारे आग जलाना चाह रहे थे।

साधू सव सुनते रहे। फिर कुटिया मे चले गये और अन्दर से एक पुराना कुल्हाडा लेकर आये। कहा—"मेरे साथ आओ।"

कुछ दूर जाने पर साधू ने एक पेड वताया। कहा—"इसे काट डालो।"

धर्म-पुत्र ने वह पेड काट गिराया।

साधू ने कहा—"अव इसके तीन टुकडे करो।"

धर्म-पुत्र ने पेड के तीन टुकडे कर दिये।

इस पर साधू फिर कुटिया मे गये और वहाँसे कुछ जलती लकडियाँ लाये। वोले—"इनसे उन तीनो टुकडो को आग दे दो।"

धर्मपुत्र ने आग जलाई और पेड के उन वडे-वड़े तीनो टुकडो को उसमे डाल दिया। जलते-जलते उनकी जगह तीन काले कुन्दे ठूँठ रह गये।

साधू ने कहा—"अव इनको धरती मे गाड दो, ऐसे कि आधे धरती मे रहे, आधे ऊपर।"

धर्मपुत्र ने वैसा ही किया।

"अव देखो, वहाँ सामने पहाडी की तलहटी मे एक नदी है। वहाँ से मुँह मे पानी भर कर लाओ। लाकर इन ठूठो की जड मे सीच दो। पहले ठूठ को सीचो, जैसे कि तुमने पहले स्त्री को सीख दी थी। दूसरे को सीचो, क्योकि हाल मोडनेवाले किसानो को उपदेश दिया था। और

इस तीसरे को बनजारो के नाम पर सीचे जाओ। जब इनमे जडे जम आयेगी और किल्ले फूटने लगेगे और उन काले ठूठो की जगह सेव के दरख्त हो आयेगे तब तुम भी समझ जाओगे कि आदमी से बुराई को कैसे मेटा जाना चाहिए। तब तुम्हारे सब पाप धुल जायगे।"

इतना कहकर साधू अपनी कुटिया मे चले गये। धर्मपुत्र बहुत देर तक सोचता-विचारता रहा। लेकिन साधू की बात का भेद न पा सका। तो भी साधू ने जैसा बताया था वैसा ही करना उसने शुरू कर दिया।

(१०)

धर्मपुत्र नदी पर गया, मुह मे पानी लिया और लौटकर पहले ठूठ मे सीच दिया। बार-बार इसी तरह मुह मे पानी ला-लाकर वह तीनो ठूँठो को सीचता रहा। जब उसे बहुत भूख लगी और थकान से चूर हो आया, तो कुटिया की तरफ चला कि साधू से कुछ खाने को मागले। इधर-उधर देखने पर उसे कुटिया मे कुछ सूखी हुई रोटी मिल गई। थोडा खाकर उसने भूख शात की और भीतर कुटी का दरवाज़ा खोला तो देखता है कि साधू की देह वहाँ मृतक पडी हुई है। तब वह मृतक देह के कर्म के लिए लकडी जमा करने मे लगा। दिन मे यह किया, रात को मुह मे पानी ला-लाकर ठूठ सीचने मे लगा रहा। रात भर, जबतक बना, वह ऐसा ही करता रहा।

अगले दिन पास के गाव के कुछ लोग साधू के लिए खाना लेकर वहा पहुँचे। आकर देखते है कि साधू का तो शरीरान्त हो गया है। अपनी जगह वह धर्मपुत्र को छोड गये है और उसको आशीर्वाद भी दिया है। सो उन्होने साधू की देह का क्रिया-कर्म किया और जो खाना लाये थे धर्मपुत्र की भेट कर दिया।

धर्मपुत्र साधू की जगह रहता रहा। लोग जो खाने को दे जाते थे उससे गुज़र करता और साधू के आदेशानुसार वही नदी से मुह में भर कर पानी लाता और उन जले ठूठो पर सींच देता।

इस तरह एक साल बीत गया। इस बीच बहुत लोग उसके दर्शन को आये। उसकी ख्याति दूर-दूर फैल गई। लोगो मे शोहरत होगई कि

एक पहुँचा हुआ सत है जो आत्मा के उद्धार के लिए पहाडी की तलहटी की नदी से मुह मे पानी लेकर आता है और जले ठूठ सीचता है। सो ठठ-के-ठठ लोग दर्शन करने वहा पहुचने लगे। मालदार, धनी, व्या ।री लोग वहा आते और बहुत भेट-उपहार लाते। पर वह उसमे अपने तन जितनी चीज रखता। बाकी सब गरीबो को बाट देता।

इस तरह धर्मपुत्र रहने लगा। आधे दिन ठूठ मे पानी सीचता, बाकी आधा दिन आने-जाने वालो से मिलने-बताने मे जाता। वह सोचने लगा कि बुराई को मिटाने और पाप धोने के लिए यही तरीका शायद होगा।

एक दिन वह कुटिया मे बैठा था कि कोई आदमी घोडे पर सवार उधर से निकला। अपनी मौज मे वह तराने गाता हुआ चला जा रहा था। धर्मपुत्र कुटी से बाहर आया कि कौन आदमी है। देखा कि एक अच्छा मजबूत जवान है, चुस्त कपडे हैं और खूब जीन-बीन से लैस एक बढिया घोडे पर सवार है।

धर्मपुत्र ने रोक कर पूछा—"तुम कौन हो जी, और कहा जा रहे हो ?"

लगाम खीचकर उस आदमी ने कहा—"मै डाकू हूँ। ऐसे ही घूमा करता हूँ और जो हाथ लगता है उसे पार करता हूँ। शिकार जितने ज्यादह मिलते है उतनी ही खुशी के मै गीत गाता हूँ।"

धर्मपुत्र के जी मे दहल समा गई। सोचने लगा कि ऐसे आदमी मे से बदी को कैसे मिटाया जा सकता है। जो अपनेआप भक्ति-श्रद्धा मे मेरे पास आते है उनको कहना तो आसान है और वे अपने गुनाह सहज मान लेते है। लेकिन यह तो अपने पाप ही की डीग मारता है।

मन मे यह सोच उसने उधर से मुह मोड लिया। ख़याल आया कि अब मै कैसे करूँगा। यह डाकू यही आस-पास घूमता रहेगा और मेरे दर्शन को आने वाले लोग डर के मारे रुक जायँगे, वे आना छोड देगे। इससे उनकी भलाई भी रुक जायगी। और मै भी भला फिर कैसे रहूँगा ?

इसलिए फिर लौटाकर उसने डाकू को पुकार कर कहा—"यहा बहुत लोग मेरे पास आया करते है। वे पाप की डीग भरते नही आते, बल्कि

पछतावे से भरे हुए आते है। वे भगवान् से क्षमा की प्रार्थना करते है। ईश्वर का डर हो तो तुम भी अपने पापो की क्षमा मागो। और जो तुम्हारे दिल मे पछतावे की कनी न हो तो यहाँ से चले जाओ और फिर कभी इधर न आना। मुझे मत सताना और मेरे पास आने वाले आदमियो को भी मत सताना। अगर नही मानोगे तो ईश्वर की सजा पाओगे।

डाकू ठठ मार कर हँसने लगा। बोला—"मुझे ईश्वर का डर नही है और तुम्हारी बात की परवा नही है। तुम कोई मेरे मालिक नही हो। तुम अपनी धर्माई पर रहते हो, तो मै अपनी डकैती पर रहता हूँ। रहना सभी को है। बुढिया औरते जो पास आये उन्हीको पट्टी पढाया करो। मुझे तुमसे सीखने को कुछ नही है। और जो ईश्वर की बात तुमने कही, सो इसी नाम पर कल मै रोज से दो ज्यादा आदमियो को जमघाट लगाऊँगा। तुम्हे भी मै मार सकता हूँ, लेकिन अभी मै अपने हाथ खराब करना नही चाहता। पर देखना, आयदा मेरी राह न काटना।"

इस तरह धमकी देकर डाकू एड लगा अपना घोडा दौडा ले गया। वह फिर लौटकर नही आया और धर्मपुत्र पहले की तरह पूरे आठ साल वहा शान्ति से रहता रहा।

(११)

एक रात धर्मपुत्र अपनी कुटी मे बैठा था। ठूँठो मे पानी दे चुका था। अब जरा विश्राम का समय था। उसकी निगाह रास्ते पर लगी थी कि कोई आयेगा। वह जैसे प्रतीक्षा मे था। लेकिन उस दिन भर कोई नही आया। वह शाम तक अकेला बैठा रहा। उसका जी इकलेपन से ऊब आया। उसे सूना-सूना लगने लगा। उसे पिछली बाते याद आने लगी। याद आया कि डाकू ने ताने से कहा था कि तुम अपनी धर्माई पर जीते हो, मै अपनी डकैती पर रहता हूँ। इस पर उसे विचार हुआ कि साधू ने बताया था वैसे मै नही रह रहा हूँ। उन्होने मुझ पर एक प्रायश्चित्त डाला था। लेकिन उसमे से मै तो खाने-कमाने लगा हूँ। और गुजर भी पाने लगा हूँ। होते-होते भक्तो का और चढावे का ऐसा आदी हो गया हूँ कि अब वे नही आते तो जी ऊबता है और सूना लगता है।

जव लोग आते है तो मुझे इसीलिए खुशी होती है न कि वह मेरी धर्माई की तारीफ करते है । यह तो रहने की ठीक विधि नही है । मै प्रशसा के मोह मे वहक रहा हूँ । अपने पुराने पाप तो क्या उतारता और नये जोडे जा रहा हूँ । यहाँसे कही दूर दूसरी तरफ जगल मे मुझे चले जाना चाहिए, जहा लोग मुझे पा न सके । वहा फिर मै ऐसे रहूँगा कि पुराने पाप धुलते जायँ और नया कोई जमा न हो ।

यह मन मे धारकर थैली मे कुछ रूखी रोटी वटोर, एक फावडा ले, धर्मपुत्र कुटी छोड चल दिया । वरावर घाटी मे उसे एक एकात जगह की याद थी । सोचा कि वस वहा पहुँचकर एक गुफा-सी अपने लिए खोदकर तैयार कर लूगा और लोगो से छुटकारा पाऊँगा ।

अपना थैला लटकाए और फावडा लिये वह जारहा था कि उसी की तरफ आते हुए डाकू के कदम उसे सुनाई दिये । धर्मपुत्र को डर लग आया और वह तेज़ कदम वढ चला । लेकिन डाकू ने उसे पकड लिया । पूछा, "कहाँ जा रहे हो ?"

धर्मपुत्र ने कहा—"मै लोगो से दूर चला जाना चाहता हूँ । कही ऐसी जगह रहना चाहता हूँ जहा कोई पास न आये ।"

यह सुनकर डाकू को अचरज हुआ । वोला—"लोग पास नही आयेगे तो तुम्हारा गुजारा कैसे होगा ?"

धर्मपुत्र को यह सूझा भी नही था । डाकू की वात से याद आया कि हाँ, आहार तो आदमी के लिए जरूरी है । वोला—"जो परमात्मा की दया हो जायगी उसी पर वसर कर लूगा ।"

डाकू ने कुछ नही कहा और आगे वढ लिया ।

धर्मपुत्र सोचने लगा कि मैने डाकू से अपने रग-ढग वदलने के वारे मे इस वार क्यो नही कहा । शायद अब उसे पछतावा हो । आज तो उसका रुख कुछ मुलायम मालूम होता था । अवकी उसने मुझे मारने की भी धमकी नही दी ।

यह सोचकर उसने डाकू को पुकारकर कहा कि सुनते हो, अभी तुम्हे अपने गुनाहो की माफी मागनी चाहिए । ईश्वर से तो सदा वच नही सकते ।

यह सुनकर डाकू ने घोडा मोड पेटी मे से खजर निकाला और धर्म-पुत्र को मारने को हुआ। धर्मपुत्र यह देखकर चौका और सहमा हुआ सीधा अदर जगल मे वढ गया।

डाकू ने उसका पीछा नही किया। बस जोर से सुनाकर कहा—' दो-वार मैं तुम्हे छोड चुका हूँ। अगली बार जो कही तुमने मुझे टोका, तो तुम्हारी खैर नही है, यह समझ लेना।"

यह कहकर वह डाकू अपने रास्ते हो लिया।

उस शाम धर्मपुत्र ठूँठ मे पानी देने जो पहुँचता है कि क्या देखता है कि उनमे से एक ठूँठ किल्ले दे रहा है और उसमे से नन्हे सेव की कोपल उग चली है!

(१२)

सवसे अपनेको छिपाकर धर्मपुत्र बिल्कुल अकेला रहने लगा। रोटी खत्म हो गई तो उसने सोचा कि चलूँ, खाने के लिए कही कुछ कन्द-मूल देखूँ। यह सोचकर वह कुछ दूर चला था कि देखता क्या है कि एक पेड की टहनी पर अगोछे मे बँधी रोटी लटकी हुई है। उसने वह रोटी ले ली और जवतक बना, उन पर गुजारा करता रहा।

वह खत्म हो गई तो उसी पेड पर दुबारा वैसे ही अगोछा लटका मिला। इस तरह उसका गुज़ारा होता रहा। बस अब कुछ वात थी तो डाकू का डर वाकी था। आस-पास कही जाते-आते उसकी आहट सुनता-तो सहम कर दुबक रहता था। सोचता कि कही ऐसा न हो कि मै अपने पाप धोने न पाऊँ, उससे पहले ही डाकू मुझे मार दे।

इस तरह दस साल और हो गये। एक तो उनमे सेव का पेड होकर हरिया आया था, लेकिन और दो ठूँठ के ठूँठ रहे। एक सवेरे धर्मपुत्र जल्दी उठा और काम पर पहुँचा। ठूँठो की ज़मीन को मुह के पानी से काफी गीली करते उसे खूब मेहनत पडी। आखिर थककर वह आराम करने लगा। बैठे-बैठे सोचने लगा। सोचा कि मैने पाप किया है, इसीसे मै मौत से डरता हूँ। ईश्वर की मरजी कौन जानता है। हो सकता है कि मौत से ही मेरे पाप धुलने वाले हो। तव उसका भी स्वागत किये विना मै कैसे रह सकता हूँ।

यह खयाल उसके मन मे आया ही था कि उधर से घोडे पर सवार जाने किसे गाली देता हुआ डाकू उस तरफ ही आता मालूम हुआ। धर्मपुत्र ने सोचा कि सिवा ईश्वर के किसी और से मेरा कुछ बन-बिगड क्या सकता है। यह सोचकर वह आगे बढकर डाकू को मिला। देखता क्या है कि डाकू अकेला नही है। पीछे घोडे से एक और आदमी बधा है। मुंह उसका बन्द है और हाथ-पैर कसे हुए हैं। आदमी वह कुछ नही कर रहा है, पर डाकू उसे मन-आई गाली दिये जा रहा है।

धर्मपुत्र बढता हुआ जाकर घोडे के सामने खडा हो गया। पूछा—"इस आदमी को कहाँ लेजा रहे हो ?"

डाकू ने जवाब दिया—"जगल के अन्दर लिये जा रहा हूँ। यह एक मालदार बनिये का बेटा है, पर बताता नही है कि बाप का माल कहाँ छिपा है। सो कोडो से इसकी खबर लूँगा तब बतायेगा।"

यह कहकर वह घोडे को एड लगाने को हुआ कि धर्मपुत्र ने घोडे की रास पकड ली और जाने नही दिया। कहा—"इस आदमी को छोड दो।"

डाकू को गुस्सा चढ आया और उसने मारने को हाथ उठाया—

"क्या, तुम भी कुछ मजा चखना चाहते हो ? जो इस आदमी को मार मिलेगी वह तुम भी चाहो तो वैसी कहो। मै कह चुका हूँ कि ज्यादा करोगे तो मेरे हाथ से जान खोओगे। सुना ? अब रास छोडो।"

लेकिन धर्मपुत्र डरा नही। बोला—"तुम जा नही पाओगे। मुझे तुम्हारा डर नही है। बस एक ईश्वर का मुझे डर है। उसका हुक्म है मै तुम्हे न जाने दूँ। इस आदमी को तुम छोड दो।"

डाकू को गुस्सा तो आया, लेकिन उसने चाकू निकालकर उस आदमी के बन्ध काट दिये और उसे आजाद कर दिया। फिर बोला—"अब जाओ, तुम दोनो चले जाओ। और खबरदार, जो फिर मेरी राह आडे आये।"

वह वैश्यपुत्र तो घोडे की पीठ से खिसक चट भाग गया। डाकू भी घोडे पर सवार हो चलने को था कि धर्मपुत्र ने फिर उसे

रोका और कहा कि देखो, अपनी इस वदी से बाज़ आओ। लेकिन डाकू सब चुपचाप सुनता रहा। आखिर बिना कुछ बोले वह चला गया।

अगले दिन धर्मपुत्र फिर ठूठ में पानी देने गया। और अचरज की बात देखो कि दूसरा ठूठ भी हरा हो रहा था। वहासे भी सेव के पेड की कोपल फूटने लगी थी।

(१३)

दस साल और बीते। धर्मपुत्र एक दिन शान्ति से बैठा था। न कोई कामना थी,-न आशका। प्रसन्नता से मन भरा आता था।

सोचा—"ईश्वर ने आदमी को कैसी-कैसी न्यामते वखशी है। फिर भी नाहक वह कैसा हैरान और परेशान रहता है। क्यो वह खुश नही रहता। क्या उसे अडचन है ?".

फिर आदमी खुद जो अपने लिए मुसीवत पैदा करता है और बुराई के वीज बोता है, उसके फल यादकर धर्मपुत्र का जी भर आया। उसने सोचा कि जैसे मै रह रहा हूँ, वैसे ही रहते जाना गलत है। मुझे चाहिए कि जो सीखा है, चलू और वह औरो को भी सिखाऊँ। जो पाता हूँ, सबको दूँ।

यह विचार मन मे आना था कि डाकू के घोडे की टाप उसे सुन पडी। लेकिन वह उसे रोकने नही वढा। सोचा कि उसे कहने-सुनने से क्या फायदा है। वह कुछ समझ नही सकता।

पहले तो यह विचार आया, फिर मन बदल गया और धर्मपुत्र वढ-कर सडक पर आ पहुचा। आते हुए डाकू को देखा कि वह उदास है और आँखे उसकी झुकी हुई है। धर्मपुत्र को यह देखकर दया आई और पास पहुँचकर उसकी रानो पर हाथ रखकर उसने कहा—"भाई, अपनेआप पर अव रहम करो। तुम्हारे अन्दर ईश्वर का बास है। तुम तकलीफ पाते हो इसीसे औरो को सताते हो। नतीजा यह कि आगे के लिए और तकलीफ जमा करते जा रहे हो। लेकिन ईश्वर तुम्हे प्यार करता है और तुम्हे अपनाने को सदा तैयार है। देखो, अपनेको विल्कुल वरवाद न करो। अभी वदल सकते हो।"

पर डाकू नाराज़ होकर अपनी राह चलने को हुआ। बोला—"अपने काम-से-काम रक्खो—"

लेकिन धर्मपुत्र ने डाकू को और कसके पकड लिया और उसकी आखो से आसू तार-तार गिरने लगे।

डाकू ने इस पर आँख उठाई और धर्मपुत्र की तरफ देखा। जाने कैसे और कितनी देर देखता रहा। फिर एकाएक घोडे से नीचे उतर वह धर्मपुत्र के चरणो मे घुटनो आ बैठा।

बोला—"तुमने आखिर मुझे जीत लिया, भाई। बीस साल तक मै अडा रहा हूँ, लेकिन आखिर तुमने मुझे जीत ही लिया है। अब जो चाहे मेरा करो, मै तुम्हारे हाथ हूँ और बेबस हूँ। जब तुमने पहले मुझे सीख देने की कोशिश की, उससे मुझे और गुस्सा चढ आया था। पर तुम जब लोगो से अपने-आपको दूर ले गये तब मुझे तुम्हारे शब्दो पर खयाल हुआ। क्योकि तब मैने देखा कि उन लोगो से तुम्हे अपनी कोई गरज़ नही है। उसी दिन के बाद से मै तुम्हे खाना पहुँचाने लगा। मै ही पेड पर अगोछा बाध जाया करता था।"

धर्म-पुत्र को याद आई वही पुरानी बात। उस स्त्री की मेज तभी साफ झड सकी थी जब पहले झाडन को साफ कर लिया गया था। इसी तरह जब कोई अपनी परवाह और गरज़ छोडकर अपने दिल को साफ कर लेगा तभी वह दूसरो के दिल की सफाई कर सकेगा।

डाकू आगे बोला—"जब मैने देखा कि तुम्हे मौत का डर नही है उस समय से मेरा दिल भी बदल चला।"

और धर्म-पुत्र को याद आई वह हाल मोडने की घटना। जब तक एक जगह लोहे का सिरा किसी थिर चीज़ मे नही अटका दिया गया कि हाल नही मुडी। ऐसे ही जब तक मौत का डर दूर कर जीवन को ईश-निष्ठा मे थिर नही कर लिया गया तब तक इस आदमी के अक्खड मन पर काबू पाना भी नही हो सका।

डाकू ने कहा—"लेकिन मेरा मन तब तो पिघलकर पानी-पानी हो आया जब करुणा के मारे तुम्हारी आखो से अपने लिए मैने आसू ढरते देखे।"

धर्म-पुत्र सत्य की यह महिमा सुनकर मग्न हो आया। फिर वह अपने ठू ो के पास गया और डाकू को भी साथ लेगया। जाकर दोनो देखते हैं तो तीसरे ठूँठ मे भी सेव का किल्ला पड गया है और हरी झाकी दे रहा है। उस समय धर्म-पुत्र को याद आया कि बनजारो की घास तव तक आग न पकड सकी थी जब तक पहले छिपटियाँ अच्छी तरह न सुलग लेने दी गई थी। इसी तरह जब उसका अपना दिल सहानुभूति की गरमी से जलने-जैसा हो गया था तभी वह दूसरे के दिल को अपनी लौ से जगा भी सका, पहले नही।

और धर्म-पुत्र ने इस भाति प्रकाश पाने और अपने पापो के क्षय हो जाने पर बहुत आभार और आनन्द माना।

फिर उसने डाकू को अपनी सारी जीवन-कथा कह सुनाई। इस भाति अपना सब मर्म उसे भेट करने के अनन्तर धर्मपुत्र ने शरीर छोड दिया। डाकू ने उसकी देह की अन्त्येष्टि की और धर्म-पुत्र के कहे अनुसार ही रहने लगा। धर्म-पुत्र से जो उसने पाया था, सब कही उसीका वितरण करने मे वह लग गया।

: ६ :

दो साथी

(१)

एक वार की वात है कि दो वूढे आदमी थे। उन्हे परम तीर्थ-धाम येरूशलम के यात्रा-दर्शन की चाह हुई। उनमे एक का नाम था एफिम शुऐव। यह एक खासा खुशहाल काश्तकार था। दूसरे का नाम था एलीशा। एलीशा की हालत उतनी अच्छी नही थी।

एफिम आदमी औसत तरीके का था। सजीदा, इरादे का मजबूत, आदत का नेक। शराव उसने जीवन मे कभी नही पी थी। न वीडी पीता था, न तम्वाकू। और कभी उसके मुह पर गाली नही आती थी। दो वार गाव मे वह सरपच चुना गया था और उसके काल मे हिसाव पाई-पाई का दुरुस्त रहता था। वडा उसका कुनवा था। दो वेटे थे और एक नाती। नाती का भी व्याह हो गया था और सव जने साथ रहते थे। वह मिलनसार था और उसकी काया अभी तन्दुरुस्त वनी थी। दाढी नीचे तक आती थी और साठ पार हो गए तव दाढी के एक-आध वाल कही चादी के होने शुरू हुए थे।

एलीशा न सपन्न था, न दीन। काम उसका वढईगीरी का था और वाहर वस्ती मे जाकर मजदूरी कर लिया करता था। पर उमर हो आई तो वाहर अव नही जा सकता था। सो घर रहकर उसने मधुमक्खी पाल ली। एक इसका वेटा काम की तलाश मे दूर देश चला गया था। दूसरा घर रहता था। एलीशा दयावान् और खुशमिजाज आदमी था। कभी पी तो लेता था और सुघनी की आदत भी थी और गाने का भी कुछ शौक था। लेकिन आदमी वह शान्त प्रकृति का था और पास-पडौस के साथ या घर मे सबसे वनाकर रहता था। कद मे जरा नाटा, रग कुछ पक्का। दाढी घुघराली घनी। और सिर अपने समनाम पुराने ऋषि एलीशा की

भाति इन हमारे एलीशा का भी बालो से एकदम सूना था ।

इन दोनो वृद्ध जनो ने एक मुद्दत हुई कि साथ येरूशलम की यात्रा को चलने का सकल्प किया था । लेकिन एफिम को फुरसत का समय नही निकला । काम उसे बहुत रहा करता था । एक निबटता कि दूसरा हाथ घेर लेता । पहले तो नाती की शादी की बात ही आगे आ गई । फिर अपने छोटे बेटे के लाम पर से लौटने के इतज़ार मे रहने मे समय निकल गया । उसके बाद एक नये मकान के सिलसिले मे मदद लगनी शुरू हो गई ।

सो क इतवार के दिन दोनो जने, जहॉ मदद लग रही थी, उस नये घर के आगे मिले । वहॉ बल्लियो के चट्टे पर वैठकर बात करने लगे ।

एलीशा ने कहा—"क्योजी वह यात्रा का सकल्प हमारा कब पूरा होने मे आयेगा ?"

एफिम का मुह कुछ लटक गया । बोला—"अभी थोडी बेर और देखो । यह साल तो तुम जानो कैसा कठिन मुझे पडा है । सोचा था रुपये दो-सौ एक मे यह झौपडी खडी हो जायगी । लेकिन चार-सौ से ऊपर लग गये और अभी कितना काम बाकी है । गरमी आने तक और ठहरो । भगवान् ने चाहा तो गरमी मे जरूर-ही-जरूर चलेगे ?"

एलीशा ने कहा—"मेरी राय तो है कि हमे जल्दी-से-जल्दी चल देना चाहिए । मौसम वसत है, सो समय अच्छा भी है ।"

"समय तो अच्छा है, लेकिन इस लगी मदद का क्या करूँ ? इसे छोड कैसे दू ?"

"तुम तो ऐसे कहते हो जैसे देखने-भालने को दूसरा कोई है ही नही । तुम्हारा बेटा ही जो है ।"

"बेटा ! भली कही ! उसका एतबार मुझे नही है । कभी हज़रत ज्यादा भी चढा जाते है ।"

"भाई, आँख मिचने पर भी तो हमारे सबकुछ काम चलेगा न । सो बेटा बडा हुआ, आप भुगत के सब सीख जायेगा ।"

"तुम्हारा कहना तो ठीक है, लेकिन काम छेडा तो अधबीच मे उसे छोडा भी नही जाता है ।"

"भाई, सबकुछ तो इस जन्म मे कभी पूरा हुआ नही है। उस दिन की बात है कि हमारे घर ईस्टर के लिए झाडा-बुहारी और सफाई-धुलाई हो रही थी। सो कुछ यहा करने को है, तो कुछ वहा निपटाना है। इस तरह यह-कर वह-कर, बस यही लगा-लगी रही। फिर भी सब काम पूरा नही हुआ। सो बडे बेटे की वह जो हमारी है बडी समझदार है। बोली, "परब-त्यौहार का दिन हमारी बाट नही देखता, यही गनीमत है। नही तो कितना ही करे, हम उसके लिए कभी तैयार नहीं हो पाये और ऐसे तो त्यौहार कभी न मने।"

एफिम सुनकर सोच-विचार मे पड गया। बोला, "इस झोपडे पर मेरा खासा खर्चा आ गया है और यात्रा पर तुम जानो खाली हाथ तो जाया नही जाता। हरेक पर सौ-सौ रुपया तो भी लगेगा। और सौ रुपया कोई छोटी रकम नही है।"

एलीशा यह सुनकर हँस आया। बोला—"छोडो भी, कैसी बात करते हो। मुझसे दस-गुना तुम्हारे पास होगा। फिर भी पैसे की बात चलाते हो। मुझे बता दो कि कब चलना है, और आज पास कुछ नही तो क्या, तबतक मै चलने जोग कर ही लूँगा।"

एफिम भी इसपर हँसा। कहने लगा—"भई, पता नही था कि तुम ऐसे रईस हो। अच्छा, यह रकम ले कहाँसे आओगे?"

"घर मे ,मिल-मिलाकर जमा-बटोर कुछ तो हो ही जायगा। वह काफी न हुआ तो कुछ मधुमक्खी के छत्ते एक पडोसी के हाथ उठा दूँगा। वह अरसे से लेना भी चाह रहा है।"

"अगर कही शहद उनमे पीछे खूब पका तो तुम्हे बेचने का अफसोस होगा।"

"अफसोस? नहीं भाई, अफसोस मै नही जानता। अपने पाप के सिवा मै किसी और बात के लिए पछतावा नही करता। भई, अपनी आत्मा से बढकर तो दूसरा कुछ है नही।"

"सो तो ठीक है, फिर भी घर के काम-धाम का हर्ज करना भी ठीक नही लगता।"

"लेकिन आत्मा का हर्ज हो रहा है, सो ? वह तो उससे बुरी बात है ना। हम दोनो ने तीर्थ का सकल्प किया था। सो चलना चाहिए। अजी, चलो भी।"

(२)

एलीशा ने आखिर अपने साथी को मोड ही लिया। खूब सोच-विचारने के बाद सवेरे के समय एफिम एलीशा के पास आये। बोले—"भई, तुम्हारी बात सही है। चलो, चले। मौत-जिन्दगी परमात्मा के हाथ है। सो जब तक देह मे सामर्थ्य है और दम बाकी है तभी चल दे तो अच्छा है।"

सो सात रोज के अन्दर दोनो जने यात्रा प्रस्थान के लिए तैयार मिले। एफिम के पास नकद पैसा काफी हो गया। सौ-एक रुपया उसने साथ ले लिया। दो-सौ बीवी के पास छोड दिया।

एलीशा ने भी तैयारी करली थी। दस छत्ते उसने पडोसी को उठा दिये थे। जो नई मधुमक्खी की मुहाल उन छत्तो पर आकर लगे, वे भी उसीकी। इस तमाम पर सत्तर रुपये उसे मिले। सौ मे के बाकी उसने अपने कुनबे के और लोगो से जमा बटोरकर पूरे कर लिये। इसमे इधर के और लोग सब खोखल ही रह गये। बीवी ने अपनी मौत के बाद क्रिया-कर्म के वास्ते मेत कर कुछ जमा रख छोडा था सो सब दे दिया। बहू ने भी पास का अपना सबकुछ सौंप दिया।

एफिम ने अपने बडे लडके को ठीक-ठीक पूरी तरह सब कुछ समझा कर ताकीद दे दी थी कि कब और कितनी घास कहांमे कटेगी, खाद का क्या इन्तजाम होगा और छत कैसी पडेगी। उसने एक-एक बात का विचार रक्खा था और पूरा बन्दोबस्त समझा दिया था। दूसरी तरफ एलीशा ने अपनी बीवी को बस इतना कहा कि उन छत्तो को जो बेच दिये है न, अपनी मक्खी न लगने देना कि कही उनका शहद कम हो जाय। और देखना, सब छत्ते पूरे-के-पूरे पडोसी को मिल जायें, कुछ अपनी तरफ से चूक न हो। बाकी घर की और बातो के बारे में एलीशा किसी तरह का कोई जिक्र भी मुंह नही लाया। बोला—"जैसी ज़रूरत देखना,

वैसा अपने कर लेना। तुम्ही लोग तो मालिक हो। सो जो ठीक जानो अपने सोच-विचार कर वह कर ही लोगे।"

इस तरह दोनो वृद्ध जन तैयार हो गये। लोगो ने खाना वनाकर साथ बाव दिया और पैरो के लिए पट्टियाँ तैयार करके देदी। जूते उन्होने एक जोडी पहन लिये, एक साथ रख लिये। परिवार के लोग गाव के किनारे तक साथ-साथ आये और वहा दोनो को विदा दी। दोनो जने अपनी यात्रा पर चल दिये।

एलीशा मन से हल्का और प्रसन्न था। गाव से निकलना था कि घर-बार की सब बाते उसने मन से भुला दी। उसको बस अब यह लगन थी कि अपने साथी को कैसे आराम से और खुश रक्खू। किसीको कोई सख्त कड्ुवा शब्द न कहूँ और सारी यात्रा कैसी प्रीति और शाति से पूरी करूँ। सडक पर चलते हुए एलीशा या तो मन-मन मे प्रार्थना दुहराता रहता, या सत-महात्माओ के जीवन का विचार करता रहता। जो थोडा-वहुत उनके बारे मे उसने सुना-जाना था वही उसे बहुत था। रास्ते मे कोई मिलता या रात मे कही ठहरना होता तो वह वडी विनय से बात करता और सबसे मीठे वैन बोलता। इस तरह मगन भाव से वह अपनी यात्रा पर आगे बढता रहा। एक बात वेशक उसके बस की नही हुई। सुघनी उससे नही छोडी गई। सुघनी की डिबिया तो उसने घर छोड दी थी, लेकिन उसके बिना कल अब उसे नही पडती थी। आखिर एक राहगीर ने उसे कुछ सुघनी दी। सुघनी पाकर वह फिर चलते-चलते राह मे रुक जाता (कि कही उसके साथी को वुरा न लगे या मन न चले) और पीछे रहकर सुघनी की वह ज़रा नक्की ले लेता और फिर आगे बढता था।

एफिम भी मज़बूत तबियत से चल रहा था। कोई खोटा काम नही करता था और अहकार के बचन नही बोलता था, लेकिन मन उसका वैसा हल्का नही था। घर की फिकर का बोझ उसके मन पर बना था। जाने घर पर कैसे चल रहा हो। देखो, बेटे से यह और कहने की याद न रही। और हाँ, वह भी नही बतलाया। लडका ठीक-ठीक चला भी लेगा कि नही। रास्ते मे कही खाद की गाडी जाती उसे दीखती या आलू ढोते हुए लोग

मिलते तो एफिम के मन मे एकदम खयाल होता कि घर पर हमारे काम सब ठीक-ठीक हो रहा होगा कि नही। उसकी कभी तो मानो यही तबियत मचलती कि चलू वापिस लौटकर पहले सब उसे अपने हाथो से करके बता और समझा आऊँ।

इस तरह पाच हफ्ते वे दोनो चलते गये, चलते गये। उनके जूते के तले बेकार हो गये। छोटा-रूस आते-आते दूसरे जूतो के बन्दोबस्त की उन्हे सोचनी पडी। घर से चले तब से अब तक खाने और रात के ठहरने के उन्हे दाम देने हुआ करते थे। यहा आकर अब लोग उन्हे ठहराने और सत्कार करने मे मानो आपस मे होड-सी करने लगे। अपने घर ठहराते, खिलाते-पिलाते और बदले मे पैसा एक न छूते। इतना ही क्यो, आगे राह के लिए वे आग्रह के साथ खाना भी उनके साथ बाध दिया करते थे।

कोई पाच-सौ मील की यात्रा इन लोगो ने इस तरह बे-लागत की। इसके बाद जो जगह आई, वहाँ उस साल काश्त सूखी गई थी। वहा के किसान लोग ठहरा तो मुफ्त लेते थे, पर खाना बे-लागत नही दे सकते थे। सो कभी तो रोटी उन्हे मिलती भी नही थी। दाम देने को तैयार थे, पर रोटी मयस्सर नही होती थी। लोग बोले कि खेती पारसाल एकदम सत्यानाश गई। जिनके खलिहान भरे रहा करते थे, उन्हे ही अब घर का बासन-कूसन बेच देना पड रहा है। उनसे कुछ उतरी हालत जिनकी थी, उनका हाल बेहाल है। और जो गरीब थे, उनमे भाग गये सो भाग गये, बाकी जो बचे माग-ताग कर पेट पालते या घर मे पडे भूखो मर रहे है। जाडो मे तो चोकर और पत्तिया खाकर तन जोडे रहे।

एक रात दोनो आदमी एक छोटे देहात मे ठहरे। रात वहा नीद ली और अगले दिन तडका फूटने से पहले चल दिये। वहासे काफी रोटी ले रक्खी। धूप मे ताप चढने तक खासी राह उन्होने तय करली। कोई आठ मील चलने पर एक चश्मा आया। वहा दोनो जने बैठ गये और पानी लेकर उसके साथ रोटी भिगो-भिगोकर खाई। फिर पावो की पट्टी खोल जरा विश्राम किया। एलीशा ने अपनी सुघनी की डिबिया निकाली।

देखकर एफिम ने नापसन्दगी मे सिर हिलाया। कहा—"यह क्या बात है, जी ? यह गन्दी लत तुम नही छोड पाते ?"

एलीशा ने कहा—"यह लत मेरे बस से भारी होगई दीखती है। नही तो और क्या कहूँ ?"

विश्राम के उपरात उठकर वे लोग वहासे आगे बढ लिये। कोई आठ मील और चलने पर एक बडा गाव आया जिसके ठीक बीच मे से गुजरना हुआ। अब घाम का ताप बढ गया था। एलीशा को थकान हो आई थी और जरा वहा ठहर कर पानी पी लेने को उसका जी था। लेकिन एफिम बिना रुके चला जा रहा था। दोनो मे एफिम अच्छा चलनेवाला था और एलीशा को उसका साथ पकडे रहने मे भी कठिनाई होती थी।

एलीशा ने कहा—"जो कही यहाँ पानी मिल जाता, तो अच्छा था।"

एफिम ने कहा—"अच्छी बात, पियो पानी, पर मुझे प्यास नही है।"

एलीशा ठहर गया। बोला—"तुम चलते चलो। मै जरा उस झोपडी तक जाकर पानी पी आता हूँ। थोडी देर मे बढकर तुम्हारा साथ ले लूगा।"

"अच्छा।"

यह कहकर एफिम सडक पर अकेला ही आगे बढ लिया। एलीशा झोपडी की तरफ मुडा।

झोपडी छोटी-सी थी। दीवार मिट्टी से पुती थी। फर्श काले रग का और इस्तेमाल से चिकना था। ऊपर सफेद पोता। लेकिन मिट्टी दीवारो की गिरने लगी थी। मालूम होता था मिट्टी थोपे मुद्दत हो गई है। ऊपर से एक तरफ से छप्पर-छत छिदीली थी। दरवाजे के आगे एक आगन-सा था। एलीशा ऑगन मे आया। देखा कि मिट्टी के डडे का घेर जो घर के चारो तरफ एक खिचा हुआ है, उसके तले अन्दर एक आदमी ढेर की मानिद पडा है। देह का मजबूत, दाढी नही है, और कुर्त्ता पाजामे के अन्दर उडसा हुआ है। आदमी वह वहाँ छाया मे ही लेटा होगा, लेकिन अब सूरज घूमकर पूरा उसके ऊपर पड रहा था। वह सोया नही था,

फिर भी पड़ा हुआ था। एलीशा ने उसके पास जाकर पानी मागा। लेकिन आदमी ने कुछ जवाब नही दिया।

एलीशा ने सोचा कि या तो यह बीमार है, या जानबूझकर सुनना नही चाहता। दरवाज़े के पास गया तो अन्दर से एक बच्चे के रोने की आवाज आई। उसने कुन्डी पकड दरवाजे को खटखटाना शुरू किया।

"भाई, कोई है ?"

एलीशा ने पुकारा। पर जवाब कोई नही। अपने डडे से किवाड को ठोकते हुए उसने फिर पुकारा, "ए जी, कोई सुननेवाला अन्दर है ?"

पर कोई उत्तर नही।

"ए सुनो, कोई है ?"

जवाब नदारद।

एलीशा लौटने को हुआ। लेकिन तभी ऐसा मालूम हुआ कि जैसे दूसरी तरफ से कोई कराहने की आवाज उसके कान मे पडी हो।

"कोई मुसीबत इन लोगो पर पडी मालूम होती है। चलूँ। देखूँ तो।"

और लीशा झोपडे मे घुसा।

खटका उसने खोला। दरवाज़े की कुन्डी अन्दर से बद नही थी, वह सहज खुल गया और एलीशा जिस कमरे मे पहुँचा उसमे बाई तरफ चूल्हा था। सामने आले के ऊपर मसीह का क्रूस टगाँ था। पास एक मेज़ थी। वही बेच पडी थी। बेच पर थी एक स्त्री। सिर उसका खुला था, तन पर अकेला एक कपडा। उमर की बुढिया थी। मेज़पर सिर रक्खे झुकी बैठी थी। पास ही पोतामिट्टी-सा पीला दुबला एक बालक था जिसका पेट आगे को निकला हुआ था। वह कुछ माग रहा था और ज़ोर-जोर से रोकर बुढिया का पल्ला खीचता था। एलीशा घुसा तो हवा वहा की उसे बहुत गधीली मालूम हुई। उसने मुडकर देखा तो चूल्हे के पास धरती पर एक औरत और पडी थी। आखे बन्द थी। और गले मे कुछ घर-घर आवाज़ हो रही थी। वह वहा चित पडी आस्मान मे रह-रहकर टागे फेक रही थी। कभी उन टागो को सिकोडती, समेटती और फिर फेकने लगती। दुर्गन्ध वहीसे आरही थी। मालूम होता था कि वह खुद उठ-

बैठ सकती है नही, न कोई और देखने-भालने वाला है। बुढिया ने सिर उठाया और आगन्तुक को देखा। बोली, "क्या है ? कुछ चाहते हो ? यहा कुछ नही।"

भाषा उसकी दूसरी थी। फिर भी एलीशा बात समझ गया। बोला, "भगवान् की दया हो। ज़रा पीने को पानी चाहता था।"

"यहा कोई नही है, कुछ नही है। पानी काहे मे लाकर रक्खे ? जाओ, रास्ता देखो।"

उस समय एलीशा ने पूछा—"क्यो जी, कोई तुममे नही जो वहा उस बिचारी बीमार को जरा सभालने लायक हो ?"

"नही, कोई नही। लडका मेरा बाहर बेबस मर रहा है। हम यहा अन्दर मर रहे है।"

बच्चे ने एक नये आदमी को देखकर रोना बन्द कर दिया था। लेकिन बुढिया बोली तो फिर उसने राग शुरू कर दिया। बुढिया का आचर खीचकर बोला—"दादी रोटी, दादी रोटी।"

एलीशा बुढिया से पूछने वाला था कि बाहर से वह आदमी लड-खडाता-लडखडाता वहाँ पहुँचा। वह दीवार को पकडे-पकडे आ रहा था, पर कमरे मे घुसा कि देहली के पास धडाम-से गिर पडा। फिर उठकर चलने और पास आने की उसने कोशिश नही की। वहीसे टूटती ज़बान मे बोलने लगा। एक शब्द निकलता, कि फिर सास लेने को वह रुक जाता और हापता हुआ फिर आगे का शब्द मुह से बाहर होता।

बोला—"महामारी ने हमे पकड लिया है।.. और अकाल... वह भूखा है ..मर रहा है..."

कहकर उसने बच्चे की तरफ इशारा किया और खुद टूटकर रोने लगा।

इसपर एलीशा ने कधे पर लटके अपने बकचे को लिया और कमर पर से उतारकर धरती पर रख दिया। फिर बेचपर उसे खोल उसमे से रोटी (डबल रोटी) निकाली। चाकू लेकर उसमे से एक टुकडा काटा और उस आदमी की तरफ बढा दिया। लेकिन आदमी ने उसे तो लिया

नही, बल्कि उस बच्चे और चूल्हे के पीछे दुबकी बैठी एक दूसरी लडकी को इशारे से एलीशा को बताया। मानो कहा—"देते हो तो उन्हे दो, उन्हे।"

यह देख एलीशा ने रोटी बालक की ओर बढाई। रोटी का देखना था कि बालक ने दोनो हाथ बढाकर उसे झपट लिया और नन्हे-नन्हे हाथो मे टुकडे को पकड उसमे ऐसा मुह गाडकर खाने लगा कि उसकी नाक का पता चलना मुश्किल था। पीछे से लडकी भी चलती वहा आ पहुँची और रोटी पर आख गाडे खडी होगई। एलीशा ने उसे भी टुकडा दिया। फिर एक और टुकडा काटकर उस बुढिया स्त्री को दिया। वह बुढिया भी अपने बूढे मुह से तभी उसे कुतर कर खाने लग गई।

बोली—"जो कही थोडा इस वक्त पानी कोई और ले आता! तलुए तो बेचारो के सूख रहे है! कल मै पानी लेने गई थी, या आज, याद नही सो बीच मे ही गिर पडी। आगे फिर जा नही सकी। डोल वही पडा रह गया। कोई ले न गया हो तो कौन जाने वही पडा हो।"

एलीशा ने कुएँ का पता पूछा। बुढिया ने बता दिया। सो एलीशा गया, डोल लिया और पानी लाकर सबको पिलाया। बच्चो ने और बुढिया ने पानी आने पर उसके साथ फिर और भी कुछ रोटी खाई। लेकिन आदमी ने एक कन मुह मे न डाला। बोला, "मै खा नही सकता।"

अबतक वहा पडी दूसरी स्त्री को कोई होश नही मालूम होता था। वह वैसे ही अधर मे टाग फेक रही थी। एलीशा तब फिर गाव की एक दूकान पर गया। वहासे कुछ जई का चून लिया। नमक, दाल और तेल ले लिया। एक कुल्हाडी भी कहीसे खोज ली और काट लाकर लकडी जमा की। फिर आग जलाई। लडकी भी आकर उसमे मदद देने लगी। उपरात उन्होने खाना तैयार किया और भूखे जनो को खिलाया।

(५)

उस आदमी ने तो नाममात्र खाया। बूढिया ने भी कम ही खाया। पर बच्चो ने तो बरतन को चाटकर साफ कर दिया। फिर वे दोनो बालक आपस मे गलबाही डाले गुडी-मुडी होकर सो गये।

उस वक्त बुढियां स्त्री और उस आदमी ने एलीशा को अपने दु ख की सारी कथा सुनाई कि कैसे उनकी यह दशा हुई । वोले—"गरीव तो हम पहले ही थे । पर इस साल के सूखे ने मुसीवत ला दी । जो जमा था कठिनाई से सर्दी तक चला । जाडो के दिन आते-आते यह नौवत हुई कि पडोसी से या जिस-तिस से माँगकर काम ,चलाना पडा । पहले तो उन्होने दिया, पीछे वे भी इकार करने लगे । चाहते थे कि दे, पर देने को उनके पास होता नही था । और हमे भी मागते शर्म आती थी । सो कर्ज मे हम गले तक डूवते गये । एक-एक कर सवका लेना हम पर हो गया । किसीका पैसा चाहिए था तो किसी का नाज वाजिव था और किसी तीसरे की और कोई चीज उधार चढ गई थी ।

"ऐसी हालत होने पर," आदमी वोला, "मै काम की तलाश मे लगा । पर कोई काम नही मिला । पेट रखने जितना नाज मिल जाय, तो उसी मजूरी पर काम करने वेतादाद लोग तैयार थे । और कभी कुछ काम मिला भी, तो अगले दिन फिर खाली । फिर और काम ढूढो । मै इस चक्कर मे वीत चला । वुढिया और लडकी ने उधर कही दूसरी जगह जा भीख मागना शुरू कर दिया था । पर भीख मे कुछ मिलता नही था, नाज का ऐसा अकाल था । फिर भी जैसे-तैसे हम कभी वेखाये, तो कभी अधपेट, जीते ही गये । आस थी कि अगली फसल आने तक ज्यो-त्यो चले चले तो फिर देखा जायगा । पर पतझड आने तक तो हमे भीख मे भी कुछ मिलना वन्द हो गया । ऊपर से बीमारी ने आ पकडा । हालत वद से वदतर होती गई । आज कुछ मिल जाता, तो दो दिन फाके के होते । आखिर घास खाकर हम लोग तन रखने लगे । मालूम नही घास की वजह थी कि क्या, मेरी वीवी बीमार पड गई । टागो पर उससे चला नही जाता, न खडी रह पाती है । मेरा भी दम छीन होता गया । और मदद कही कोई दीखती नही..."

"तो भी" बुढिया बोली, "मै कुछ बची थी । पर निराहार काया कब तक चलती । आखिर मै भी गिरती गई । लडकी यह दुवला गई और डरी-सहमी सी रहने लगी । मै कहती कि जा, पडोसियो से कुछ माग-ताग

ला। पर वह घर से बाहर न जाती और कोने मे सरक कर गुम-दुबक बैठ जाती। अभी परसो एक पडोसन यहाँ घर झाकने आई। पर यहा का हाल देख उल्टे पाँव चली गई। देखा कि यहा तो खुद सब बीमार और भूखे पडे है। असल मे उसके आदमी ने कहा था कि जा, कहीसे इन नन्हो के मुह डालने के लिए तो कुछ ला। सो उस आस मे विचारी आई थी। पर हम पहले ही यहाँ मौत की बाट देखते पडे थे।"

उनकी यह दुख कथा सुनी तो एलीशा ने उस रोज जाने और अपने साथी का सग पकडने का विचार छोड दिया। रात वह वही रहा। अगले सवेरे अधेरे-दम उठा और घर का काम-धाम सहारने लगा। काम मे वह ऐसे अनायास लग गया कि उसीका घर हो। आग जलाई और आटा गूदा। बुढिया उसका साथ देती जाती थी। फिर वह लडकी को साथ लेकर पास-पडोस से जरूरी चीज़-वस्त लेने चला। क्योकि घर मे कुछ था नही, नाज पाने मे सब कुछ बिक गया था। न दो बासन रह गये थे, न कोई वस्त्र। सो एलीशा ज़रूरी सामान जुटाने लगा। कुछ अपने पास से ही मुहय्या हो गया, बाकी खरीद कर ला दिया। सो वहा वह एक दिन रहा, फिर दूसरे दिन, और फिर तीसरे दिन। छोटे बालक मे अब दम आ गया और एलीशा बैठा होता तो वह सरक-सरक कर उसकी गोद मे चढ जाता। लडकी का चेहरा भी खिल आया और वह हर काम मे दौडकर मदद करने लगी। और ज़रा बात हो तो झट एलीशा के पास भाग आती। कहती, "दादा, ओ दादा!"

बुढिया मे भी अब ताकत आती जाती थी और पास-पडोस में अब वह घूम आ सकती थी। आदमी के बदन मे भी बल आ रहा था और दीवार का सहारा लेकर अब वह चल-फिर सकता था। बस उसकी बीवी चगी होने मे नही आ रही थी। लेकिन तीसरा दिन होते उसे भी होश हुआ और उसने खाने को मागा।

एलीशा सोचने लगा कि रास्ते मे इतना वक्त बरबाद हो जायगा, इसका भला क्या पता था। चलो, अब बढना चाहिए।

(६)

चौथा रोज ईस्टर के व्रत-पर्व का आखिरी रोज था। वह रोज उपवास के पारणे का दिन होता है। और लोग खा-पीकर खुशी मनाते है। एलीशा ने सोचा कि इस दिन को तो यही इन्ही लोगो के साथ मुझे गुजारना चाहिए। जाकर दुकान से इनके लिए कुछ ला-लू दूगा और त्यौहार के आनन्द मे साथ दूगा। फिर निवटकर शाम को अपनी राह चल दूगा।

यह सोचकर एलीशा गाव मे गया और दूध-सेवई का इन्तज़ाम किया और घर पहुँचकर अगले रोज़ की त्यौहार की तैयारी मे मदद देने लगा। कही कुछ उबल रहा है तो कुछ सिक रहा है। पर्व वाले दिन एलीशा गिरजे गया। आकर तब सबके सग-साथ मे उपवास तोडा और जीमन किया। उस रोज बीवी भी उठकर कुछ-कुछ टहलने लायक हो आई थी और पति ने हजामत की और बुढिया ने धोकर कुर्त्ता नया कर रक्खा था सो पहना। तब वह गाव के महाजन के पास क्षमावनी मागने गया। ज़मीन और चरियाई की जगह उनकी उसी महाजन के यहाँ गिरवी रक्खी थी। वह कहने गया था कि महाजन, खेत और ज़मीन बस एक फसल के लिए देदो। लेकिन शाम को लौटा तो बडा उदास था। आकर वह आसू गिराने लगा। असल मे महाजन ने कोई दया नही दिखलाई थी। सीधे कह दिया था कि पहले मेरा रुपया दो।

एलीशा इस पर फिर सोच-विचार मे पड गया। मन मे बोला कि अब ये लोग रहेगे कैसे ? और जने काटकर घास तैयार करेगे तब ये क्या काटेगे ? इनकी जमीन तो गिरवी रखी है। जई पकने के दिन आये। और इस साल देखो धरती-माता ने फसल मे क्या धन-धान उगला है, पर दूसरे लोग कटाई कर रहे होगे और इन बेचारो के पास कुछ है नही। उनकी तीन एकड जमीन महाजन के ताबे है। सो मेरे पीछे इन बेचारो की दशा वैसी ही न हो जायगी जैसी आने पर मैने देखी थी ?

सोचकर एलीशा दुविधा मे होगया। आखिर तय किया कि आज शाम न जाऊँ, कल तक और ठहर जाऊँ। यह विचार पक्काकर के रात मे सोने को वह ओसारे मे गया। वहा अपनी परमात्मा की प्रार्थना कहकर

बिछावन पर लेट गया। पर सो वह नही सका। एक तरफ तो सोचता था कि चलू, क्योकि यहा उसका काफी समय और काफी पैसा लग गया था। पर दूसरी तरफ इन लोगो पर उसके मन मे करुणा भी आती थी। और. . ।

मन मे बोला—"इसका तो कोई अन्त ही नही दीखता है। पहले तो मैंने इतना ही सोचा था कि लाकर इन्हे पानी दिये देता हूँ और यह पास की रोटी। तब क्या जानता था कि बात ऐसी बढ जायगी। लो, अब तो खेत और चराई की धरती को गिरवी से छुडाने की बात सामने आगई है। यह किया तो फिर उनको गाय भी लेकर देनी होगी। फिर एक घोडा भी चाहिए जिससे गाडी मे लान-वान ढोया जा सके। वाह दोस्त एलीशा, तुमने तो गले मे यह अच्छा फन्दा डाल लिया है। अपनी सुध बिसार तुम तो खासे गडबड-झाले मे पड गये हो।" यह सोचता हुआ एलीशा उठा और सिरहाने से कोट निकाल, तह खोल, अपनी सुघनी की डिबिया बाहर की और उसमे से एक नक्की ली। सोचता था कि सुघनी से मदद मिलेगी और झमेला छटकर मन के खयाल साफ होने मे आयेगे।

लेकिन कहाँ ? बहुतेरा सोचा, बहुतेरा विचारा। पर निश्चय न होता था। एक मन होता कि चल देना चाहिए। पर दया रोक लेती थी। उसे सूझ न मिलता था कि करूँ तो क्या। कोट की तहकर आखिर फिर उसने सिरहाने ले लिया। ऐसे बहुत देर पडा रहा। होते-होते मुर्गे की पहली बाग उसे सुनाई दी। तब उसकी पलको पर नीद उतरने लगी। पर सो न पाया होगा कि उसे ऐसा लगा कि किसीने उठा दिया है। देखा, तो वह सफर के लिए तैयार है, बकचा कमर पर कसा है, हाथ मे लाठी लिये है। बाहर दरवाज़ा भी इतना खुला है कि वह तरकीब से चुपचाप निकल जा सकता है। वह निकलकर जा ही रहा था कि कमर के बकचे के बन्ध एक तरफ तार मे हिलग गये। वह उसे छुडाने मे लगा कि इतने दूसरी तरफ बाये पैर की पट्टी अटक गई और खिचकर खुलने लगी। आखिर उचककर बकचे को उसने ठीक कमर पर लिया, पर देखता क्या है कि तार ने उसे नही हिलगाया, बल्कि छोटी लडकी उसे पल्ले से पकडे हुए है। कह रही है—

"दादा, रोटी ! दादा, रोटी !"

फिरकर पैर की तरफ जो उसने देखा तो क्या देखता है कि छोटा बच्चा उसके पाँव की पट्टी को पकडे हुए है। और बराबर की खिडकी मे से बुढिया और घर का मालिक वह आदमी, दोनो जने उसे जाते देख रहे है।

एलीशा इस पर जग आया। उठकर अपने आपसे ऐसे बोलने लगा कि दूसरा भी सुन ले। कहने लगा कि कल मै उनके खेत उन्हे छुडा दूँगा और एक घोडा ले दूँगा। बच्चो के लिए एक गाय और फसल आने तक के लायक नाज भी भर दूँगा। नही तो मै उधर समन्दर पार भगवान् को पाने जाऊँ, तो कही ऐसा न हो कि अपने अन्दर के भगवान् को मै खो ही बैठूँ।

इस विचार के बाद एलीशा अपने गाढी नीद सो गया, तडका फूटने पर उठा। अब-सवेरे ही उठ महाजन के पास जाकर उसने चराई की धरती और खेती की जमीन दोनो को पैसा चुकाकर छुडा लिया। फिर एक दराँत ली (क्योकि अकाल मे यह भी काम आ गई थी।) और उसे साथ लेकर घर लौटा। आकर आदमी को तो कटाई करने भेज दिया और खुद फिर गाँव की तरफ चला। वहाँ पता लगा कि चौपाल पर एक गाडी और घोडा बिकाऊ है। मालिक से भाव-सौदा करके उसने दोनो खरीद लिये। फिर एक बोरा नाज भी ले लिया और उसे गाडी मे रखवा लिया। उसके बाद गाय की तलाश मे चला। जा रहा था कि दो औरते मिली। आपस मे बात बतलाती जा रही थी। बोल वे अपनी भाषा रही थी, तो भी एलीशा समझ सका कि वह क्या कह रही है।

"अरी, पहले तो वे समझे नही कि कौन है। सोचा, आता-जाता होगा कोई भला-मानस। पीने को पानी माँगता आया था कि फिर वह वही रह गया। बहिन, सुना कुछ, क्या-क्या सामान उनके लिए उसने ले डाला है। रामदुहाई, कहते है कि एक घोडा और एक गाडी तो अभी सवेरे ही चौपाल मे उसने मोल लिये है। ऐसे आदमी दुनिया मे विरले मिलते है। चलती हो, चलो उन पुन्नात्मा के दर्शन ही करे।"

एलीशा सुनकर समझ गया कि यह उसीकी तारीफ की जा रही है। सुनकर वह आगे गाय लेने नही गया। लौटा, चौपाल पर आया, दाम चुकाये और गाडी जोतकर घर आ गया। गाडी से उतरा तो घर के लोगो को घोडा-गाडी देखकर बडा अचम्भा हुआ। उन्होने सोचा तो कि कही सब यह उन्हीके वास्ते न हो,—पर पूछने की हिम्मत नही हुई। इतने आदमी भी घर का दरवाजा खोल बाहर आया। बोला—"दादा, यह घोडा कहाँ से ले आये ?"

एलीशा ने कहा, "अजब सवाल करते हो। "क्यो, खरीदे लिये आ रहा हूँ, नही तो सस्ता बिका जाता था। अच्छा, जाओ और काटकर घास नाद मे डाल दो कि रात को इसके लिये हो जाय। और गाडी मे से यह बोरा भी उतार लो।"

आदमी ने घोडा खोल लिया और बोरा नाज का कोठे मे ले गया। फिर घास काटकर नाद मे डाल दी। आखिर निबट-निबटा सब जने अपने सोने चले गये। एलीशा आज रात सोने के लिए बाहर रास्ते से लगे ओसारे मे आ रहा था। उस शाम उसने अपना बकचा भी पास ले लिया था। सब-के-सब सो गये थे, उस वक्त वह उठा। बकचा अपना सम्भाला और कमर पर कस लिया। पट्टियाँ टाँगो से बाँध ली, कोट पहन लिया और जूते चढा आगे राह पर एफिम को पकडने बढ लिया।

(७)

एलीशा कोई तीन मील से ऊपर चलते चला गया होगा कि चाँदना होने लगा। तब एक पेड के नीचे बैठ उसने बकचा खोला और पास के पैसे गिने। कुल सात रुपये और पाँच आने के पैसे बचे थे।

सोचने लगा कि उतने पैसे लेकर समन्दर पार की यात्रा की सोचना वृथा है। अगर भीख माँगकर यात्रा पूरी करूँ तो उससे तो न जाना अच्छा है। एफिम मेरे बिना भी येरूशलम पहुँच ही जायँगे और मन्दिर मे वहाँ मेरे नाम का भी एक दिया रख देगे। और मेरी बात पूछो तो इस जन्म मे अपना प्रण पूरा करने को मुझे अब क्या मौका मिलेगा। बडा शुक्र है कि प्रण और सकल्प मैने मालिक

के सामने ही किये थे कि जो दयासागर हैं और पापियो के पाप माफ कर देते हैं।

एलीशा उठा, झटककर फिर अपना वकचा कमर पर लिया, और वापिस मुड चला। वह यह नही चाहता था कि कोई मुझे पहचान ले। सो गाँव को वचाने के लिए चक्कर लेकर वह अपने देश की तरफ तेज़ चाल चल दिया। घर की तरफ जाते इस वार वही रास्ता उसे हलका लगा जो पहले कठिन मालूम हुआ था। पहले एफिम का साथ पकडे रहने मे मुश्किल होती थी, अव ईश्वर की दया से लम्वी राह चलते उसे थकान न आती थी। चलना वालक का खेल-सा लगता था। लाठी हिलाता, एक दिन मे चालीस से पचास मील तक तव आसानी से नाप लेता था।

देश अपने घर जाकर पहुँचा तो फसल हो चुकी थी। कुनवे के लोग उसे वापिस आया पाकर वहुत खुश हुए। सव पूछने लगे कि क्या हुआ, कैसे वीती, कैसे पीछे और अकेले रह गये ? येरूशलम जाये विना क्यो लौट आये ? पर एलीशा ने उनको कुछ कहा नही। इतना कहा कि भगवान् की इच्छा नही थी कि मैं वहा पहुँचूँ। सो राह मे मेरा पैसा जाता रहा और साथी का साथ छूटकर मैं पीछे पड गया। भगवान् मुझे माफ करेंगे और आप लोग भी माफ करे।

इतना भर कहकर जो पैसा पास वचा था सव अपनी वुढिया वीवी के हाथो मे दे दिया। फिर घर-वार के हाल-अहवाल पूछे। सव ठीक-ठाक चल रहा था। काम सवने पूरा किया था। किसीने कोर-कसर नही की थी और सब जने मेल और शान्ति से रहे थे।

उसी दिन एफिम के घर के लोगो को भी उसके लौटने की खवर मिली। वे भी अपने दादा की ख़वर लेने आये। उनको भी एलीशा ने यही जवाव दिया।

कहा—"एफिम तेज चलते हैं। सन्त पीटर के पर्व के दिन से तीन रोज इधर मेरा उनका साथ छूट गया। सोचता था कि मैं फिर साथ पकड लूँगा। लेकिन ईश्वर का चाहा होता है। मेरा पैसा जाता

रहा और फिर आगे बढने लायक में नही रहा । सो अधबीच से लौट आया ।"

लोग अचरज करते थे कि ऐसे समझदार आदमी होकर उन्होने क्या यह मूरखपने की बात की । चलने को चल पडे, पर जाना था वहाँ पहुँचे नही और रास्ते मे ही सब पैसा फूँक दिया । कुछ काल तो वे इसपर विस्मय मे रहे । फिर धीरे-धीरे सब भूल चले । एलीशा के मन से भी सब बिसर गया । वह अपने घर के काम-धन्धे मे लग गया । अपने बेटे की मदद से जाडो के लिए लकडी काटकर भर ली । औरतो ने और सबने मिलकर नाज गाह रक्खा, फिर बाहर के छप्पर को ठीक कर लिया । मक्खियो के छत्तो को छा दिया और पडोसी को उसने वे दस छत्ते दे दिये जो बेचे थे । उसपर जितना मधु-मुहाल आया, सबका सब ईमानदारी से पडोसी की तरफ कर दिया । बीवी ने कोशिश भी की कि न बताऊँ कि इन छत्तो पर से कितने मधु-मुहाल हुए है । लेकिन एलीशा खूब जानता था कि कौन छत्ते फले है, कौन नही । सो दस की जगह पडोसी को सत्रह भरे छत्ते मिले । जाडो की सब तैयारी करके उसने लडके को काम तलाश करने भेज दिया । खुद मधु-मक्खी के कोटर तैयार करने और लकडी की खडाऊँ वगैरा बनाने के काम मे जुट गया ।

(८)

एलीशा उधर पीछे गाँव में रह गया था कि उस दिनभर एफिम ने राह मे उसका इन्तजार देखा । आगे कुछ ही कदम चलने पर वह बैठ गया था । बाट देखता बैठा रहा, बैठा रहा । झोक आई और एक नीद वह सो भी लिया । उठकर फिर बाट जोहने लगा । लेकिन उसका साथी नही लौटा । बाट देखते उसकी आँखे दुख आई । उस पेड के पीछे सूरज अब डूबने लग रहा था, पर एलीशा का उस सडक पर न अता दीखता था न पता ।

एफिम ने सोचा—"शायद हो कि इसी रास्ते वह मुझसे आगे निकला चला गया हो । क्या पता किसीने अपनी गाडी पर विठा लिया हो, मैं सो रहा हूँ तभी बिना मुझे देखे आगे बढता गया हो । लेकिन ऐसा हो

कैसे सकता है कि मै उसे न देखूँ। यहाँ तो पटपर मैदान मे दूर-दूर तक साफ दीखता है। चलूँ, लौटकर देखूँ। लेकिन जो कही वह आगे वढ गया होगा तब तो फिर ऐसे हम दोनो विछुड ही जायँगे और कोई किसी को न मिलेगा। सो अच्छा है मै चला ही चलूँ। रात को जहाँ पडाव होगा, वहाँ तो आखिर दोनो मिलेगे ही।"

सो चलते-चलते गाँव आया। वहाँ उसने चौकीदार से कहा कि इस-इस शकल का कोई मेरी उमर का आदमी चलता हुआ आयेगा, सो उसे जहा मै ठहरा हूँ, वही ले आना। लेकिन एलीशा उस रात भी नही आया। एफिम इकला आगे वढा। राह मे जो मिलते सवसे पूछता कि नाटे कद का, सिर साफ, वूढी उमर का कोई मुसाफिर तो तुमने नही देखा है? पर किसीने उसे नही देखा था। एफिम को अचरज होता और फिर अकेला आगे वढ लेता। सोचा, कि आखिर ओडेसा पहुँचकर तो हम दोनो मिलेगे ही। नही तो जहाज़ पर मुलाकात पक्की है। यह सोच उसने फिर उस वावत सव फिकर छोड दी।

चलते-चलते रास्ते मे उसे एक यात्री मिला जो लम्वी एक कफनी पहने था। वाल वढे थे और सिर पर ऐसी टोपी थी जैसे उपदेशक हो। वह थीस के तीरथ की यात्रा से आता था और यह दूसरी वार येरूशलम धाम को जा रहा था। वे दोनो रात एक ही जगह ठहरे थे, सो वहाँ मिल गये। फिर तो साथ-ही-साथ वे चलने लगे।

ओडेसा दोनो कुशलपूर्वक पहुँच गये। वहाँ जहाज के लिए तीन दिन वाट देखने मे रुकना पडा। जगह-जगह और दूर-दूर से और वहुत से यात्री भी उसी तरह जहाज़ की प्रतीक्षा मे थे। वहाँ फिर एलीशा के वारे मे एफिम ने पूछ-ताछ की। पर किसीसे कुछ पता नही मिला।

एफिम ने वहाँ फिर अपने पास पर सही कराई जिसकी पाँच रुपये लागत वैठी। चालीस रुपये मे येरूशलम का वापिसी टिकिट मिला। सफर के लिए खाने-पीने के लिए सामान भी साथ खरीदकर उसने रख लिया।

साथ के यात्री ने तरकीव वताई कि किस तरह विना पैसा भी जहाज़ पर जाना हो सकता है। लेकिन एफिम ने उधर ध्यान नहीं

दिया। बोला, "मैं खर्च के लिए तैयार होकर आया हूँ। सो मैं तो पैसा देकर चलूँगा।"

जहाज़ की सवारियाँ पूरी हो गईं और सब यात्री उसपर आ रहे। एफिम और उसके साथी भी उनमे थे। लगर उठा और जहाज समन्दर मे बढ लिया।

दिनभर तो मज़े मे चलता गया। पर रात होते हवा कुछ तेज़ उठ आई। पानी पडने लगा और जहाज़ डगमग-डगमग होने लगा। लोग डर आये। स्त्रिया चीखने-चिल्लाने लगी और आदमियो मे जो कमज़ोर थे, वे भी बचत की जहातहा जगह ढूँढते भागने लगे। डर एफिम को भी लगा, लेकिन उसने जाहिर नही किया। डेक पर जहा पहले जमकर बैठ गया था वही बैठा रहा। वहा पास टाम्बो के और लोग भी बैठे थे। सो तमाम दिन और तमाम रात वे सब जने अपने-अपने थैले या बक्स से लगकर चिपके हुए चुपकी मार बैठे रहे। तीसरे दिन जाकर हवा थमी। समन्दर शान्त हो आया और पाचवे दिन जहाज कुस्तुनतुनिया के बन्दर पर जाकर लग गया। कुछ लोग उतर कर सत-सोफिया के गिरजाघर के जो तुर्कों के अधिकार मे था, दर्शन करने किनारे उतर गये। और तो लोग गये, लेकिन एफिम जहाज पर ही रहा। उसने तो बस किनारे से कुछ रोटी खरीद कर कनात मानी। जहाज वहाँ चौबीस घटे रहा और फिर आगे बढा। फिर समर्ना बन्दर पर वह ठहरा उसके बाद इलेक्जेन्ड्रेटा। आखिर सब लोग सकुशल जाफा बन्दर पर आ पहुँचे। वहा सब यात्रियो को उतरना था। अभी यहा से भी येरूशलम पक्की सडक चालीस मील से कुछ ऊपर ही था। जहाज से उतरते भी लोगो को बडा डर लगा। जहाज ऊँचा था और नाव इतनी नीची कि जैसे नाव मे एक-एक करके वे लोग उतारे क्या, गिराये जाते थे। और नीचे पानी मे खडी नाव इसमे बडी डगमग कर आती थी। यह भी डर था कि ज़रा कुछ हो जाय, कि नाव मे तो आदमी पहुँचे नही और पानी मे ही गिर जाय! दो-एक आदमी इस तरह गिर कर भीगे भी। खैर, आखिर जैसे-तैसे सब लोग सकुशल किनारे पहुँच गये।

वहाँ से वे पाव-पाव चले और तीसरे दिन दुपहरी के वक्त येरूशलम पहुँच गये। शहर के वाहर रूस के लोगो के लिए एक जगह वनी थी, वहा सव जने ठहरे। सवके पासो पर वहा भी सही की गई। फिर खा-पीकर एफिम अपने उस यात्री के साथ तीर्थ-धाम देखने निकला। पर मन्दिर खुलने का यह समय नही था। सो वह धर्माचार्य के रहने की जगह चले गये। वहा सव-के-सव यात्री जमा थे। स्त्री अलग और पुरुष अलग, सव को दो घेरो मे वैठाया गया था। जूते वाहर छोडने को कह दिया था और सव वहा नगे पैर थे। वैठने के वाद एक साधू आये जिनके कधे पर तौलिया था और साथ जल। उन्होने अपने हाथो से सवके पाव धोये, तौलिये से पोछे और माथा नवाकर सवके चरन छुये। घेरो मे वैठे हर स्त्री-पुरुष के साथ उन्होने ऐसा किया। औरो मे एफिम के पैर भी धोये और माथे से छुये गये थे। सो सवेरे-शाम प्रभु-कीर्त्तन मे एफिम शामिल हुए, प्रार्थना की और वेदी पर अपना दीपक जलाकर रक्खा। अपने माँ-वाप के नाम की लिपि लिखकर पुरोहित को दी कि उनके नाम भी धर्म-प्रार्थना के वीच ले लिये जायँ। धर्माचार्य के यहा सव यात्रियो को खाने-पीने को भी दिया गया। अगले सवेरे मिस्र की मरियम माता की गुहा देखने वे लोग गये। वहाँ ही माता मरियम ने तपस्या की थी। यहाँ भी उन्होने दीप जलाये और स्तुति पढी। वहाँ से हजरत इब्राहीम के मठ मे गये और वह जगह देखी जहा हजरत, परमात्मा की भेंट-स्वरूप, अपने पुत्र को मारने को तैयार हो गए थे। फिर वह स्थान देखा जहा मरियम मगदालिन को प्रभु ईसा के दर्शन मिले थे। जेम्स का चर्च भी उन्होने देखा। इस तरह साथ के यात्री ने एफिम को ये सभी स्थान दिखाये। वह वताते भी गये कि कहा क्या चढाना चाहिए। दोपहर बीते वे अपने स्थान पर लौटे और भोजन किया। उसके वाद लेटकर आराम करने की तैयारी कर रहे थे कि साथ का यात्री चीख-चिल्लाने लगा और अपने सव कपडे फेक-बिखेरकर टटोलने लगा। बोला—"मेरा बटुआ किसी ने चुरा लिया है। उसमे तेईस रुपये थे। दो तो दस-दस के नोट थे, बाकी खरीज।"

वह यात्री झीकता-रोता रहा, पर रंज मनाने से क्या होता था। कोई और चारा नही था। सो फिर चुपचाप अपनी जगह ही वह जा लेटा और नीद लेने की कोशिश करने लगा।

(६)

बराबर मे एफिम पडा हुआ था। उस समय उसके मन मे विकार हो आया।

वह सोचने लगा कि इसका किसीने कुछ चुराया नही मालूम होता। सब झूठ-मूठ की बात है। जान पडता है उसके पास था ही कुछ नही। देखो न, कही जो पैसा उसने दिया हो। जहाँ देना होता, बन्दा मुझसे ही दिलवाता। और हा, मुझसे एक रुपया भी तो उधार ले रक्खा है!

यह खयाल आना था कि एफिम ने मन की लगाम खीची। अपने को झिडककर कहा कि दूसरे आदमी के दोष देखने का मुझे क्या हक है। यह तो पाप की बात है। नही, मैं उस बारे मे और खयाल नही लाऊँगा। पर जैसे ही मन और तरफ फेरा कि छूटकर फिर वह वही अपने साथी की बात पर पहुँच जाता था। उसे खयाल होता कि देखो, पैसे का वह कैसा नदीदा है। और जब चिल्ला रहा था कि मेरा बटुआ चोरी चला गया है तो आवाज उसकी कैसी खोखली और नकली मालूम होती थी।

सो फिर सोचा कि नही जी, उसके पास पैसा-वैसा कुछ था ही नही। सब झूठ-मूठ की बात है।

साझ को दोनो जने उठे और बडे मन्दिर मे सन्ध्या की आरती मे शामिल हुए। साथ का यात्री एफिम से लगा-लगा ही चल रहा था। हर कही कधे के पास दीखता। मन्दिर मे आये, जहाँ बहुत-से यात्री थे। रूसी थे, उसी भाति और बहुतेरे देशो के लोग थे। ग्रीस के, अरमीनिया के, तुर्किस्तान के, सीरिया के। एफिम भी उनके साथ मन्दिर के तोरण-द्वार मे से दाखिल हुआ। पुजारी उन्हे तुर्की सन्तरियो के पास से होकर मन्दिर के दालान मे उस जगह ले गया जहा ईशूमसीह को क्रूस से उतारा गया था और उनकी देह का अभिषेक हुआ था। वहा बडे-बडे नौ शमादान रक्खे थे और बत्तिया जल रही थी। पुजारी ने सब उनको दिखाया

और वताया। एफिम ने अपने नाम का भी एक दीपक वहा रक्खा। फिर पुजारी सीढिया चढकर सीधे वहा उन्हे ले गया जहाँ मसीह का सलीव खडा था। एफिम ने वहाँ झुककर इवादत की। फिर वह जगह उन्हे दिखाई जहाँ धरती पाताल तक फट गई थी। फिर वह स्थान देखा जहाँ मसीह के हाथ और पैर कीलो से ठोककर सलीव मे जडे गये थे। फिर आदम की दरगाह देखी जहाँ मसीह की देह से ख़ून चूकर उस पर गिरा था। फिर वह पत्थर देखा जहा मसीह वैठे थे और सिर पर उनके काटो का ताज चढाया गया था। फिर वह खम्भा दिखाया जहाँ प्रभु को वाध कर वेत लगाये थे। फिर पत्थर पर मसीह के चरणचिन्ह के दर्शन किये। और आगे भी कुछ देखने को था कि तभी भीड मे सनसनी पड़ी और लोग मन्दिर के भीतरी आगन की तरफ भागने लगे। वहाँ एक पूजा होकर चुकी थी, अव दूसरे कीर्त्तन का आरम्भ था। एफिम भी भीड के साथ पत्थर की चट्टान मे कटे मसीह के तावूत की तरफ वढा चला।

वह साथ के यात्री से पीछा छुडाना चाहता था। मन-मन मे उसके वारे मे वुरे भाव उसमे आ रहे थे। उसे इस वात का चेत था। लेकिन यात्री साथ नही छोडता था। पास-ही-पास लगा हुआ वह भी तावूत तक आया। वे वढकर आगे की पगत मे पहुँचना चाहते थे। लेकिन अव कुछ नही हो सकता था, वे विछुड गये थे। भीड इतनी थी कि न आगे हिलना वन सकता था, न पीछे जाना मुमकिन था। एफिम अपने सामने निगाह रक्खे मन मे दुआ दोहरा रहा था। रह-रह कर अपने वटुए की सभाल भी कर लेता था। चित्त उसका दो तरफ वटा था। कभी तो सोचता कि यात्री ने उसके साथ छल किया है। पर फिर खयाल होता कि कौन जाने वह सच ही वोलता हो और सचमुच वटुआ उसका चोरी गया हो। आख़िर मेरे ही साथ ऐसा हो सकता है कि नही।

(१०)

तावूत के ऊपर छत्तीस शमादान जल रहे थे। वेदी छोटी थी और एफिम उधर ही निगाह जमाये खडा था। औरो के सिर के ऊपर से निगाह ऊँची कर वह सामने देख रहा था। कि कुछ उसे दीखा और वह

अचम्भे मे रह गया। उन शमादानो के ठीक नीचे जहाँ अखण्ड जोत जल रही थी, सबके आगे की पक्ति मे देखता क्या है कि एक बूढी उमर का आदमी, बडा-सा कोट पहने वहाँ खडा है। सिर बालो से साफ चमकीला चमक रहा है। ऐनमैन वह एलीशा मालूम होता है।

एफिम ने सोचा कि मालूम तो होता है, लेकिन एलीशा हो नही सकता। मुझसे आगे भला कैसे वह यहाँ पहुँच सकता था। हमसे पहले का जहाज तो एक हफ्ता पेश्तर ही छूट गया था। वह तो एलीशा को किसी हालत मे नही मिल सकता था। रहा हमारा जहाज़, सो उस पर तो वह था नही, क्योकि मैंने एक-एक यात्री को देख और पूछ लिया था।

एफिम यह सोच ही रहा था कि वह सामने का वृद्ध पुरुष इबादत मे झुका और फिर उठकर तीन वार तीनो दिशाओ मे झुककर उसने सब को नमस्कार किया। पहले तो सामने ईश्वर को नमन किया फिर दाँये-बाँये अपने सब भाइयो को। दाँई तरफ मुडकर जब वह व्यक्ति प्रणाम कर रहा था, उस वक्त एफिम ने साफ-साफ देखा। सन्देह को जगह न थी। वह तो एलीशा ही है। वही दाढी, वही भवे। आँखे और नाक वही। सब का सब चेहरा वही का वही। और कोई नही जी, एलीशा ही है।

एफिम को अपने बिछुडे साथी के मिलने पर बडी खुशी हुई। विस्मय भी हुआ कि उसके आगे एलीशा आया तो कैसे ?

सोचा कि शाबाश एलीशा! देखो न कैसे वह बढता हुआ ठेठ आगे पहुँच गया है। कोई जरूर साथ लेकर रास्ता बताता उसे आगे ले गया होगा। यहाँ से निकलकर उसको पाना चाहिए। और यह जो भला-मानस यात्री साथ लग गया है, सो इसे छोड एलीशा का सग पकडना ठीक होगा। उससे शायद मुझे भी आगे पहुँचने की राह मिल जायगी।

एफिम टक सीध मे निगाह जमाये रहा कि एलीशा आँख से अलग न हो जाय। पर कीर्त्तन पूरा हुआ, भीड मे हलचल हुई और सब जने ताबूत पर माथा टेकने को बढने लगे। इस धक्कम-धक्के मे एफिम को फिर भय हुआ कि कही ऐसे मे बटुआ न चुर जाय। हाथ से उसे दबाये, भीड मे कोहनी मारता, वह पीछे की ओर बढने लगा। अब तो वह बस

किसी तरह वाहर हो जाना चाहता था। वाहर खुले मे आया और वहाँ वहुत काल एलीशा की खोज मे रहा। गिरजे के अन्दर देखा, वाहर देखा। वाहर आँगन मे या धर्मशाला मे खाते-पीते, पुस्तक वेचते, या सोते उसे वहुत भाँति के वहुतेरे आदमी मिले। पर एलीशा कही नही दीखा। सो एफिम विना अपने साथी को पाये अपने ठहरने की जगह लौटकर आया। उस शाम साथ का यात्री भी फिर नही लौटा। उधार का रुपया विना चुकाये वह चला गया था और एफिम अकेला पड गया था।

अगले दिन एफिम फिर दर्शन को मन्दिर गया। अव के जहाज पर मिले एक दूसरे बूढे यात्री का साथ उसने ले लिया था। मन्दिर मे जाकर फिर उसने अगली पक्ति मे पहुँचने की कोशिश की। लेकिन भीड के दवाव मे पीछे ही रह गया। खैर, वहाँ एक खम्भे के सहारे टिक कर उसने अपनी इवादत पूरी की। पर सामने जो देखता है तो ठीक अखड ज्योति के नीचे वेदी के ऐन पास सवके आगे खडा है कौन ? --वही एलीशा। वाहे उसकी पुजारी की भाति वेदी की तरफ फैली है और सिर उसका रोशनी मे चमचम चमक रहा है।

एफिम ने सोचा कि अव के इस वार तो मै उसे खोने नही दूँगा।

सो धकियाता हुआ वह आगे वढा। लेकिन वहाँ पहुँचा तो एलीशा वहाँ नही था। अनुमान किया कि चला गया होगा।

तीसरे दिन एफिम फिर दर्शन के लिए आया और देखता क्या है कि मन्दिर मे वेदी से लगकर सवसे खास और अगली और पवित्र जगह पर सव की निगाह के वीचोवीच खडा है एलीशा ! वाहे फैली है और निगाह आकाश की ओर है। जैसे ऊपर उसे कुछ प्रकाश दीख रहा हो। और उसका साफ सिर सदा की भाँति चमकीला चमक रहा है।

एफिम ने सोचा कि इस वार तो किसी तरह मै उसे अपने से जाने नही दूँगा। जाकर दरवाजे पर खडा हुआ, जाता हूँ। फिर एक-दूसरे को पाये विना हम किसी तरह भी नही रह सकेगे।

एफिम गया और दरवाजे से लगकर खडा हो गया। ऐसे खडे-खडे दोपहर बीत गया। तीसरा पहर भी बीत चला। हर कोई मन्दिर

से जा चुका था। लेकिन एलीशा की सूरत नही दीखी, नही दीखी।

येरूशलम मे एफिम छ. हफ्ते रहा और सब धाम देखे। बेथलेहम के दर्शन किये, बेथैनी गया और जार्डन भी देखा। मन्दिर मे अपने नाम का एक दीपक छोडा। जार्डन के पवित्र जल की भरकर साथ मे शीशी ली और वहाँ की मिट्टी भी बाँध ली। और कुछ मोमबत्तियाँ भी ली जिन्हे अखड ज्योति से छूकर एकबार जगा लिया गया था। आठ जगह पर उसने अपने नाम की प्रार्थना के अर्थ दान दिया। बस राह खर्च भर को उसने पैसा पास रक्खा, बाकी सब पुन्न कर दिया। आखिर तीर्थ पूराकर अपने घर की तरफ वापिस हो लिया। जाफा तक पैदल यात्रा की। वहाँ से ओडेसा तक जहाज मे। और फिर आगे पाँव-पाँव घर चला।

(११)

जिस राह गया उसी राह एफिम लौट रहा था। ज्यो-ज्यो घर पास आता, उसपर चिंता चढती जाती थी कि पीछे घर के काम-धाम की क्या हालत हुई होगी। कहते है न कि एक साल मे कितना कुछ नही वह जाता। बनाने मे जिन्दगी लग जाती है, पर बिगड सब छन मे सकता है। सो वह सोचता था कि उसके लडके ने पीछे जाने क्या कुछ करके रक्खा होगा। कैसा मौसम वहाँ चल रहा होगा। जाडो मे चौपायो पर कैसी बीती होगी और मकान भी ठीक-ठीक पूरा हुआ होगा कि नही। एफिम जब उस जगह आया जहाँ पारसाल एलीशा बिछुड गया था तो गाँव को वह मुश्किल से पहचान सका। हालत अब कुछ-की-कुछ थी। पिछली साल तो नाज के दाने को ठिकाना न था। अब सब खुशहाल थे। फसल ऐसी भरी हुई थी कि क्या कहा जाय। अब सबके घर भरपुर गये थे और पहली मुसीबत याद भी न आती थी।

एक शाम एफिम ठीक वहाँ पहुँचा जहाँ एलीशा रुककर पीछे रह गया था। वहाँ से पहले घर के पास आना था कि एक लडकी बाहर भागती आई। सफेद फ्राक पहने वह बडी भली लगती थी।

बोली—"दादा, ओ दादा! चलो हमारे घर।"

एफिम अपनी राह बढे जाना चाहता था। लेकिन उस नन्ही नटखट ने जाने न दिया। कोट का छोर पकड लिया और हँसती हुई घर की तरफ खीच कर ले चली। वहाँ छोटा बच्चा लिये एक स्त्री मिली। उसने आवभगत के भाव से कहा कि आइये दादा, कुछ खा न लीजिए और यह रात यहाँ विश्राम कीजिए।

सो एफिम अन्दर पहुँचा। सोचा कि यहाँ एलीशा की बाबत पूछकर देखना चाहिए। मैं समझता हूँ कि पानी पीने एलीशा इसी घर की तरफ बढकर आया था।

स्त्री ने आगे आकर मेहमान का बकचा कन्धे पर से उतरवाया और हाथ-मुँह धोने को पानी दिया। फिर मेज पर बिठाकर सामने दूध रक्खा और चपातियाँ, दलिया वगैरा लाकर दिया। एफिम ने बहुत शुक्रिया माना कि चलते राहगीर पर आप ऐसी दया दिखलाती है। एफिम ने उनके इस सत्कार की बहुत तारीफ की।

लेकिन स्त्री ने मानो इन्कार मे सिर हिलाया। बोली—"यात्रियो की खातिर करने का तो हमारा धर्म है। और वजह भी है। असल मे एक यात्री ही थे जिन्होने हमे जीवन मे धरम का रास्ता दिखाया। हम ईश्वर को भूल कर रहा करते थे। सो ईश्वर ने हमे ऐसा दण्ड दिया कि बस मौत ही से बचे। पिछली गरमियो मे हालत ऐसी आ गई कि हम सब लोगो को बीमारी ने घेर लिया। बिल्कुल बेबस और मोहताज हो गये। खाने को पास दाना नही था। वह तो हम मर ही जाते, कि ईश्वर के दूत बनकर एक वृद्ध पुरुष हमारी मदद को आ पहुँचे। वह ऐसे ही थे जैसे आप। एक दिन पीने को थोडा पानी मागते आये थे, लेकिन हमारी यह हालत देखी तो उन्हे दया हो आई। फिर हमारे साथ ही कुछ दिन रह गये। उन्होने हमे खाने को दिया, पीने को दिया और-फिर हमे अपने पैरो पै खडा किया। धरती हमारी गिरवी से छुडा दी और क गाडी-घोडा खरीदकर हम को दे दिया।"

इसी समय एक बूढी माँ वहाँ आई और बीच मे बात काटकर बोली—

"अजी, हम कैसे कहे कि वह मनुष्य ही थे और ईश्वर के भेजे कोई फरिश्ते नही थे। उन्होने हम सबको प्रेम किया और करुणा की। और गये ऐसे कि हमे नाम भी नही बता गये। सो हम यह भी नही जानते कि किसके नाम की हम माला फेरे और दुआ करे। वह हालत मेरी आँखो के आगे है। मै मौत की बाट देखती वहाँ पडी थी, कि आये वह वृद्ध। उनका सिर साफ था। देखने मे कोई खास बात नही थी। आकर उन्होने पीने को पानी मागा। और मै थी कि मन की पापिनी। सोचने लगी कि जाने यह आदमी किस ताक मे यहा आया है। मै तो ऐसी थी, और देखो कि उन्होने हमारे साथ क्या किया। ठीक यही जगह जहाँ तुम बैठे हो, वही, बेच पर, हमे देखते ही अपनी कमर से सामान उतार कर रक्खा और खोलने लगे।"

तभी वह लडकी बीच मे बोली—"ना दादी, ना। पहले तो उन्होने गठरी यहाँ बीच मे रक्खी थी, कोई बेच पे थोडी रक्खी थी। बेच पे तो फिर पीछे उठाकर रक्खी थी।"

इसके बाद वे सब जन उन्ही पुरुष की याद करने लगे और उन्ही की बाबत बहस और चर्चा करने लगे,—कि उनके मुँह से क्या-क्या शब्द निकले, क्या उन्होने दिया, कहाँ वह बैठते थे, कहाँ सोते थे और किससे कब और क्या-क्या बात उन्होने की थी।

रात को घर का मर्द भी अपने घोडे पर घर आया और वह भी एलीशा के बारे मे बखान करने लगा कि कैसे वह दयावान् यहाँ रहा करते थे।

"वह न आते तो हम अधम अपने पाप के बीच मरे ही हुए पडे थे। निरास, पलपल मौत के मुह मे हम सरकते जा रहे थे। ईश्वर को कोसते और आदमी को कोसते थे। लेकिन वह दयालु आये और हमे अपने पैरो खडा किया। उनसे हमने परमात्मा को जानना जाना। उनसे हमने विश्वास पाया कि आदमी में नेकी का वास है। भगवान् उनका भला करे। हम जानवर की तरह रहते थे। उन्होने हमे आदमी बनाया।"

एफिम को खिला-पिलाकर उन्हे बिछौना बतला दिया और फिर वे खुद अपने सोने चले गये।

एफिम लेट तो गया, पर सो नही सका। एलीशा उसके मन से वाहर नही होता था। उसे स्मरण हुआ कि येरूशलम तीर्थ मे तीन वार सव से आगे के स्थान पर उसने एलीशा को देखा था।

सोचा कि एलीशा इसी भाति मुझसे आगे निकला है। भगवान् ने मेरी तीर्थ-यात्रा को तो स्वीकार किया हो या नही भी स्वीकार किया हो, पर एलीशा के पुण्य को तो प्रत्यक्ष ही उन्होने ग्रहण कर लिया है।

अगले सवेरे एफिम ने उन लोगो से विदा मागी। परिवार के लोगो ने राह के लिये साथ उसके कलेवा वाध दिया और एफिम घर की तरफ आगे वढा।

(१२)

पूरा सालभर एफिम को यात्रा मे लग गया। गर्मी लगते गया था कि उन्ही दिनो लौटा। पर जिस शाम घर पहुँचा तो उसका लडका वहाँ था नही। वाहर दारू-घर पर गया था। लौटा तो ज्यादह चढा आया था। एफिम ने उससे घर के हाल-चाल की वावत पूछा। पर साफ ही दिखाई देता था कि वाप के पीछे उसने जम कर कुछ नही किया है। पैसा जहा-तहा खर्च डाला है और काम का खयाल नही रक्खा है। सो वाप ने लडके को डाटना शुरू किया।

लडके ने भी वेअदवी से जवाव दिया। वोला—"तो तुम्ही ने यहा रह कर क्यो नही सव देखा-भाला। पैसा वाधकर आप खुद तो चल दिये तीरथ करने और अव कहते है कि कमा कर रक्खू मै।" वूढे को सुनकर गुस्सा आ गया और पीटने लगा।

सवेरे एफिम गाव के चौधरी के पास अपने वेटे के चाल-चलन की शिकायत करने गया। रास्ते मे एलीशा का मकान पडता था। वहा उसकी वीवी उसारे मे खडी थी। वोली—"आओ जी, आओ। कव आये ? क्या हाल है ? तीरथ आपका राजी खुशी तो हुआ न ?"

एफिम रुक गया। वोला—"हा, ईश्वर की दया है। तीरथ सव राजी खुशी हुआ। पर एलीशा तो बीच मे कही छूट गए कि फिर दीखे ही नही। वह कुशल से घर आगये है न ?"

स्त्री को बात करने का चाव था । बोली—"हा जी, वह वापिस घर आ गये है । आये उन्हे दिन भी हो गये । मै समझू कातिक बीते ही वह आ गये थे । भगवान् की कृपा हुई कि उन्हे जल्दी ,वापिस भेज दिया । उनके बिना यहा सब सूना लगता था । काम की तो उनसे अब बहुत आस नही है । काम की उमर उनकी गई । पर तुम जानो घर के बडे तो वही है । और वह होते है तो घर मे उछाह रहता है । और हमारा लडका तो—उसके आनन्द की क्या पूछो । बोला—'भाभी, सूरज छिप जाता है न, सो पिताजी के बिना बस वैसी हालत हो जाती है जैसे धूप उठ गई हो । अजी, उनके पीछे तो सब बिरथा लगता है और घर मे उमग नही रहती । हम लोग सब उनका खयाल रखते है और आराम देते है । और हमे भी तो वह कितना प्यार करते है ।'"

"वह घर ही है न ?"

"हा जी, घर ही है । अपनी मधु-मक्खियो के पास होगे । वही सदा दीखते है । कहते थे इस साल खूब मधु होगा । भगवान् ने ऐसी कृपा की है कि खूब मक्खी फली है । ऐसी कि कभी उन्होने भी अपनी उमर मे नही देखी । वह कहते है कि भगवान हमारे औगुन के माफिक तो यह हमे इनाम नही दे रहे है । पर आओ, बडे जी, तुम आओ । मिलकर उन्हे बहुत खुशी होगी ।"

एफिम उधर बरामदे से मे निकलता हुआ दूसरी तरफ के घर मे गया । वहा एलीशा मिला । वही लम्बा चोगा था । न मुह ढकने को कोई जाली थी, न हाथ मे दस्ताने । पेडो के कुज के नीचे, खुले सिर, बाह फैलाये खडा था । फिम को येरूशलम के मन्दिर मे दीखे चित्र की याद हो आई । उसी भाति सिर उसका चमक रहा था और पेडो के ऊपर से छनकर आनेवाली धूप भी ठीक मन्दिर की अखण्ड-जोत सी दीखती थी । और मक्खियो ने उसके सिर के आस-पास उड-उडकर अपने सुनहरे पखो से वही के जैसा एक उज्ज्वल प्रभा-मण्डल-सा बना रक्खा था । प्रेम से सब उसके चारो तरफ मडरा रही थी और कोई काटती नहीं थी ।

एफिम रुक गया। और दूर से ही स्त्री अपने पति को पुकार कर बोली—

"अजी, देखो भी, यह बडे जी आये है।"

एलीशा ने मुडकर देखा। चेहरा उसका प्रसन्न था। धीमे से दाढी मे उलझी दो-एक मक्खियो को निकालते हुए एफिम बढकर मित्र की तरफ आया।

"आओ भाई, आओ। कहो तीरथ कुशल से तो हुआ ?"

"हा, काया तो मेरी तीरथ करने गई ही थी। और जार्डन का जल भी तुम्हारे लिए भरकर लाया हूँ। पर उसके लिए तो तुम हमारे घर आओगे, है न ? लेकिन मालिक को मेरी तीरथ-यात्रा स्वीकार हुई कि नही . "

एलीशा बोला—"अजी, तारत-तरन वही है। भगवान् का ही सब है।"

एफिम कुछ देर चुप रहा। फिर बोला—"काया तो मेरी वहा पहुँची, पर सच पूछो तो आत्मा मेरी वहाँ पहुंची कि दूसरे की, यह..."

बीच मे लीशा ने कहा—"भाई, यह तो भगवान् के देखने का काम है। भगवान् सब देखते है।"

एफिम—"और वापसी मे मै उस घर पर भी ठहरा था जहा तुम पीछे छूट गये थे ."

एलीशा सुनकर जैसे भय से भर गया। जल्दी से बोला—

"भगवान का काम है, भाई, सब भगवान का । आओ, अन्दर आओ। हमारा जरा शहद तो देखो।"

कहकर एलीशा ने बात बदल दी और घर के हाल-चाल की चर्चा छेड दी।

एफिम मन की सास मन मे रोके रह गया। फिर उस घर के उपकृत लोगो की बात उसने नही की। न यही बतलाया कि किस रूप मे परम-तीर्थ येरूशलम के मन्दिर की ठीक वेदी के पास एलीशा को उसने तीन बार देखा था। पर वह अब मन के भीतर खूब समझ गया कि ईश्वर की प्रतिज्ञा और उसके आदेश को पालन करने का सबसे अच्छा मार्ग क्या है। यही कि आदमी जब तक जीये औरो की भलाई करे और प्रेम से व्यवहार करे।

: ७ :

जीवन-मूल

एक रैंदास-मोची अपने स्त्री-बच्चो के साथ एक किसान की झोपडी मे रहा करता था। नाम था ननकू। उसके पास अपनी जमीन नही थी, न घर। रोज जूते गाठ कर रोजी चलाता था। पर काम का भाव सस्ता था और नाज का महँगा। सो जो कमाता था, खाना जुटाने मे खर्च हो जाता। स्त्री-मर्द के बीच जाडो के लिए बस एक लोई थी। वह भी चिथडे हो चली थी। यह दूसरा साल था कि दोनो सोचते थे कि अब के दोहर-लिहाफ वनवायेगे। जाडो के दिनो तक ननकू ने सो उसके लिए कुछ पैसा बचा भी लिया था। पाच का एक नोट घर के बक्स की तल-हटी मे रक्खा था और कोई इतना ही पैसा बस्ती मे लोगो से उसे लेना आता था।

सो एक सवेरे कबल-लोई लेने के खयाल से ननकू बस्ती जाने को तैयार हुआ। उसने कुर्त्ता पहना, उस पर बीबी के बदन की मिरजई, और ऊपर एक गाढे की चादर डाल ली। नोट जेब मे रक्खा, झाड से तोड लकडी का एक डडा सहारे को हाथ मे लिया, और कलेऊ करके राम-नाम ले रवाना हो लिया। सोचा कि जो पाच रुपये बस्ती मे लेने आते है वे भी उगाह लूगा। सो पाच तो वो, पाच ये—दस रुपये मे जाडे के लिए खासे गर्म कपडे हो जायेगे।

बस्ती मे आया और अपने कर्जदार एक किसान के घर गया। लेकिन किसान घर पर मिला नही। स्त्री थी, सो स्त्री ने वचन दिया कि पैसा अगले हफ्ते मिल जायगा, मै खुद तो दे कहाँ से सकती हूँ। तब ननकू दूसरे द्वारे पहुँचा। उस आदमी ने भी कसम दिलाकर कहा कि इस वक्त पास पैसा है नही, नही तो मै क्या मुकरनेवाला था। ये पाच आने है,

चाहो तो ले जाओ। हालत यह देख ननकू ने कोशिश की कि कुछ तो नकद दे दू, बाकी की उधारी हो जाय, और ऐसे एक लोई भी ले ही चलू। लेकिन दुकानदारो मे से किसी ने भी उसका भरोसा न किया। कहा कि पैसा ले आओ, फिर मन-पसन्द लोई छाँट ले जाना। तुम जानो वसूली मे भाई, बडी मेहनत लगती है।

नतीजा यह कि वस्ती मे ले-देकर जो ननकू ने कमाई की सो कुल जमा पाँच आने ! हा, एक आदमी ने अपना जोडा भी दिया था कि इसके तले मोटा चमडा लगाकर ठीक कर देना।

ननकू का मन इस पर ढीला हो आया। पाँच आने जो मिले थे, उन्हें दारू मे फूंक, विना कुछ लिये दिये, खाली हाथ वह घर को वापिस चल दिया। सवेरे आते उसे सरदी लगी थी; लेकिन अव दारू चढाने के वाद वे-कपडे भी उसे कुछ गरमी मालूम होती थी। हाथ की लकडी को धरती पर पटकता हुआ, दूसरे हाथ मे जूता-जोडा लटकाये, अपनेआप से वात करता हुआ, ननकू चला जा रहा था।

"कवल नही है, न लोई, तो भी खासी गरमाई आगई। एक घूट क्या लिया कि नस-नस की ठड भी भाग गई। अजी, क्या ज़रूरत है लोई की। मजे मे चल रहा है। फिक्र काहे की। मैं तो ऐसा ही आदमी हूँ, फिक्र नही पालता। परवाह क्या, विना लोई मज़े मे कट जायगी। क्या है, अहँ, छोडो भी। पर वीवी झीकेगी, झिडकेगी...ज़रूर झिडकेगी। और सच तो है। यह वेशक शर्म की वात है। आदमी दिन भर काम करे और उसे मजूरी न मिले !...ठहरो, अगर तुम पैसा नही देते तो क्या समझा है ! मै चमडी उधेड दूगा। देख लेना जो न उधेडू। मेरा नाम ननकू है। क्या ? देने के नाम पाँच आने ! पाच आने का भला बन क्या सकता है ? सिवा इसके कि चुल्लू ताडी पीली जाय। आए कहने, तगी है। होगी तगी। लेकिन हम ? हमारी तगी भी कोई पूछना है ! तुम्हारे पास मकान है, वगिया है, सब है। मेरे पास जो पहने खडा हूँ, वही है। तुम्हारे पास अपनी खेती का नाज है। मुझे एक-एक दाने का पैसा देना होता है। कुछ करूँ, नाज तो चाहिए ही। और खाली रोटी

के लिए काम मे पसीना बहाता हूँ तो नही जुडती है। तीन रुपये की मजूरी हफ्ते मे बनती होगी। हफ्ते का अन्त आया कि चून ख़तम। वह तो जैसे-तैसे रुपया-धेली ऊपर बना लेता हूँ तो काम चलता है। नही तो बस राम का नाम। सुनते हो जी, जो हमारा लेना आता है अभी रख दो। हील-हुज्जत न चलेगी।"

यह कहता-सुनता वह सडक के मोड तक आगया था। वहा था एक शिवजी का मन्दिर। देखता क्या है कि शिवालय के पिछवाडे धौला-सा कुछ दीखता है। दिन का चादना धीमा हो रहा था, उसमे ननकू ऑख गाडकर देखने लगा कि वह धौला-धौला क्या है। पर उसे पहचान कुछ नही आया। सोचा कि जाते वक्त तो यहाँ कोई सफेद पत्थर था नही। क्या फिर बैल है ? लेकिन बैल भी नही है। सिर तो आदमी का-सा मालूम होता है। पर इतना सफेद! और आदमी का इस वक्त यहा काम क्या है ?

पास आया तो साफ-साफ दिखाई देने लगा। अचम्भा देखो कि वह सचमुच आदमी था। जीता हो, चाहे मुर्दा, उघाडे बदन मन्दिर की दीवार से सटा बैठा था। हलन-चलन का नाम नही। ननकू को डर लग आया। सोचा कि किसी ने उसे मार कर कपडे खोस लिये है और वहाँ छोड दिया है। मैने कुछ छेडा तो मुसीबत मे ही पडना होगा।

सो वह ननकू देखी-अनदेखी कर आगे बढ लिया। वह उधर से फेर देकर निकला जिससे आदमी फिर उसे दिखाई ही नही दिया। कुछ बढ गया, तब उसने पीछे मुडकर देखा। देखता क्या है कि वह आदमी दीवार से लगा हुआ, अब झुका नही बैठा है, बल्कि चल-फिर रहा है। कही वह मेरी तरफ तो नही देख रहा है ?

उसको पहले से भी ज्यादा भय हुआ। सोचा कि मै वापिस उसके पास चलू, या कि अपनी राह बढता जाऊ। पास गया तो जाने क्या मामला निकले। उसमे जोखिम भी हो सकती है। जाने कौन बला है। यहाँ गुजान में किसी नेक इरादे से तो वह आया न होगा। पास जाने पर हो सकता है कि कूदकर मेरा गला धर दबाये और भागने को भी रास्ता न

रहे । यह भी नही, तो ऐसे आदमी का मै करूँगा क्या । मेरे सिर वह बोझ ही हो जायगा, और क्या ? नग-धडग, भला उससे मेरा होगा क्या ? अपने बदन के कपडे तो उतारकर मै उसे दे नही सकता । सो अपने राम मै चला ही चलू ।

यह सोचकर ननकू बढा ही चला । मन्दिर पीछे छूट गया । कि तभी उसके भीतर दूसरा खयाल आया । बीच सडक रुककर उसने अपने से कहा कि ननकू, तू यह कर क्या रहा है ? क्या जाने वह आदमी भूखा मर रहा हो, और तू डर के मारे पास से कतराकर निकला जा रहा है ! क्या तू भी ऐसा मालदार हो गया कि चोर-डाकू का डर लगे ? और ननकू, तेरे लिए यह शर्म की बात है ।

यह कहकर ननकू वापिस लौट चला और उस आदमी के पास पहुचा ।

(२)

पास पहुँच जो देखा तो जवान आदमी है, तन्दुरुस्त, और शरीर पर कोई चोट-रोग का निशान नही है । पर सर्दी के मारे ठिठुरा जा रहा है और सहमा हुआ है । वहा दीवार से कमर टिकाये चुपचाप बैठा है, ननकू की तरफ आख उठाकर नही देखता । जैसे कि उसमे इतना दम ही नही है । ननकू और पास गया तब उस आदमी को चेत होता मालूम हुआ । सिर मोडकर उसने आँखे खोली और ननकू की तरफ देखा । उस एक नज़र पर ननकू तो निछावर हो गया । वह तो जैसे निहाल हो आया और उसके मन को यह आदमी एकदम भा गया । उसने हाथ की जूता-जोडी जमीन पर रख दी । दुपट्टा उतार कर वही रख दिया और मिर्जई भी उतारने लगा । बोला—

"सुनो दोस्त, कहने-सुनने की बात नही है । अब चटपट ये कपडे पहन डालो ।"

कहा और बाँह से पकड कर उसने अजनबी को उठाया । खडे होने पर ननकू ने देखा कि उसका शरीर साफ और स्वस्थ है । हाथ-पैर का बनाव सुघड, और चेहरा भला, भोला और सुन्दर है । ननकू ने अपनी मिर्जई उसके कन्धे पर डाल दी । लेकिन उस भले आदमी को आस्तीन मे बाँह करना

न आया। खैर, ननकू ने खुद मिर्जई पहना दी, दुपट्टा लपेट दिया और जूता पहना दिया।

ननकू ने सिर की टोपी भी उतार उसको दे देनी चाही। लेकिन इसमे उसके अपने सिर को बडी ठड लगती। उसने सोचा कि एह, मेरा सिर खल्वाट है और उसके बडे-बडे घुघराले बाल है। इससे टोपी अपने सिर पर ही रहने दो। बोला—"अच्छा दोस्त, अब जरा चलो-फिरो। ऐसे गरमी आयेगी। बाकी फिर देखेगे। चल सकते हो न ?"

अजनबी खडा हो गया और सदय भाव से ननकू को देखने लगा। लेकिन मुह खोलकर शब्द वह कुछ भी नही कह सका।

ननकू ने कहा, "भाई, बोलते क्यो नही हो ? यहा सरदी बहुत है। ठिठुर जाओगे। चलो, घर चले। यह लो लकडी। चला न जाय तो उसे टेकते चलो। लेकिन बढे चलो। बढाओ, बढाओ कदम।"

आदमी चल पडा। वह ऐसे चला जैसे कदम तिरते हो। उसके किसी से पीछे रहने की तो बात ही न थी।

चलते-चलते ननकू ने पूछा, "भाई, तुम हो कहाँ के ?"

"मै इस तरफ का नही हूँ।"

"यही मै सोचता था। इधर के लोगो को मै पहचानता हूँ। पर वहाँ तुम शिवाले के पास कैसे आन पहुँचे ?"

"मालूम नही।"

"किसी ने तुम्हे लूटा-ठगा तो नही है ?"

"नही, सब ईश्वर का दड है।"

"सो तो है ही। वह सब का मालिक है। तो भी कुछ खाने और कही सिर टेकने को जगह पाने की तदबीर तो करनी ही होगी न। तुम्हे जाना कहाँ है ?"

"मुझे सब जगह समान है।"

ननकू को अचरज हुआ। आदमी वह दुष्ट नही मालूम होता था। कैसा मीठा बोलता था। लेकिन उसका अता-पता जो न था। तो भी ननकू ने सोचा कि कौन जानता है बिचारे के साथ क्या अनहोनी हुई हो।

यह सोच उस अजनवी आदमी से उसने कहा—"अच्छा, ऐसा है तो मेरे साथ घर चलो। वहाँ थोडा आराम करना, फिर देखा जायगा।"

यह कहकर ननकू घर की तरफ चल दिया। नया आदमी साथ-साथ था। हवा तेज हो चली थी। ननकू को अकेले कुरते मे सरदी लग आई। नशा छूट रहा था और अव ठण्ड ज्यादा सताती थी। तो भी सीटी वजाता अपने वह चला जाता था। पर रह-रहकर उसे सोच होता था कि घर मे कैसी वीतेगी! चला था कम्वल लेने, आ किस हाल मे रहा हूँ! ख़ाली हाथ तो हूँ ही, तिस पर वदन की मिर्जई वदन पर नही है। और भी वढकर यह कि साथ एक आदमी लिये आ रहा हूँ जिसका अता-न-पता और जिसके पास कपडा न लत्ता। मन्नो भी क्या कहेगी? निश्चय वहुत खुश तो होनेवाली वह है नही।

यह सोच-सोचकर उसका मन वैठा जाता था। पर जव वह इस अजनवी आदमी की तरफ देखता और उसकी हालत को और उसकी भीगी कृतज्ञ निगाह को याद करता तो उसे खुशी और हौसला भी होता था।

(३)

उस दिन सवेरे ही ननकू की वीवी ने सव काम पूरा कर लिया। पानी ले आई, वच्चो को खिला-पिला दिया खुद खा-पीकर निवट चुकी और चौका-वासन भी सव कर डाला। फिर वैठी सोचने लगी कि शाम को खाना वनाऊँ कि नही। अभी रोटी तो काफी वची है। अगर कही ननकू ने वस्ती मे ही कुछ खा-पी लिया तो फिर यहाँ क्या खायँगे। फिर तो कल के लिए भी यही रोटी चल जायँगी।

यह सोचकर उसने वची रोटियो को हाथो पर लेकर जैसे तोला। वोली—"वस अव आज और नही वनाऊँगी। घर मे आटा भी वहुत नही वचा है। तो भी यह इतवार तो इसमे निकालना ही है।"

सो मानवती ने रोटी अलग ढककर रख दी और पति का कुरता ठीक करने वैठ गई। काम करती जाती थी और सोचती जाती थी—"जाडो के लिए वह लोई भी ख़रीदकर लाते होगे।" वह सोचने लगी, पर कही

दुकानदार उन्हे ठग न ले। वह सीधे बहुत है। छल-कपट जानते नही। एक बच्चा भी उन्हे बेवकूफ बना सकता है। दस रुपए पास है—कोई कम रकम नही है। लोई और दोहर उतने मे दोनो हो सकते है। बिना कपडे जाडो मे चलेगा कैसे ? लोई होगई तो ठीक हो जायगा। नही तो बाहर कही निकलने के लायक भी हम नही। पर देखो जी, उनको भी कि जो था सब कपडा अपने बदन पर वही लेते बने। कुछ नही छोड गये। मेरी मिर्जई भी नही छोड गये। कब आयेगे ? ऐसे बहुत सवेरे तो नही गये, पर वक्त हो गया है, अब उन्हे आना ही चाहिए। ओ राम, कही बहक न गये हो। ताडी की गध. ."

यह सोच रही थी कि बाहर दरवाजे पर कदमो की आहट हुई। सुई को वही कपडे मे उडस मानवती उठकर दरवाजे की तरफ लपकी। देखती क्या है कि एक छोड दो आदमी है। एक तो ननकू है, दूसरा उसके साथ कोई और भी है। उसके सिर पर टोपी है नही, और ऊँचे जूते चढाये हुए है।

मानवती ने फौरन ताड लिया। ताडी की गन्ध आती थी। सोचा कि हज़रत ने पी दीखती है। और जब देखा कि बदन पर मिर्जई नही है, दुपट्टा नदारद है, लोई-वोई भी कोई साथ नही दीखती है, और आकर सिमटे-से चुप खडे है, तो उसका दिल निराशा से टूट आया। सोचा कि मालूम होता है कि रुपया सब दारू पर उडा डाला है और कहीके उठाई-गीरे इस आदमी के साथ मौज-चैन उडाई गई है। और अब उसे ले आये है मेरे सिर पटकने को !

द्वार की राह छोड उसने दोनो को अन्दर आने दिया। पीछे खुद आई। देखा कि दूसरा आदमी नाजुक बदन का है, जवान है, और मेरी मिर्जई उसके तन पर है। नीचे उसके कुरता न कमीज, न सिर पर टोपी। आकर सोक-सा सीधा खडा हो गया है, न हिलता है न ऊपर देखता है। मानवती ने सोचा कि जरूर कोई बदकार है। नही तो ऐसा डरता क्यो ?

वह गुस्से मे एक तरफ खडी हो गई, कि देखूँ, ये क्या करते है।

ननकू ने टोपी उतारी और खटिया पर ऐसे आ बैठा जैसे कोई खास बात न हुई हो, सब ठीक ही ठाक हो।

बोला—"मन्नो, खाना हो तो लाओ कुछ दो न !"

मानवती कुछ बुदबुदा कर रह गई । हिली-डुली तक नही । एक को देखा, फिर दूसरे को देखा । फिर माथा पकड चुप रह गई । ननकू ने देखा कि पत्नी बिगडी हुई है । उसने इस बात को दरगुजर कर देना चाहा, जैसे कुछ न हुआ हो । अपने साथी की बाह पकडकर कहा—"अरे, बैठो भी । अब कुछ खाओगे कि नही ?"

सो वह अजनबी आदमी भी पास ही खाट पर बैठ रहा ।

ननकू ने कहा—"कुछ हमारे लिए पकाकर नही रक्खा है क्या ? न हो तो वैसा कहो ।" मानवती का गुस्सा उबल पडा । बोली, "रक्खा है पका कर, पर तुम्हारे लिए नही । मालूम होता है अकल तो तुम दारू के साथ पी आये हो । लेने गये थे लोई-कपडे, आये तो पास की मिरजई भी गायब । फिर साथ मे लिये आ रहे है जाने किस उठाईगीरे को, पास जिसके तन ढँकने को भी चिथडा नही । सुनते हो, तुम-जैसे लतखोरो के लिए मेरे पास कोई खाना-वाना नहीं है ।"

"बस, बस करो, मानवती । बेमतलब ज्यादा जबान नहीं चलाया करते । भला, पूछ तो लिया होता कि ये कैसे आदमी है, कौन है—"

"तो लो, पहले पूछती हूँ कि बताओ तुमने रुपयो का क्या किया है ?"

ननकू ने जेब से पाँच का नोट निकाला और तह खोलकर सामने कर दिया ।

"यह पाँच का नोट है । बसी ने कुछ दिया नही । जल्दी देने कहता है ।"

मानवती का गुस्सा कम नही हुआ । देखो न, लोई तो लाना कैसा, खुद अपनी मिर्जई जो तन पर रहने दी हो । वह भी इस फकीर को दे डाली । फिर उसीको साथ लेते आये है घर !

उसने नोट को ननकू के हाथ से झपट लिया और सम्भाल कर उसे अन्दर रखने चली गई । बोली—"मेरे पास नहीं है खाना देने को । दुनिया के तमाम नगे बदकारो को खिलाने को कोई मै ही नही रह गई हूँ !"

"सुनो मन्नो, जरा तो चुप रहो । कुछ दूसरे आदमी की भी सुनो ।"

"बडी सुनूँ। नशेबाज़ से मिल गई बडी अकल। वह जभी तो मैं तुम्हे ब्याहना नही चाहती थी। शराबी वदखोर! मेरी माँ ने जो दिया, सब पी डाला। अब लोई लेने गये, उसे भी पीकर खत्म किया।"

ननकू ने बहुतेरा कहना चाहा कि कुल पाँच आने मैंने खर्चे हैं, और कि कैसे और कहाँ यह आदमी मिला और क्यो साथ है। लेकिन मानवती ने न एक कहने दी, न एक सुनी। वह एक के बदले दस कहती थी। और दसियो वरस पुरानी जाने कहाँ-कहाँ की गडी वाते उखाड कर बीच मे ले आती थी।

वकते-भोकते उसने तेजी मे आकर ननकू को बाह से पकड खीचा। कहा कि लाओ, मेरी मिर्जई दो। वह अकेली तो मेरे पास है, उसे भी छीन ले गये, हाँ—तो, और दूसरे को दे डाला। अभी मैं उतरवा लूँगी। समझते हो?—अभी, अभी। सत्यानासी कहीके!

ननकू ने कहा—"ले, ले।"

और उसने जोर से झिटककर अपना कुर्त्ता बदन से खीचा।

मानवती चिल्लाई—"इसका क्या करूँगी मैं, नास-जाये!"

लेकिन तैश मे ननकू ने कुर्त्ता तन से उधेड ही डाला। अलग खीच-कर उसे मानवती के सिर पर दे मारा।

मानवती कुर्त्ते को लेकर झीकने लगी। वह सामने से चली जाना चाहती थी, पर नही भी चाहती थी। असल मे किसी तरह गुस्सा निकाल कर वह खत्म कर देना चाहती थी। गुस्से मे उसे तसल्ली नही थी। और यह भी उसे मालूम हो रहा था कि इसमे उस विचारे दूसरे आदमी का कोई कसूर तो है नही।

(४)

आखिर रुककर बोली—"अगर वह भलामानस होता तो उघाडे बदन न होता। उसकी देह पर कुर्त्ता तक तो नही है। और ठीक-ठिकाना होता तो तुम्ही न वतला देते कि कहाँ और कैसे मिला?"

ननकू—"यही तो वतला रहा हूँ। सडक का वह पहला मोड पडता है कि नही, वही शिवाले पर मै पहुँचा कि यह आदमी वहाँ वैठा था। वे-

कपडे, मारे जाडे के ठिठुरा जा रहा था। भला यह मौसम है वदन उघाडे वैठने का ? यह तो ईश्वर की मर्ज़ी जानो कि मै वहाँ पहुँच गया। नही तो वह वचता नही। तव मै क्या करता ? हमे किसीके मन का या करनी का क्या पता है। न जाने क्या किसीके साथ वीती हो ! सो मैने उसे ढारस दिया, कपडा दिया, और उसे साथ ले आया। इस पर गुस्सा मत करो, मानो। गुस्सा पाप है। आखिर एक दिन हम सवको काल के गाल मे जाना है कि नही ?"

मानवती के मुह तक फिर क्रोध के वचन आये, लेकिन उस नये आदमी को देखकर चुप रह गई। वह खटिया की पाटी पर वैठा था। हिलना न जुलना, वाहो मे घुटने पकडे, सिर छाती पर डाले, आँखे वन्द, ऐसा वैठा था कि शिथिल। माथे पर भौहो के वीच जैसे उसके डर की सिकुडन थी। सो देख मानवती चुप रह गई।

ननकू ने कहा— 'वताओ, तुम्हे विल्कुल ईश्वर का खयाल नही है ?"

मानवती ने ये वचन सुने। फिर नये आदमी को देखा तो एकाएक उसका जी उसकी तरफ कोमल हो आया। वह अन्दर गई और चौके मे से खाने को ले आई। वही खाट पर थाली रख दी और पानी के गिलास भी रख दिये।

वोली—"लो, भूख हो तो यह लो। अव खाते क्यो नही ?"

ननकू ने अपने साथी को कहा—"सुनते हो, भाई, लो, शुरू करो।"

रोटी तोडी और मठे के साथ मिलाकर दोनो जने खाने लगे। मानो आँगन मे वोरी डाल, अलग वैठ गई और हथेली पर सिर रक्खे वह इस अजनवी को देखने लगी। देखते-देखते इस आदमी के लिए उसके मन मे करुणा भर आई। जैसे उस पर प्यार ही आने लगा। इसी समय उस आदमी का चेहरा खिल आया। भवे पहले की तरह सिकुडी न रही, आँखे उठाकर उसने मानो की तरफ देखा और मुस्करा दिया।

मानो का जी हलका हो गया। खाने के वरतन उसने हटा दिये और फिर उस नये आदमी से वातचीत करने लगी।

पूछा—"कहाँके रहने वाले हो ?"

"यहाँका नही हूँ ।"

"फिर इस राह कैसे आ लगे ?"

"कुछ कह नही सकता ।"

"ऐसा हाल तुम्हारा क्यो है ? किसीने लूटा-लाटा तो नही ?"

"जी, सब दण्ड परमात्मा का है ।"

"और वहाँ तुम नगे पडे थे ?"

"जी, कपडे विना ठिठुरा जाता था । इन्होने मुझे देखा और दया की । अपने कपडे उतार मुझे दे दिये और यहाँ घर मे ले आये और आपने मुझे यहा भोजन दिया और मुझपर कृपा की । ईश्वर आपकी वढवारी करेगा ।"

मानवती उठी और जो ननकू का कुर्त्ता सभाल रही थी, लाकर उस आदमी को दे दिया । साथ कहीसे धोती-जोडा भी निकाल लाई ।

वोली, "यह लो, भाई । पहन लो । अच्छा सोओगे कहाँ ? खैर, जगह पडी है, पुआल है ही । सो जी चाहे जहाँ सोओ ।"

उसने कपडे पहन लिये और जाकर भीतर कोठरी मे पुआल पर लेट गया । मानो ने फिर घर की चीज-वस्त सभाली, और दीया कर वह भी खटिया पर पहुँच गई ।

उसी चीथडा रजाई को पति-पत्नी दोनो जने ऊपर ले लेट रहे । लेकिन मानवती को नीद न आई । वह आदमी उसके मन से वाहर ही नही होता था । सोचती थी कि घर मे सव रोटी खतम हो गई है, कल को चून भी नही वचा है और ले-दे के जो कपडे वचे थे सो उसको दे देने पडे है । इसपर थोडा उसका मन मन्द होता था । लेकिन जब उस आदमी की मुस्कराहट की याद आती थी, तो मन खुशी से खिलने को होता था ।

सो देर तक मानवती जगती रही । देखा कि ननकू भी जग रहा है । रजाई उसने उसकी तरफ करके कहा—

"ननकू !"

"हा ।"

"रोटी तो सब चुक गई। चून दो-एक मुट्ठी बचा होगा। अब कैसे होगी ? झुनिया मौसी से आटा उधार लेना होगा, और क्या ?"

"अरे, जो जिलाता है वह पेट भरने को भी देगा।"

स्त्री फिर कुछ देर सोचती जगती पडी रही। अनन्तर बोली—"आदमी वह भला मालूम होता है। फिर बताता क्यो नही कि है कौन ?"

"कोई बात होगी।"

"ननकू !"

"हा।"

"क्यो जी, हम देते है, तो फिर हमे कोई कुछ क्यो नही देता ?"

ननकू को इसका कोई जवाब नही जुडा। उससे बोला—"ऊँह, छोडो भी, सोओ, सोओ।" और करवट ले वह सो चला।

(५)

सवेरे ननकू उठा। बच्चे अभी सोये थे। स्त्री कही पडोस मे आटे का बन्दोबस्त करने गई थी। साथ का आदमी अकेला ओसारे मे उन्ही कपडो मे बैठा आस्मान को देख रहा था। चेहरा उसका कल से खुला हुआ और खुश था।

ननकू ने कहा—"सुनो दोस्त, पेट को खाना चाहिए, तन को कपडा। इसके लिए उपाय है, मेहनत। सो काम से रोजी चला करती है। बोलो, कुछ काम-धाम जानते हो ?"

"जानता तो मै कुछ नही हूँ।"

ननकू को यह सुनकर अचरज हुआ। लेकिन बोला—"कोई सीखने वाला हो तो सब सीख सकता है।"

"अच्छी बात ह। सब काम करते है, मै भी करूँगा।"

"तुम्हारा नाम क्या है ?"

"नाम !—मगल।"

"अच्छा मगल, तुम अपनी बाबत कुछ नही बताते तो जाने दो। तुम जानो तुम्हारा काम ! लेकिन गुजारे के लिए उद्यम तो कुछ करना होगा न। जैसे मै बताऊँ करते चलोगे तो तुम्हारे रहने और खाने-पीने के

वन्दोवस्त मे हमे कोई अड़चन नही होगी ।"

"परमात्मा की दया हुई तो मैं काम सीखता जाऊँगा । भगवान आपका भला करे । मुझे बताते जाइये ।"

ननकू ने सूत लिया, पैर के अगूठे से बाधा, और उसे बँटने लगा । बोला—

"देखते हो न ? कुछ भी तो मुश्किल नही है ।"

मगल गौर से देखता रहा । फिर उसी तरह अगूठे मे सूत बाध वह भी बटने लगा । न कुछ मे यह उसे आ गया और सूत उसने अच्छा बट लिया ।

फिर ननकू ने बताया कि कैसे मोम से इसे चिकना करते हैं । यह भी मगल सीख गया । फिर बताया कि कैसे फदा डालते है, कैसे सीते है । यह भी मगल आसानी से सीखता चला गया ।

ननकू जो बताता, मगल झट समझ जाता । तीन दिन के बाद तो मगल ऐसा काम करने लगा मानो जिन्दगी भर यही करता रहा हो । लगन से सब दिन वह यही किया करता और थोडा खाता । काम के वाद अपने चुपचाप आसमान की तरफ देखने लगता । वह शायद ही कही इधर-उधर जाता था । बस काम जितनी वात करता था । न हसी, न मजाक, न कुछ । पहले दिन जव मानवती ने उसे खाने को दिया था, उस वक्त को छोड फिर वैसी मुस्कराहट भी उसके चेहरे पर नही दीखी ।

(६)

दिन पर दिन चलते गये । इस तरह साल निकल गया । मगल ननकू के साथ रहता और काम करता । उसका नाम सरनाम हो चला था । लोगो मे होगया था कि ननकू का आदमी यह मगल जैसे जूते सीता है, वैसा आस-पास क्या दूर तक भी कोई नही सी सकता । काम ऐसा खूबसूरत और मजबूत और सुबुक कि क्या बात । सो ननकू के यहाँ दूर-दूर के लोग जूते बनवाने आने लगे । इससे ननकू की हालत सुधर आई और खुशहाली वढने लगी ।

एक वार जाडो के दिन थे । ननकू और मगल काम करने बैठे थे ।

तभी दो घोडो की वग्घी टनन-टनन करती हुई उनके गाव में आई। उन्होने झाक कर देखा। देखते क्या है कि वग्घी उनके द्वार पर आकर रुक गई है और एक वर्दीदार कोचवान ने गाडी के रुकते ही चट से नीचे कूदकर दरवाजा खोल दिया है। दरवाज़े मे से कीमती कपडे पहने कोई रईस आदमी उतरे और उसी घर की तरफ वढे। मानवती ने झट-पट आकर अपने घर के दरवाजे चौपट खोल दिये। सज्जन को अन्दर आने के लिए दरवाजे मे झुकना पडा। फिर आकर जो खडे हुए तो सिर उनका छत को छूता मालूम होता था और जैसे वह सारी जगह उनसे भर गई थी।

ननकू ने उठकर सलाम किया। वह अचम्भे से इन्हे निहार रहा था। इनके जैसा आदमी उसने नसीव मे नही देखा था। वह खुद दुवला था। मगल की देह भी इकहरी थी और मानवती के तो हाड निकल रहे थे। पर यह सज्जन जैसे दूसरी दुनिया के थे। चेहरा सुर्ख, दोहरी देह, गर्दन ऐसी कि क्या पूछिए। पूरे देव मालूम होते थे।

सज्जन ने ऊपर का चोगा उतारा नही कि उसे पास खडे नौकर ने हाथो-हाथ सभाल लिया। वह वोले—"तुम मे कौन है जिसका जूता मशहूर है ?"

ननकू ने आगे वढकर और झुककर कहा, "जी, हाजिर हूँ।"

तव सज्जन ने जोर से पुकार कर कहा—"ऐ छोकरा, वह चमडा इधर तो लाओ।"

नौकर चमडे का वडल लेकर दौडा आया।

"खोलो।"

नौकर ने खोला। सज्जन ने छडी से चमडे को दिखाते हुए कहा—"देखते हो, यह चमडा है।"

"जी।"

"जी नही, जानते हो यह कैसा चमडा है ?"

ननकू ने हाथ से टटोलकर चमडे को देखा। वोला—"अच्छा चमडा है।"

"अच्छा है ! बेवकूफ, ऐसा कभी तुमने अपने जन्म मे देखा भी है ? असल जर्मनी का है, और अकेला यह टुकडा बीस रुपये का है ।"

ननकू सहमकर बोला—"अजी, ऐसा चमडा हमे कहा देखने को मिलता है, हुजूर !"

"हॉ, सो ही तो । अच्छा इसके जूते तैयार कर सकोगे ?"

"जी हुजूर, कर सकूगा ।"

वह सज्जन ज़ोर से बोले—"कह दिया, कर सकूगा ! अरे, कर भी सकोगे ? याद रखना कौन कह रहा है और क्या चमडा है। समझे ? ऐसा जूता बनाना होगा कि साल भर पूरा चले । न उधडे, न बिगडे । कर सकते हो तो लो चमडा और शुरू करो । नही कर सको तो सीधे कहो । समझते हो न, अगर सालभर के अन्दर जूते मे उधडन आ गई या उनकी शकल बिगड चली तो तुम हो और जेलखाना ! क्या समझे ? और जो वह फटे नही और शकल भी कायम रही, तो काम के तुम्हे दस रुपया मिलेगे । सुना ?"

ननकू तो रोब के मारे डर गया था। उससे जवाब नही दिया गया। उसने मगल को देखा और धीमे से कोहनी मारकर मानो उससे पूछा— "क्या कहते हो ? यह काम लेलूँ ?"

मगल ने सिर हिला दिया, जैसे कहा कि हा, ले लो ।

मगल की कही मानकर ननकू ने काम ले लिया । वादा किया कि ऐसे जूते तैयार कर दूगा कि साल मे न एक उनकी सीवन जायगी, न शकल मे फरक आयगा ।

तब नौकर को बुलाकर सज्जन ने कहा—"ए, हमारे पैर का यह जूता उतारो तो ।" यह कहकर बाई टाग उन्होने आगे बढा दी । फिर ननकू से कहा—"देखते क्या हो ? लो, अपना नाप लो ।"

ननकू ने कागज लिया । उसे धरती पर हाथ से बार-बार चपटा किया, झुका, अपने कुर्ते से अच्छी तरह हाथ पोछे कि सज्जन के मोजे मैले न हो जायँ, और नाप लेना शुरू किया । तली नापी, टखना नापा और पिडली का नाप देखने लगा । पर कागज़ उसका छोटा निकला ।

पिडली की मोटाई इतनी थी कि कागज ओछा रहा ।

"देखना, नाप कही इस जगह सख्त न हो जाय !"

ननकू ने उसमे फिर दूसरा कागज जोडा । सज्जन मोजे में से अपना अगूठा चला रहे थे और वहा खडे लोगो को देख रहे थे । इसी दरमियान उनकी नज़र मगल पर पडी ।

"ऐ, यह कौन है ?"

"हुजूर, यह मेरा आदमी है । यही जूते सियेगा ।"

सज्जन ने मगल को कहा—"यह ! अच्छा, सुनते हो जी तुम, देखो भूलना नही कि जूते पूरे साल भर चले। नही तो .."

ननकू ने अचरज से मगल को देखा । देखा कि मगल उन रईस को जसे देख ही नही रहा है, वल्कि उनके पार जाने कहा देख रहा है। जैसे पार पीछे कुछ सचमुच हो। कि उधर देखते-देखते मगल एकाएक मुस्करा आया और उसके चेहरे पर एक चमक झलक गई ।

उन सज्जन ने गरज कर कहा—"दात क्या निकालता है, वेवकूफ ! खयाल रखना, वक्त तक जूते तैयार हो जायें। सुना न ?"

मगल ने कहा—"जी, समय पर तैयार लीजिए ।"

"हा, तैयार ।"

यह कहा, जूते पहने, चोगा चढाया और दरवाजे की तरफ वढे। लेकिन झुकने की याद न रही और दरवाजे की चौखट खट्-से सिर मे लगी । झुझलाकर उन्होने गाली दी और सिर मलते हुए गाडी मे वैठ चलते वने ।

चले गये तो ननकू ने कहा—"क्या खूव, आदमी हो तो ऐसा हो। डील-डौल ऐसा कि देव ! एक वार घन पडे तो शायद पता न चले, ऐसी देह ! देखो न, सिर लगा तो चौखट टूटते वच गई। पर सिर का कुछ न विगडा ।"

मानवती बोली—"जो खाएगा-पीएगा वह मज़वूत न होगा तो क्या तुम होगे । ऐसी शिला को तो मौत भी छूते वचे !"

(७)

उनके चले जाने पर ननकू मगल से बोला—"दोस्त, काम ले तो

लिया, पर कही मुसीबत मे न फसना पडे । चमडा कीमती है और आदमी तुम समझो वह मुलायम नही है । सो काम मे कोई नुक्स नही रहना चाहिए । सुना न ? तुम्हारी आँख सही और हाथ सच्चे है । मै तो फूहड हुआ । इससे भाई, इस चमडे की काट-कूट को तुम्ही सभालो । मै इतने तले सिये डालता हूँ ।"

मगल ने वह चमडा ले लिया । उसे विछाया, मोडा और रापी लेकर काटना शुरू कर दिया ।

मानवती आकर देखने लगी । देख रही थी कि उसे अचरज हुआ । उसने बूट बनते देखे थे, लेकिन मगल बूट के ढग पर चमडे को नही काट रहा था, और ही तरीके पर काटने लगा था ।

उसने रोककर कहना भी चाहा, लेकिन फिर सोचा कि मै ज्यादा तो जानती नही, शायद कोई खास बूट इसी तरह से वनते हो । और मगल खुद होशियार है, सो मुझे दखल नही देना चाहिए ।

चमडा काट चुका तो मगल ने सीना शुरू किया । लेकिन दोहरी सिलाई नही की, जैसे कि बूट सिये जाते है । वल्कि इकहरी सिलाई शुरू की, जैसे कि सुवुक काम के या वचकाने स्लीपर सिये जाते है ।

ननकू ने यह देखा तो उसके मन मे वडा पछतावा हुआ । सोचा कि मगल साल भर मेरे साथ रहा है, कभी उसने गलती नही की । अब यह उसको हो क्या गया है ? वह ऊँचे पूरे बूट को कह गये थे और मगल ने इकहरी तली के सुवुक स्लिपर वना डाले है । ऐसे सारा चमडा खराब हो गया कि नही हो गया । अव उनको मै क्या जवाव दूँगा । ऐसा दूसरा चमडा कहाँसे लाकर दूँगा ।

वोला—"यह कर क्या रहे हो, मगल ! तुमने तो सारा नाश कर के रख दिया । उन्होने ऊँचे-ऊँचे पूरे वूट के लिए कहा था और यह तुमने क्या वनाकर रख दिखा है !"

ऐसे सख्त-सुस्त सुनाकर चुका होगा कि वाहर से किसीके आने की आहट आई । इतने मे तो अपने द्वार पर ही कुडे की खटखटाहट सुनाई देने लगी । देखे तो घोडे पर सवार कोई आया है ।

किवाड खुले और उन सज्जन के साथ वाला वही आदमी सामने दिखाई दिया। बोला—"जय रामजी की, चौधरी।"

"जय रामजी की भाई," ननकू बोला, "कैसे आना हुआ ?"

"मालकिन ने जूतो की बाबत मुझे भेजा है।"

"जूतो की बाबत ! क्या मतलब ?"

"अब बूटो की जरूरत नही है, क्योकि मालिक तो रहे नहीं, उन्होने प्राण छोड दिये।"

"क्या—आ !"

"वह यहाँ से घर तक भी नही पहुँच सके, गाडी मे ही मौत ने ले लिया। घर पहुँचकर हम सबने जो उन्हे उतारना चाहा तो देखते क्या है कि वह बोरी की तरह लुढके पड रहे है। उनमे जान नही रह गई थी। बदन ऐसा अकड गया था कि जैसे-तैसे गाडी से बाहर उन्हे लिया जा सका। मालकिन ने मुझे यहाँ भेजा है कि जूतेवालो से कहना कि बूट जिन्होने बनवाये थे, उन्हे अब उनकी जरूरत नही रही। लेकिन अब उनकी जगह मुलायम इकहरी स्लीपर तैयार कर दे। कहा है, जबतक वे तैयार हो, वही रहना और साथ लेकर आना। सो इस वास्ते मै आया हूँ।"

इसपर मगल ने बचे-खुचे चमडे को समेटा, स्लीपर लिये, दोनो की तह की, आस्तीन से फिर एक बार पोछकर उन्हे साफ कर दिया, और दोनो चीजे उस आदमी के हवाले की।

"अच्छा, जयरामजी की चौधरी।" कहता हुआ वह आदमी चला गया।

(८)

दूसरा साल निकला, फिर तीसरा। इस तरह ननकू के साथ रहते मगल को छ साल हो गये। वह पहले की तरह रहता था। इधर-उधर कही जाता नही था, जरूरत पर बोलता था। उस सब काल मे वह सिर्फ दो बार मुस्कराया था। एक जब कि मानवती ने उसे खाना दिया था, दूसरे जब वह रईस यहाँ आये थे। ननकू उससे बहुत खुश था और अब ज्यादे सवाल उससे नही पूछता था। उसे खयाल था तो यही कि मगल पास से कही चला न जाय।

एक दिन सब जने घर मे थे । मानवती खाने की तैयारी कर रही थी, बच्चे खेल रहे थे, ननकू एक तरफ बैठा सी रहा था और मगल एक जोडी की एडी नई कर रहा था ।

इतने मे एक लडका भागा आया और मगल की कमर पर आ कूदा। बोला—"चाचा, ओ चाचा, देखो कौन आ रही है। छोटी दो लडकी भी है । यही आ रही मालूम होती है । और चाचा ओ, एक लडकी लँगडी चलती है ।"

लडके के यह कहने पर मगल ने औजार नीचे रक्खे और सब काम छोड द्वार से बाहर देखने लगा ।

ननकू को इसपर अजरज हुआ। मगल कभी भी आँख उठाकर बाहर की तरफ नही देखता था । लेकिन अब तो जाने क्यो वह एकटक देख रहा था । ननकू ने भी उँझककर बाहर देखा । देखता क्या है कि सचमुच एक स्त्री अच्छे कपडे पहने उसीके घर की तरफ चली आ रही है । हाथ पकडे दो लडकियाँ हे । ऊनी, गर्म, सलीके के कपडे पहने है और कन्धो पर दुशाला पडा है । लडकिया दोनो एकसी है । एक को दूसरे से पहचानना मुश्किल है । लेकिन दोनो मे एक का बाया पैर खराब है और वह लगडा कर चलती है ।

वह स्त्री उन्हीके ओसारे मे आई। आगे-आगे लडकियाँ थी, पीछे वह। आकर स्त्री ने उन लोगो का अभिवादन किया ।

ननकू ने कहा—"आइये, आइये । हमारे लायक क्या काम है ?"

स्त्री बेच पर बैठ गई । दोनो लडकिया भी उसके घुटने से चिमट बैठी । वे जैसे यहा इन नये लोगो के बीच डर आई थी ।

"मै इन दोनो बच्चियो के लिए जूते बनवाना चाहती हूँ । जरा मुलायम होने चाहिए, गरमियो के लायक ।"

"जरूर लीजिए, जरूर । ऐसी बचकानी जोडी हमने बनायी तो नही है, लेकिन बना देगे । रुयेदार, सादे या फैन्सी, जैसे कहे । मेरे आदमी इस मगल के हाथ मे हुनर है—"

कहकर ननकू ने मगल को देखा । देखता क्या है कि मगल का तो

काम-धाम सब छूट गया है और उसकी निगाह उन लडकियो पर जम गई है। ननकू को अचम्भा हुआ। लडकिया नन्ही-नन्ही वडी सुन्दर थी। काली आँखे, गुलावी गाल और तन्दुरुस्त वदन। और अच्छे कपडे भी पहने थी। लेकिन ननकू को समझ न आया कि मगल यह उन्हे ऐसे क्यो देख रहा है—मानो पहले से जानता हो। वह उलझन मे पड गया, पर उन महिला से काम की वात भी चलाता जाता था। कीमत पट गई और ननकू पाँव का नाप लेने वढा। स्त्री ने लँगडी लडकी को गोद मे उठाकर कहा—"इस लडकी के ही दो नाप ले लो। एक लँगडे पैर के लिये और तीन दूसरे पैर के जूते वना देना। दोनो के एक पाँव है। जुडवाँ वहने जो ठहरी।"

ननकू ने नाप लिया और वोला—"जी, ऐसा हो कैसे गया ? कैसी सयानी सुन्दर लडकी है। क्या जनम से पाँव ऐसा है ?"

"नही, नही, उसकी माँ से ही यह टाग कुचल गई थी।"

इस काल मे मानवती भी वहाँ आ गई थी। उसे अचरज हुआ कि यह महिला कौन है और ये वच्चियाँ किसकी है। पूछने लगी, "तो क्या तुम इनकी माँ नही हो ?"

"नही, वीवी, मै माँ नही हूँ। न नाते मे कुछ लगती हूँ। मै इनको पहले जानती भी नही थी। लेकिन अव तो दोनो मेरी गोद मे है, मेरी है।"

"तुम्हारी नही है, फिर भी तुम इन्हे इतना लाड-प्यार करती हो!"

"प्यार नही तो और क्या करूँ ? दोनो को अपना दूध पिलाकर मैंने पाला है। मेरे अपना भी एक वालक था। ईश्वर ने उसे उठा लिया। पर उसका मुझे इतना प्यार नही था जितना इन नन्हियो का मोह मुझे हो गया है।"

"तो फिर ये किसके वालक है ?"

(९)

इस तरह एक वार शुरू होना था कि स्त्री पूरी ही कहानी कह चली—

"कोई छ साल होते हैं कि इनके माँ-बाप मर गये। दोनो तीन दिन आगे-पीछे इस धरती से उठ गये। मगलवार को पिता की अर्थी उठी तो वृहस्पत को माँ ने ससार तज दिया। बाप के मरने के दो दिन बाद इन वेचारे अनाथो ने जनम लिया। माँ का सहारा तो इनको एक दिन का नही मिला। हम तब उसी गाँव मे रहते थे। हमारे यहाँ खेती होती थी। दोनो हम पडौसी थे, हमारे घर के घेरे तो मिले ही हुए थे। बाप उनका अकेला-सा आदमी था और पेड काटने का काम करता था। जगल मे पेड काटे जा रहे थे कि एक के नीचे वह आगया। पेड ठीक उसके ऊपर आकर गिरा। और वह पिच गया, आते बाहर आ गई। फिर दम निकलना कै घडी की बात थी! घर तक ला न पाये कि जान जा चुकी थी। उसके तीसरे दिन माँ ने इस जुगल जोडी को जनम दिया। वह अकेली थी और गरीबनी थी। जवान या बुड्ढा, कोई उसका न था। विचारी अकेली ने इन नन्हियो को जनमा और अकेली जाकर मौत से मिल गई।

"अगले सवेरे मै उसे देखने गई, कि झोपडे मे घुसती हूँ और देखती हूँ कि उस विचारी की देह तो ठडी पडी थी और अकड गई थी। मरते समय दर्द मे करवट ली होगी कि उसमे इस बच्ची की टाँग जाती रही। फिर तो गाँव के लोग आ गये। देह को उठा अर्थी पर रक्खा और क्रिया-कर्म किया। दोनो विचारे वे नेक आदमी थे। बच्चे उनके बाद अकेले रह गये। तब उनका क्या होता? गाँव मे मै ही थी कि जिसकी गोद मे दूध-पीता बच्चा था। कोई डेढ महीने का मेरा पहलौता मेरी छाती से था। इससे उन दोनो को भी मैने ही ले लिया। गाँव के लोगो ने बहुतेरा सोचा कि क्या हो। आखिर उन्होने मुझे कहा कि भगवती, अभी-अभी तो तुम्ही इन्हे पाल सकती हो। पीछे देखेगे कि फिर क्या किया जावे। सो मै छाती का दूध पिला कर एक बच्ची को पालने लगी। दूसरी को पहले-पहल मैने दूध नही दिया। सोचती थी कि वह क्या बचेगी। लेकिन फिर मैने खुद ही खयाल किया कि वह बेचारी बेकसूर क्यो दुख पाये और भूखी रहे। सो मुझे दया आई और मै उसे दूध पिलाने लगी। इस

भाति मे तीनो को, अपने वालक को और इन दोनो को भी, अपनी छाती के दूव से पालने लगी। मेरी भरी उमर थी और मै तन्दुरुस्त थी और खाना अच्छा खाती थी। सो परमात्मा ने इतना दूव दिया कि कभी तो वह अपनेआप ही खिरने लगता था। कभी मै दो-दो को एक साथ दूव देती। एक को पूरा हो जाता, तो तीमरे को ले लेती। अव परमात्मा की लीला कि ये दोनो वच्चियाँ तो पनपती गई, और मेरा अपना वालक दो वरस का हो न पाया कि जाता रहा। उसके वाद मेरे कोई सतान नही हुई, लेकिन हम वरावर खुशहाल होते चले गये। अव मेरा आदमी एक किराने के व्यापारी का एजेण्ट है। तनखाह खासी है और हम लोग मजे मे है। हमारे अपना कोई वालक नही है और ये नन्ही मुझे न मिल जाती तो जीवन सूना ही मुझे मालूम होता। सो इनको प्यार के सिवा भला मै क्या कर सकती हूँ। यही मेरी आंखो की रोशनी है और जीवन का धन है।"

यह कहकर उस स्त्री ने लगडी लडकी को एक हाथ से गोद मे चिपटा लिया और दूसरे से उसके गाल के आँसू पोछने लगी।

सुनकर मानवती ने सास भरी। वोली—"सच है, माँ-वाप के विना जीना हो सकता है, पर ईश्वर के विना कोई भी नही जी सकता।"

इस तरह वे आपस मे वात करने लगी। कि एकाएक उस जगह जैसे बिजली की रोशनी होगई हो, ऐसा लगने लगा। सवको वडा आश्चर्य हुआ। देखते है कि ज्योति उधर से फूट रही है, जहां मगल वैठा था। सव की नजर उधर गई। देखे क्या कि घुटनो पर हाथ रक्खे मगल वैठा ऊपर की ओर देख रहा है और चेहरे पर उसके मुस्कराहट खेल आई है।

(१०)

महिला लडकियो को लेकर चली गई। तव मगल अपनी जगह से उठा। औजार नीचे रख दिये और ननकू और उसकी स्त्री के सामने हाथ जोडकर वोला—"अव मुझे विदा दीजिए। ईश्वर ने मेरे अपराध क्षमा कर दिये है। जो भूल हुई हो उसके लिए आपसे भी माफी मागता हूँ।"

सुनकर दोनो जने देखते क्या है कि मगल के चेहरे से एक आभा फूट रही है। यह देख ननकू मगल के आगे आ सिर नवाकर बोला—"मगल, मै देखता हूँ तुम साधारण आदमी नही हो। न मै तुम्हे रुकने को कहने लायक हूँ, न कुछ पूछने लायक। पर इतना बतलाओ कि यह क्या बात है कि जब तुम मुझे मिले और मै तुम्हे घर लाया तब तुम उदास मालूम होते थे। लेकिन मेरी बीवी ने खाना दिया तो तुम उसकी तरफ मुस्करा पडे और चेहरा खिल आया। उसके बाद फिर जब वह रईस बूट बनवाने आये तब तुम दूसरी बार हँसे और पहले से भी ज्यादा तुम्हारे चेहरे पर रौनक दीखी। और अब यह श्रीमती अपनी लडकियो के साथ आई कि तुम तीसरी बार हँसे और ऐसे खिल आये जैसे उजली धूप। मगल, मुझे बताओ कि तुम्हारे चेहरे पर ऐसी शोभा उन तीन बार क्यो आई और तुम मुस्कराए क्यो ?"

मगल ने उत्तर दिया—"शोभा इसलिए कि मुझे दड मिला था, सो अब ईश्वर ने मुझे माफ कर दिया है। और मै तीन बार हँसा, क्योकि ईश्वर ने मुझे तीन सत्य जानने के लिए यहाँ भेजा था, और अब मै उन्हे जान गया हूँ। एक मैने तब जाना जब तुम्हारी स्त्री ने मुझपर करुणा की। इसलिए पहली बार तो मै तब हँसा। दूसरा सत्य मैने जाना जब वह रईस यहा जूते बनवाने आये थे। इससे दूसरी बार मै उस समय मुस्कराया। और अब इन लडकियो को देखकर मैने तीसरा और अन्तिम सत्य जान लिया। इससे अब मै तीसरी बार हँसा हूँ। और मेरा दु ख कट गया है।"

इस पर ननकू बोला—"मगल, हमे बतलाओ कि ईश्वर ने तुम्हे दड क्यो दिया था और वे तीन सत्य क्या है, कि हम भी उन्हे जान सके।"

मगल ने जवाब दिया—

"भगवान् ने मुझे सजा इसलिए दी कि उनकी आज्ञा मैने टाली थी। मै स्वर्ग मे एक देवता था, पर मैने ईश्वर की आज्ञा का भग किया। ईश्वर ने मुझे एक स्त्री की आत्मा लेने भेजा था। मै उडकर धरती पर आया। देखता हूँ कि स्त्री वह अकेली है, बेहाल पडी है, और अभी हाल

जुडवाँ वच्चियो को जन्म देकर चुकी है। वच्चिया माँ के बरावर पडी अपनी नन्ही-सी जान से चिचियाकर रो रही है, पर मा उन्हे उठाकर छाती तक नही ले जा सकती। मुझे देखकर वह समझ गई कि मै ईश्वर का दूत हूँ और उसे लेने के लिए आया हूँ। सो वह रोने लगी। वोली—"ओ परमात्मा के दूत! मेरे पति की राख अभी ठडी भी नही हुई है। पेड गिरने से उसके असमय प्राण गए। मेरे न वहन है, न चाची है, न मा। इन अनाथो को पीछे देखने वाला कोई नही है। देखो, मुझे अभी मत ले जाओ। वच्चो को दूध पिलाकर पाल-पोस देने दो कि वे पैरो चल जायँ। तव वेखटके ले जाना। तुम्ही सोचो, वच्चे मा-वाप के विना भला कैसे रहेगे?"

मेरा जी पसीज आया और मैने माँ की विनती रक्खी। उठाकर एक वच्ची को मैने उसकी छाती से लगा दिया, दूसरी को उसकी वाहो मे दे दिया। वापिस आया स्वर्ग और ईश्वर के पास पहुँच कर कहा कि मै उन माँ की आत्मा को नही ला सका हूँ। पति उनका एक पेड के गिरने से हाल ही मरा है और उसके अभी दो जुडवा वच्ची हुई है। सो उसका निवेदन है कि अभी मुझे न ले जाओ। कहने लगी कि मुझे वच्चो को पाल-पोस देने दो कि वे चलने लगे, नही तो वच्चे मा-वाप के विना कैसे जियेगे? मैने इसलिए उन्हे अपना हाथ नही लगाया।

ईश्वर ने कहा—"जाओ, उस मा की आत्मा को लो और तीन सत्य सीखो। सीखो कि आदमी मे किस तत्व का वास है, आदमी का क्या वश नही है, और वह किसका जिलाया जीता है। जव ये तीन वात सीख लोगे तव ही तुम फिर स्वर्ग वापिस आ सकोगे।"

सो मै उडकर फिर धरती पर आया और मा को उठा कर चला। वच्चियाँ तव उनकी छाती से गिर गई और अतिम करवट जो ली तो देह उनकी एक वच्ची पर जा रही। उससे उसकी वच्ची की एक टाग वेकाम हो गई। मै आत्मा को लेकर ऊपर उडा कि ईश्वर के पास ले जाऊँ। पर जाने कैसा एक हवा का चक्कर आया कि मेरे डैने गिरने लगे। मै उडने मे असमर्थ हो गया। माँ की आत्मा फिर अकेली ईश्वर की तरफ उड गई और मै धरती पर सडक के किनारे आ गिरा।

(११)

ननकू और मानवती अब समझे कि कौन था जो इन सब दिन उनके साथ घर मे रहा-सहा था और घर मे खाया-पिया था। वे गर्व और भय से भर आये।

देवदूत ने आगे कहा—"मै अकेला पडा था। अनजान, न कपडा था न कुछ। आदमी होने से पहले मै सर्दी या भूख नही जानता था। आदमी की कोई जरूरत नही समझता था। लेकिन वहा भूख मालूम हुई और मै ठड मे ठिठुरा जाने लगा। जानता नही था कि क्या करूँ। तभी पास ईश्वर के नाम पर बनाया गया आदमियो का एक मन्दिर मुझे दिखाई दिया। मै वहाँ गया कि शरण मिलेगी। पर मन्दिर मे ताला जडा हुआ था और मै अन्दर जा नही सका। सो हवा की शीत से बचने के लिए मै मन्दिर के पीछे दीवार के सहारे उकडू बैठ गया। साझ हो रही थी। मै भूखा था। दर्द और ठण्ड से बदन मेरा अकडा जाता था। तभी एकाएक सडक पर आते हुए एक आदमी की आहट मुझे मिली। हाथ मे उसके एक जोडी जूते लटके थे और वह अपने आप से बात करता हुआ जा रहा था। खुद आदमी होने के बाद पहली बार मैने मनुष्य का चहरा देखा। वह मुझ बडा भयानक मालूम हुआ और उधर से मैने आँखे मोड/ली। वह आदमी बात करता जाता था कि कैसे जाडो के लिए मुझे कपडे बनवाने है, और बीबी के लिए क्या करना है, और बच्चे के लिए क्या करना है। मै सोचने लगा कि मै यहाँ पास ही सर्दी और भूख के मारे मरा जा रहा हूँ और एक आदमी यह है कि अपने और अपनी स्त्री के लिए ही खाने-पहनने की बात सोचता है। वह मुझे मदद नही कर सकता। मुझे देखकर उस आदमी की भवे तन गईं और चेहरा भी भयावना हो आया। वह मुझे कतराकर दूसरी राह निकल गया। मेरी आस टूट चली। लेकिन एकाएक जान पडा कि वह लौटा आ रहा है। ऊपर निगाह उठाकर मैने देखा तो वह वही नही दीखता था। पहले उसके चेहरे पर मौत थी अब जीवन वहाँ था और ईश्वर की सत्ता का चिन्ह मुझे उस मुख पर मिला। वह आदमी मेरे पास आया। कपडे दिये और मुझे फिर साथ घर भी ले

आया। घर आने पर एक स्त्री मिली और मुह खुलना था कि वह मर्द से भी ज्यादह भयावनी मालूम हुई। वाणी मे उसकी मौत विराजमान थी और उसमे से चारो ओर जो यम की गध लपटे ले-लेकर फूटती थी, उसमे सास लेना मुझे दूभर हो गया। वाहर मै चाहे सर्दी मे ठिठुर मरूँ लेकिन मुझे वह अपने घर से निकाल वाहर करने को तैयार थी। मै जानता था कि अगर ऐसा हुआ तो इसमे उसका अनिष्ट है। लेकिन पति का उसे ईश्वर की याद दिलाना था कि वही स्त्री एकदम वदल गई। फिर जब वह मेरे लिए खाने को लाई और मुझे करुणा की आँखो से निहारा तब मौत का वास उसमे नही था, और उसमे विद्यमान ईश्वर की महिमा मुझे दिखाई दे आई। उस समय मुझे पहली सचाई की वात याद आई। ईश्वर ने कहा था कि जानो, आदमी के अन्तर मे किसका वास है। और मैने प्रतीति पाली कि आदमी के अन्दर प्रेम का वास है। मुझे हर्प हुआ कि ईश्वर की कृपा दृष्टि मुझ पर वनी है और सत्य-दर्शन में वह मेरे सहायी है। तव सहसा मुझसे मुस्कराहट फूट गई। लेकिन अभी सव मै नही जाना था। जानना शेप था कि क्या आदमी का वश नही है और आदमी किसके जिलाए जीता है।

'"मै फिर आप लोगो के साथ रहने लगा और एक साल वीत गया। तव एक आदमी आया। वह जूते वनवाना चाहता था जो एक साल तक काम दे। न वीच मे कहीसे उधडे, न विगडे। मैने उसकी ओर देखा। एकाएक देखता क्या हूँ कि उस आदमी के ठीक पीठ-पीछे मेरा ही एक साथी है, जो उसे उठा लेने को आया हुआ है। मेरे सिवा उस यमदूत को किसी ने नही देखा। लेकिन मै उसे न पहचानता तो कैसे? जान गया कि आज का सूरज छिपने न पायगा कि उससे पहले ही मेरा वह साथी उस अमीर आदमी की आतमा को ले उडेगा। यह देख मैने सोचा कि देखो, यह आदमी साल भर का वन्दोवस्त कर रहा है, लेकिन उसे पता नही कि वह कै घडी का मेहमान है। उस समय मुझे ईश्वर का दूसरा वचन याद आया कि सीखो, आदमी का वश क्या नही है।

"आदमी के अन्तर मे किसका वास है, यह तो मै जान गया था। अब

जाना कि आदमी का वश क्या नही है। आदमी का यह वश नही है कि वह अपनी आगे की जरूरते जाने। इस दूसरी सचाई का दर्शन पाने पर दूसरी वार फिर मुझे हर्ष की मुस्कराहट आ गई। एक विछोह के बाद अपने स्वर्ग के साथी को देखकर भी मुझे आनन्द हुआ। और परम सतोष हुआ कि ईश्वर ने मुझे दूसरे सत्य के दर्शन दिये।

लेकिन अव भी सव मै नही जानता था। तीसरा सत्य मुझसे ओझल बना था। वह यह कि आदमी किसके श्वास से जीता है। फिर कुछ दिन वीते। मै उत्कठा मे रहने लगा कि ईश्वर कव तीसरे सत्य का उद्घाटन करते है। कि छठे साल जुडवा वहनो को लेकर वह महिला आई। देखते ही उन लडकियो को मैने पहचान लिया। फिर कथा सुनी कि कैसे वे बच्ची पली और जीती रही। वह सुनकर मैने सोचा कि मा ने उन ही वच्चियो के लिए मुझे रोका था। मैने उसकी यह वात मान ली थी कि बच्चे मा-बाप से जीते है। लेकिन देखो कि एक विलकुल अनजान औरत ने उन्हे पाला-पोसा और वडा किया। जब वह स्त्री उन वच्चियो को प्यार करती थी जो उसकी कोख के नही थे, और उस प्यार मे उसकी आँखो मे आँसू आ रहते थे, तव साक्षात् अशरण-शरण का रूप उनमे मुझे दिखाई दे आया। मै समझ गया कि लोग किसके जिलाए यहा जीते है। उस समय मै धन्य हो गया, क्योकि ईश्वर ने तीनो सचाइयो के समाधान का मुझे दर्शन करा दिया था। मेरे वन्धन कट गये,पाप क्षमा होगये। और तब मै तीसरी बार मुस्कराया।"

(१२)

अनन्तर उस देवदूत का शरीर दिव्य होकर दसो दिशाओ मे मिल गया। अब प्रकाश ही उसका परिधान था और आँखे उसपर ठहरती न थी। वाणी गभीर सुन पडती थी जैसे कि घन-घोष हो और स्वय आकाश से दिव्य ध्वनि खिरती हो। उसी वाणी मे देवदूत ने कहा—

"मै सीख गया हूँ कि लोग अपनी-अपनी चिता करके नही रहते है, "वल्कि प्रेम से रहते है।

"वच्चियो की माँ को नही मालूम था कि उनके जीवन को क्या चाहिए, न उस अमीर आदमी को मालूम था कि उसे क्या चाहिए, न

किसी आदमी का वश है कि उसको मालूम हो कि शाम होने तक क्या होने वाला है। कोई क्या जानेगा कि शाम तक भोग भोगना मिलेगा कि राख मे मिलना बदा है।

"आदमी बनकर मै जिन्दा रहा तो इसलिए नही कि अपनी परवाह की या कर सका। बल्कि इसलिए जिन्दा रहा कि एक राहगीर के दिल मे प्रेम का अश था। उसने और उसकी बीवी ने मुझपर करुणा की और मुझे प्रेम किया। अनाथ बच्चिया जीती रही, तो माँ की चिंता के भरोसे नही, लेकिन इसलिए जीती रही कि एक बिल्कुल अनजान स्त्री के हृदय मे प्रेम का अकुर था और उसने उनपर दया की और प्यार किया। और सब लोग अगर रहते है तो अपनी-अपनी फिक्र करने के बल पर वे नही रहते, बल्कि इसलिए रहते है कि उनमे प्रेम का आवास है।

"मै अब तक जान सका था कि ईश्वर ने मनुष्य को जीवन दिया कि वे जीये। लेकिन अब मै उससे आगे भी जानता हूँ।

'मैने जाना है कि ईश्वर यह नही चाहता कि लोग अलग-अलग जिये। इसलिए हक नही है कि कोई जाने कि किसी की अपनी जरूरते क्या है। ईश्वर तो चाहता है कि सब ऐक्य भाव से जीये। इसलिए सब को पता है कि सबकी जरूरते क्या है।

"अब मै समझ गया हूँ कि चाहे लोगो को लगता हो कि वह अपनी फिक्र करके जीते है, लेकिन सचाई मे तो प्रेम है जो उन्हे जिन्दा रखता है। जिसमे प्रेम है, वह भगवान् मे है और भगवान् उसमे है। क्योकि भगवान् प्रेममय है।"

इतना कहकर देवदूत ने ईश्वर की स्तुति की, जिसकी गूज से मानो सारा वाताकाश हिल गया। तभी ऊपर छत खुली और धरती से आसमान तक एक जलती लौ की ज्योति उठती चली गई। ननकू और उसके स्त्री-पुत्र चमत्कार से सहमे-से धरती पर आ रहे। तभी देवदूत मे प्रकाश के पख उग आये और वह आकाश मे उडकर अन्तर्द्धान हो गया।

ननकू को चेत आया तो मकान ज्यो-का-त्यो खडा था और घर मे उसके कुनबेवालो के सिवाय कोई न था।

: ८ :

करीम

पुराने राज की वात है कि एक समय मध्य-देश मे करीम नामका एक काश्तकार रहा करता था। वाप उसका अपने वेटे का व्याह करने के एक साल वाद परलोक सिधार गया था। धन-सपदा उसने कुछ-वहुत पीछे नही छोडी थी। कुछ जोडी वैल थे, दो गाय और काम को दो घोडे। पर करीम को इन्तजाम करना आता था, इससे वह उन्नति करने लगा। पति-पत्नी सवेरे से रात होने तक खूव काम करते। उठ औरो से सवेरें जाते और सोते सबके पीछे थे। इस तरह साल पर साल उनकी दौलत मे वढवारी होती गई। होते-होते थोडा-थोडा करके करीम के पास खूव सपदा हो गई। तीस-पैंतीस वरस वीते होगे कि उसके पास दो-सौ से ऊपर वैल हो गये थे। अस्तबल मे कोडियो घोडे। भेड-वकरियो की तो शुमार क्या। और काम के लिए नौकरानियाँ और नौकर थे। वे ही सव करते थे। दूध वे काढते और सव तरह की सेवा भी वे ही करते थे। सवको तनख्वाह मिलती थी। करीम के पास हर चीज की खूव इफरात थी और दूर-पास के सव उसके भाग्य पर विस्मय और ईर्ष्या करते थे। कहते थे कि किस्मतवाला आदमी तो करीम है। उसके पास सबकुछ की वहुतायत है। दुनिया का मजा है तो उसे है।

अच्छे-अच्छे लोग और ओहदेवाले अफसर करीम की वडाई सुनते और उसकी जान-पहचान करना चाहते थे। दूर-दूर से लोग उससे मिलने को आते थे। करीम सबका स्वागत और सवकी खातिर करता था। खुलकर खिलाता-पिलाता और आवभगत करता था। कोई आओ, उसका भण्डारा तैयार था। जो चाहो, वहा खाने मे पालो। मेहमान आते तव खास रसोई वना करती थी। जो कही तादाद कुछ ज्यादा हुई तो पूरी ज्यौनार के सामान हो जाते थे।

करीम की तीन सन्तान थीं। दो लडके, एक लडकी। सबकी शादी कर उसने छुट्टी पाई थी। जब उसकी हालत ऐसी नहीं थी, मामूली थी, तो वे बच्चे मा-बाप के सग लगकर काम किया करते थे। खुद बैलो की सानी-पानी देखते-करते थे। लेकिन अमीरी आती गई तो वे बिगडते भी गये। एक को दारू की लत लग गई। बडा तो कही कोई फौजदारी कर बैठा और वही काम आ रहा। छोटे को ऐसी औरत मिली कि सरकश। सो बाप का कहना अब बेटा नही सुनता था और दोनो जनो को अब अधिक काल साथ निभाना मुश्किल होता जाता था।

इसमे दोनो अलग हो गये। करीम ने बेटे को मकान दे दिया और खासी तादाद मे गाय-बैल भी उसकी तरफ कर दिये। इस तरह उसकी चल और अचल सपदा कम पड गई। उसके बाद ही जाने कैसी एक बीमारी फूटी। उससे भेडो के रेवड के रेवड सत्यानाश हो गये। फिर अकाल का साल आ गया और काश्त मे सूखा पडा। बहुत-से चौपाये अगले जाडो मे बेमौत मर गये। ऊपर-से बनजारो का उत्पात हुआ और वे कई घोडे चुरा ले भागे। इस तरह करीम की सपदा क्षीण होने लगी। वह घट-घटकर कम पडती जा रही थी। उधर उसकी काया का कस भी घट रहा था। आखिर सत्तर बरस का होते-होते वह दिन आया कि घर का माल-असबाब नीलाम-बोली पर चढाना पड गया। कालीन-गलीचे जीन-तम्बू और इसी तरह की और चीजे घर से निकलकर बाजार मे आने लगी। यहाँतक कि आखिरी बचे-खुचे बैलो की जोडियो से भी जुदा होने की नौबत आ गई। अब खाने के भी लाले हो गये। उसकी कुछ समझ न आया कि कैसे क्या हुआ और देखते-देखते सब सपदा हवा हो गई। सो करीम और उसकी बीबी को बुढापे की उमर मे दूसरे दर की नौकरी की सोचनी पडी। करीम के पास कुछ न बचा था, बस तन के कपडे थे, बुढिया बीबी और काम-चलाऊ कुछ बासन-ठीकरे। बेटा अलग होकर एक दूर गाव जा रहा था और ेटी उसकी मर चुकी थी। सो उन बूढो को मदद करनेवाला कोई न था।

उनका पडौसी था एक मोहम्मद शाह। मोहम्मद शाह की हालत

ऐसी थी कि न बहुत इफरात थी, न गरीबी। अपने खाता-पीता था और मन का नेक आदमी था। करीम की पुराने दिनो की बढी-चढी मेहमाँ-नवाजी की उसने याद की और उसके मन मे बडी दया आई। बोला—"करीम, तुम और तुम्हारी बीवी दोनो मेरे मकान पर आकर रहो। गरमी मे मेरी खरबूजो की पलेज का काम देख लिया करना। जाडो में चौपायो की जरा सार-सभार कर देना। बीवी तुम्हारी गायो को थाम लेगी और दुह दिया करेगी। तुम दोनो का खाना-कपडा मेरे जिम्मे। और जब जिस चीज़ की जरूरत हो मुझे कह देना। वह मिल जायगी।" करीम ने अपने नेक पडोसी का शुक्रिया माना। सो वह और उसकी बीवी दोनो मोहम्मद शाह के यहा नौकरी पर हो गये। पहले तो उनको इसमे बडी मुश्किल मालूम हुई। पर धीमे-धीमे वे इसके आदी हो गये। अपने बस बराबर मालिक का काम करते और सबर से बसर करते।

मोहम्मद शाह ने देखा कि इन लोगो से उसे बडा आराम हो गया है। पहले अच्छी हालत मे और खुद मालिक रहने की वजह से इन्तजाम की बाबत ये लोग यो ही सबकुछ जानते है। तिसपर आलसी नही है और काम से बचते नही है। लेकिन उसके मन को दुख रहता था कि देखो, बेचारे किस ऐश पर पहुँचकर आज कैसे मुसीबत के दिन देख रहे है।

एक बार मोहम्मद शाह के कोई नातेदार लोग दूर से उसके यहा मेहमान हुए। एक वायज मुल्ला भी उनके साथ थे। मोहम्मद शाह ने करीम को कहा कि एक अच्छी भेड लो और आज की दावत के लिए उसी को जिबह करो। करीम ने मन लगाकर सब तैयारी की। सब तरह का खाना मेहमानो के आगे रक्खा गया। सब लोग दस्तरख़ान पर बैठे खाना खा रहे थे कि करीम का उधर दरवाज़े से गुजरना हुआ।

मोहम्मद शाह ने करीम को जाते देखकर एक मेहमान से कहा—'आपने उन जईफ को देखा जो अभी यहा से गुज़र के गये है?"

मेहमान ने कहा—"हा। उसमे ख़ास बात क्या है?"

"ख़ास बात यह", मोहम्मद शाह ने कहा, "कि कभी वह यहाके

सबसे मालदार आदमी थे। नाम उनका करीम है। वह नाम आपने सुना भी होगा।"

मेहमान ने कहा—"जी हाँ, नाम तो खूब ही सुना है। पहले देखने का मौका नही आया, लेकिन इस नाम की शोहरत तो दूर-दूर तक फैली हुई है।"

"जी हा, लेकिन अब उनके पास कुछ नही बचा है और मेरे यहाँ मज़दूर बनकर रहते है। उनकी बुढिया बीबी भी नौकर है। वह दूध दुहती है।"

मेहमान को बडा अचरज हुआ। उनका मुँह खुला रह गया। बोले—"किस्मत का भी एक चक्कर है। एक उसपर उठता है तो दूसरा नीचे आता है। क्यो साहब, करीम बुढापे की इस बदकिस्मती पर रज तो जरूर ही मानते होगे।"

"जी, कौन जानता है। वैसे वह सुकून से सजीदा और चुपचाप रहते है। और काम सब तनदिही से करते है। रजीदा दीखते तो नही है।"

मेहमान ने कहा—"क्या मै उनसे बात कर सकता हूँ? उनकी जिन्दगी के बारे मे कुछ पूछना चाहूँगा।"

"क्यो नही?" कहकर मेजबान ने आवाज़ देकर करीम को बुलाया। बोला—"बडे मियाँ, जरा यहाँ आइये। आइये, इस शर्बत मे तो शिरकत कीजिए। अपनी बीबी मोहतरिमा को भी लेते आइयेगा।"

करीम बीबी के साथ वहाँ आया। मेहमानो को और मालिक को सलाम किया। फिर मुह से दुआ दुहराता हुआ वही दरवाजे के पास नीचे बैठ गया। बीबी उधर परदे के पीछे से आई और मालकिन के पास जाकर बैठ गई।

शर्बत का गिलास करीम को दे दिया गया और जवाब मे करीम ने झुककर शुक्रिया माना। मुह से लगाया और फिर गिलास नीचे रख दिया।

उन मेहमान ने कहा—"हजरत यकीन है कि आपको हमे देखकर कुछ रज हो आता होगा। अपनी पहली खुशबख्ती के बाद आज की यह बद-बख्ती आपको जरूर नागवार गुजरती होगी।"

करीम मुस्कराया। बोला—"अगर मै आपको कहूँ कि असल मे खुशी क्या है और खुश-किस्मती क्या है तो आप मेरा यकीन नही करेगे। इससे बेहतर हो कि आप मेरी बीवी से पूछ कर देखे। वह औरत है और जो मन मे होगा वही उसकी जवान पर आ जायगा। वह आपको सब हकीकत बयान कर देगी।"

यह सुनकर मेहमान पर्दे की तरफ मुखातिब हुए। बोले—"बडी बी, पहले अमीरी के दिनो के मुकाबिले आज की यह बदबख्ती आपको भला क्यूँकर बर्दाश्त होती होगी ?"

उन मोहतरिमा ने पर्दे के पीछे से इसके जवाब मे कहा—"जनाब, हकीकत उल्टी है और मै अर्ज करती हूँ। मै और मेरे खाविन्द, हम दोनो पूरे पचास साल सुख की तलाश मे रहे। अबतक वह कही पाया नही। पर इन पिछले दो सालो से जब हमारे पास कुछ नही रह गया है और मेहनत करके हम जीते है, मालूम होता है कि हमको असली सुख मिला है और जो आज है उससे बढकर हम कुछ नही चाहते।"

मेहमानो को सुनकर अचम्भा हुआ और मालिक मोहम्मद शाह भी ताज्जुब मे रह गये। वह तो उठ तक पडे और पर्दे को पीछे खीच दिया ताकि सब नजरभर उन मोहतरिमा को देख सके।

वह खडी थी, सीने पर हाथ बँधे थे और अपने बूढे खाविन्द की तरफ देख रही थी। मुस्कराहट उनके चेहरे पर थी और उधर बूढे करीम के मुह पर भी मुस्कराहट थी।

वह कहने लगी—"हकीकत कहती हूँ। इसे मजाक न गिनियेगा। पचास साल तक हम खुशी की तलाश मे रहे, लेकिन भटकते रहे। दौलत थी, तबतक खुशी नही हासिल हो सकी। अब जब सब जाता रहा है और मेहनत की नौकरी पर हम लोग रहने लगे है, तब आकर वह खुशी भी मिली है जिसकी तलाश थी। अब हमे और कोई चाह नही है।"

मेहमान ने पूछा—"लेकिन उस खुशी का सबब क्या है ? राज क्या है ?"

"सबब और राज यह है," उन्होने कहा, "कि जब दौलत थी

तब हम दोनो के पीछे जाने कितनी और क्या फिक्रे लगी रहती थी। यहाँ तक कि आपस मे बात करने का वक्त भी नही मिलता था। न ख़ुदा का नाम ले पाते थे, न अपनी रूहानी भलाई की कुछ बात सोच पाते थे। मेहमान आयेदिन बने रहते और हमे धुन रहती कि क्या तश्तरियाँ उनके आगे पेश की जॉय, और क्या ख़ातिर की जाय कि वे पीठ-पीछे हमारी बुराई न करे, वाह-वाही करे। उनसे छूटने पर नौकरो की फिक्र हमे लग जाती। वे काम से आँख बचाते और खाने के वक्त अच्छा चाहते थे। उधर हमारी कोशिश रहती कि उनसे ज्यादह-से-ज्यादह काम वसूल किया जाय, और एवज मिले कम-से-कम। इस तरह गुनाह का एक चक्कर चलता रहता था। फिर बराबर डर बना रहता था कि कोई बछिया न मर जाय, घोडा न जाता रहे। चोर का डर रहता था और जगली जानवर का डर रहता था। रात जागते बीतती थी कि कही कुछ नुकसान न हो रहा हो। और रह-रहकर और उठ-उठकर हम माल की चौकसी करते थे। एक फिक्र मिटती कि दूसरी आ दबाती। और नही तो ऐसी ही बात सोचते कि जाडो मे अबके चरी का कैसे पूरा डालना होगा। और फिर हम दोनो मे अक्सर तफरका पड जाया करता। वह कहते ऐसा होना चाहिए, मै कहती कि नही वैसा होना चाहिए। इस तरह हम झगडे पैदा किया करते, अगर्चे फिर मिल भी जाते। गर्जे कि एक मुसीबत से दूसरी मुसीबत और एक गुनाह से दूसरा गुनाह, सिलसिला इसी तरह चलता रहता और जिसे सुख कहा जाय, वह नाम को न मिल पाता. ."

"और अब ?"

"अब सवेरे उठते है तो हम दोनो के मन हल्के रहते है। बीच में तनाजे की कोई बात नही रह गई है। अब मुहब्बत और दिल का इत्मीनान हमारा नही टूटता। कोई फिकर अब हमे नही है। यही खयाल रहता है कि मालिक की खिदमत कैसे अजाम दें। जितना कस है उतना हम काम करते है, और इरादा नेक रखते है। सोचते है कि हमारे मालिक को नुक-सान न होने पाये, नफा ही हो। काम से लौटकर आते है तो खाने-पीने को हमे मिल जाता है, सर्दी मे तापने को आग मिल जाती है और कपडा भी

तन को काफी हो जाता है। अब मन की दो बात करने को भी समय है। खुदा का नाम ले सकते है और आकबत की सोच सकते है। पचास बरस तक हम सुख की तलाश मे भटके। आखिर अब हमे वह मिला है।"

मेहमान हँसने लगे—

लेकिन करीम ने कहा—"हँसिये नही, मेहरबान। मजाक की बात यह नही है। जिन्दगी की हकीकत बयान की है। हम भी पहले बेवकूफ बने और दौलत के चले जाने पर रज मानने लगे थे। पर अब खुदाबद-करीम ने असलियत हम पर जाहिर करदी है। वही आपसे अर्ज़ की है। अपनी तसल्ली के लिए नही, बल्कि सच पूछिए तो आपकी भलाई के वास्ते।"

और उनके साथके वायज मुल्ला ने उस बात की ताईद की।

कहा—"बेशक, यह सही है। करीम ने हकीकत कही है। कुरान-शरीफ मे हजरत पैगम्बर ने भी यही फर्माया है।"

यह सुनकर मेहमानो का हँसना रुक गया और चेहरे सजीदा हो आये।

: ६ :

आदमी और जानवर

एक दीन किसान सवेरे-तडके हल-बैल लेकर अपने खेत की तरफ चला। साथ रोटी लेली। खेत पर पहुँचकर उसने हल सँभाला और रोटी चादर मे लपेटकर एक झाडी के नीचे रख दी। फिर काम मे लग गया। दोपहर तक काम करते-करते बैल थक गया और उसे भी भूख लग आई। तब उसने बैल को चरने खोल दिया, हल को एक तरफ किया और चादर मे रक्खी अपनी रोटी लेने बढा।

चादर उठाई, पर यह क्या! रोटी क्या हुई? उसने यहाँ देखा, वहाँ देखा। चादर को उलटा-पलटा, झाडा। लेकिन रोटी वहाँ थी कहाँ? किसान को माजरा कुछ समझ न आया।

उसने सोचा कि है यह अचरज की बात। मुझे दीखा नही तो क्या, पर कोई-न-कोई यहाँ आया जरूर है और रोटी ले गया है।

असल मे वहाँ था पाप-दानव का एक चर। किसान उधर काम कर रहा था कि उसने ही रोटी चुरा ली थी। अब भी वह झाडी के पीछे छिपा बैठा था। आशा मे था कि किसान रोए-झीकेगा, बकेगा और बददुआये देगा।

रोटी चले जाने पर कृषक वह दुखी तो हुआ, पर सोचा कि उँह, अब हो क्या सकता है। आखिर उसके बिना कोई मै भूखा तो मर ही नही गया। और जिसने रोटी ली होगी ज़रूरत की वजह से ही ली होगी। सो चलो, उसका ही भला हो।

यह सोच, पास के कुएँ पर जा, उसने भरपेट पानी पिया और थोडा सुस्ताने लगा। तनिक विश्राम के बाद अपना बैल ले, जोत, फिर खेत गोडने मे लग गया।

यह देख वह चर मन-ही-मन बडा फीका पड गया। सोचा था कि किसान मन मैला करेगा और कोसा-कासी करेगा। पर उससे तो किसी के लिए एक बुरा शब्द नही निकला।

सो इसकी खबर उसने जाकर दी अपने मालिक पाप-दानव को। बताया कि मैंने तो उस किसान की रोटी तक चुराली, लेकिन उस भले आदमी ने गाली तो क्या देना, उल्टे कहा कि जिसने ली हो चलो, उसी का भला हो।

दानव सुनकर बहुत बिगडा। कहा कि शर्म की बात है कि आदमी तुमसे बढ जावे। तुम अपना काम नही जानते। अगर किसान लोग और उनकी बीवियाँ ऐसी नेक होने लगी तो फिर हम दानव-कुलवालो का क्या ठिकाना रहेगा। समझे ? फौरन वापिस जाओ और बिगडी बात बनाओ। तीन साल के अन्दर जो तुमने किसान की नेकी पर काबू नही पा लिया तो तुमको वैतरनी मे फेक दिया जायगा। सुना ? अब जाओ।

चर मालिक की धमकी पर सहमा-सहमा पृथिवी पर वापिस आया। सोचने लगा कि क्या करूँ, क्या न करूँ, कि मेरा काम पूरा हो। खूब सोचा, खूब सोचा। आखिर एक युक्ति उसे सूझी।

उसने एक मजूर का वेष भरा और जाकर उसी किसान के यहां नौकरी करली। पहले साल उसने कहा कि इस बार नीची दलदली ज़मीन मे नाज बोओ। किसान ने उसकी बात पक्की रखकर वैसा ही किया। विधि की करनी कि उस साल खूब सूखा पडा और सब की सब फसल धूप के ताप मे प्यासी मारी गई। लेकिन इस किसान की खेती खूब फूली और फली। पौध खूब लम्बी हुई और खूब घनी और बाल मे दाना भी बडा आया। कटकर इतना नाज हुआ, इतना नाज हुआ कि उस बरस को भी काफी हुआ और आगे के लिए भी बहुतेरा बच गया।

अगले साल उस चर ने सलाह दी कि अब की टीलेवाली जमीन पर बोना चाहिए। बात मानी गई और वही बीज डाला। उस साल वर्षा इतनी हुई कि बहुत। दूसरे सब लोगो की खेती झुक गई, गल गई, और बाल मे दाना भी नही पडा। पर चर के मालिक किसान के खेत टीले पर

वालो की झूमर पहने लहराते के लहराते रहे, उनका कुछ नही विगडा। इस वार पहले से भी ज्यादा गल्ला किसान को वचा। अव तो उसके खलिहान इतने अटाअट भर गये कि उसे समझ न आता था कि इस सव का क्या करूँ।

ऐसे समय उस चर ने मालिक को वताया कि इस-इस तरह नाज मे से खीच कर दारू तैयार की जा सकती है। और दारू वह चीज़ है कि क्या कहा जाय। उसकी निस्वत वस किसीसे नही दी जा सकती।

किसान ने वही किया। तेज शराव तैयार की। खुद पी और दोस्तो को पिलाई।

इतना करके वह चर अपने मालिक दानव के पास आया। कहा, "मालिक, मैने कामयावी पा ली है और आपका काम पूरा हो गया है।"

दानव ने कहा, "अच्छा, हम खुद चलकर देखते हैं कि तुमने क्या किया है।"

दानव और चर दोनो किसान के घर आए। देखते क्या हैं कि वहाँ तो पास-पडौस के सव आसूदा किसान निमन्त्रित हैं और शराव की दावत दी जा रही है। एक जशन समझो। किसान की स्त्री साकी वनी मेहमानो को शराव दे रही है।

इतने मे किसीसे टकराकर स्त्री लडखडाई और शराव उसके हाथ से विखर गई। इसपर पति ने कहा कि कम्वख्त, तुझे कुछ सूझता नही है। इस नियामत को क्या तैंने ऐसी-वैसी चीज समझ रक्खा है कि लुढकाती फिरती है? कमीन, वेहया!!

चर ने धीमे-से कुहनी मारकर अपने मालिक को दिखाया कि देखिये, यही वह आदमी है जिसने अपने गुह की रोटी छिन जानेपर भी गुस्सा नही किया था!

किसान, औरत को अलग हटाकर, अव भी उस पर तर्राता हुआ, खुद जाम भर-भर कर लोगो को देने लगा। इतने मे एक गरीव मेहनती काम से लौटते हुए उधर ही आ निकला। वह पार्टी मे न्यौता नही था। लेकिन सवको जयरामजीकी करता हुआ वह भी वहाँ आन वैठा। हारा-

थका था। सब को पीता देख जी हुआ कि उसे भी एक घूट मिले। वह बैठा रहा, बैठा रहा। मुह मे उसके पानी आ-आ गया। लेकिन मेजवान किसान ने उसे नही पूछा। उल्टे कहा कि हर ऐरा-गैरा आजाय तो उसे पिलाने को मैं इतनी कहाँसे लाता फिरूँगा तुम्ही बताओ ?

यह सब देख दानव प्रसन्न हुआ। लेकिन उसके चर ने कहा कि अभी क्या हुआ है, आप देखते जाइए। जाने क्या-क्या बाकी है।

क्या घर के, क्या बाहर के, सबने खुलकर हाथ बँटाया। पहले दौर पर उन लोगो ने आपस मे चिकनी-चुपडी तकल्लुफ की बाते शुरू की। वह मायाचारी की बाते थी।

दानव सुनकर खुश हुआ और अपने चर को शाबाशी देने लगा। कहा कि शराब से कैसा लोमडी का-सा कपट उन्हे आगया है। इस चीज मे अगर यह सिफत है कि लोग एक दूसरे को धोखा देना चाहने लगते है, तो बस फिर क्या है, फतह हुई रक्खी है।

चर ने कहा कि आप अभी देखते जाइए। अभी तो वे लोमडी की तरह एक दूसरे की तरफ दुम हिला रहे है और डोरे डाल रहे है। शराब का एक-एक दौर और, फिर तो वे जगली भेडिये बने दीखेगे।

सो सबने एक दौर और चढाया। उसके बाद उनकी बातचीत फूहड होती जाने लगी। चिकनी-नमकीन बातो की जगह अब वे एक दूसरे को तरेरने और गालियाँ देने लगे। बक-झक हुई और मार-पीट की उनमे नौबत आगई। देखते-देखते सब आपस मे झगडने लगे। मेहमान मेजवान का फर्क न रहा। बखेडे मे मेजबान भी शामिल हुए और उनकी भी गति बनी।

दानव इस सब करामात पर खूब खुश हुआ। चर से कहा कि यह काम तुम्हारा एक नबर का है। मैं तुमसे खुश हूँ।

पर चर ने कहा कि अभी और बाकी है। आगे इससे भी बढकर दृश्य आप देखेगे। अभी भूखे भेडिये की तरह लड रहे है। एक जाम और, और वे सूअर की मानिंद बन जायँगे।

फिर तीसरा दौर चला। उसके बाद उनमे और सूअर मे फिर भेद ही क्या रह गया था। बेसुध, वे चीखते थे और रैंकते थे। कोई किसी की

न सुनता था। उन्हे सँभलना मुश्किल था और एक-दूसरे पर गिरे जाते थे।

फिर जशन बिखरने लगा। लोग लडखडाते गिरते-पडते एक-एक, दो-दो, तीन-तीन करके वहांसे गलियो की राह विदा हुए। घर का मालिक मेहमानो को रवाना करने बाहर आया कि वह भी मुह के बल औंधा कीच मे गिरा। सिर से पैर तक लिथडा हुआ सूअर की भाति वह वही बदबदाता हुआ पडा रहा।

पाप-दानव यह सब देखकर अपने चर से बहुत सन्तुष्ट हुआ। कहा, "शाबाश, तुमने खूब चीज़ ईजाद की है। पहली भूल तुम्हारी सब माफ हुई। लेकिन मुझे बताओ कि यह चीज तुमने बनाई कैसे? पहले तो जरूर उसमे तुमने लोमडी का खून डाला होगा, जिससे लोमडी की माया-चारी पीनेवाले मे आगई। फिर मालूम होता है कि भेडिये का खून उसमे तुमने मिलाया होगा। तभी तो भेडिये की तरह वे खूखार बने दीखते थे। और अन्त मे सूअर का लहू भी रक्खा ही होगा कि वे सूअर की तरह बर्राने लगे।

चर ने कहा कि नही, उस सब की ज़रूरत नही हुई। मैंने तो बस इतना किया कि जिससे किसान के पास जरूरत से ज्यादा नाज हो जाय। जानवर का खून तो आदमी के अन्दर रहता ही है। खाने जितना अन्न उसके पास रहे तबतक वह असर दबा रहता है। वही इस किसान का हाल था। पहले तो मुह का कौर छिनने पर उसका मन कडुवा नही हुआ, पर जब पास ज़रूरत से ज्यादा हो गया तो उससे मौज-मज़े करने की तबियत उसमे हो आई। बस उस समय मैंने उसे मौज की यह राह दिखा दी दारू। ईश्वर की दी हुई नियामतो मे से खीचकर अपने मजे के लिए जब वह दारू बनाने लगा तो लोमड़ी और भेडिया और सूअर सब की तासीर उसके अदर से बाहर फूट आई। आदमी बस पीता रहे, फिर तो वह हमेशा जानवर बना रहेगा, इसमे शक नही।

दानव ने चर की पीठ ठोकी। पहली चूक के लिए उसे क्षमा किया और इस कारगुजारी के लिए अपनी नौकरी मे उसे ऊँचे पद पर बहाल किया।

: १० :

तीन जोगी

एक धर्माचार्य जहाज पर कलकत्ते से जगन्नाथ-धाम की यात्रा को जा रहे थे। उस जहाज पर और बहुत से यात्री भी थे। समुद्र शान्त था, वायु अनुकूल और मौसम सुहावना। यात्री लोगो को कुछ कष्ट नही था। मिल-जुलकर खाते-पीते, गीत गाते और चर्चा करते वह समय बिताते थे।

एक बार वह आचार्य डेक पर बाहर आये। वह इधर-उधर घूम रहे थे कि देखते है कि आगे जहाज के मुहाने पर कुछ लोग जमा है। बीच मे उनके एक केवट समन्दर की तरफ इशारे से जाने क्या दिखाकर सुना रहा है। जिधर मछुए ने अगुली उठाकर बताया था, धर्माचार्य भी ठहर कर उधर ही देखने लगे। लेकिन उन्हे कोई खास बात दिखाई नही दी। धूप से समन्दर की सतह ही चमकती दीखती थी। इसपर केवट की कहानी सुनने को वह पास आगये। लेकिन उस आदमी ने उन्हे देखकर अपनी बात बन्द करदी और आदर-भाव से प्रणाम किया। और यात्री भी सभ्रम से प्रणाम करके चुप हो गये।

"भाइयो", धर्माचार्य बोले, "मै आपका कुछ हर्ज करने नही आया। यह भाई कुछ दिखाकर बतला रहे थे। सो मेरी भी सुनने की तबियत हुई कि क्या बात है।"

उनमे से एक यात्री जो औरो से साहसी थे, बोले—"तीन साधुओ की बाबत यह हमे कह रहे थे।"

"कैसे तीन साधू?"

धर्माचार्य यह कहते हुए और आगे आ गये और वहा रक्खे एक बक्स पर बैठ गये।

"मुझे भी बताओ, कैसे साधू ? मै जानना चाहता हूँ। और तुम इशारे से दिखला क्या रहे थे ?"

केवट ने आगे जरा दाहिनी तरफ इशारे से बतलाते हुए कहा—"वह वहा छोटा टापू दीखता है न ? जी, जरा दाये। जी, वहीं। वहा तीन जोगियो का वास है जो सदा आत्मा के उद्धार मे लवलीन रहते है।"

"कहा, कौनसा टापू! मुझे तो कोई दीखता नही।" धर्माचार्य बोले।

"जी, वह दूर। मेरे हाथ की तरफ देखिये। वह छोटा बादल दीखता है न, उसीके नीचे जरा दाँये, एक बारीक लकीर-सी दिखाई देती है। जी, वही टापू है।"

धर्माचार्य ने ध्यान से देखा। पर आखो को अभ्यास नही था, इससे धूप मे चमकते पानी की सतह के सिवा उन्हे कुछ दिखाई नही दिया। बोले—"मुझे तो दिखाई नही दिया। पर खैर, वह साधू कौन है जो वहा रहते है ?"

केवट बोला—"कोई सत लोग है। जोगी-ध्यानी। उनकी बाबत सुन तो मुद्दत से रक्खा था। पर दर्शन पारसाल से पहले नही किये।"

फिर केवट ने अपनी कथा सुनाई कि एक बार मै नाव लेकर दूर निकल गया था। इतने मे रात हो गई। दिशा का ध्यान मै सब भूल गया। आखिर उस टापू पर जाकर लगा। सवेरे का समय था। यहाँ-वहाँ भटक रहा था। इतने मे मिट्टी की बनी हुई एक कुटिया मुझे मिली। उसके पास एक बूढे पुरुष खडे हुए थे। तभी अन्दर से दो पुरुष और भी आ गये। सबने मिलकर मुझे वहाँ खिलाया-पिलाया और फिर मेरी नाव ठीक करने मे भी मदद दी।

धर्माचार्य ने पूछा—"वे साधू दीखते कैसे है ?"

"एक तो नाटे कद के है और कमर उनकी झुकी है। वह एक कफनी-सी पहने रहते है और बहुत बुड्ढे है। मै समझूँ सौ से तो काफी ऊपर होगे। उनकी इतनी उमर हो गई है कि सफेद दाढी कुछ हरी पडती जा रही है। पर चेहरे पर सदा उनके मुस्कराहट रहती है। और चेहरा ऐसा है कि देवता-स्वरूप। दूसरे उनसे लम्ब है। लेकिन उनकी भी

अवस्था बहुत है। वह फटा-टूटा देहाती ढग का कुर्ता पहने रहते है। दाढी उनकी भरी है और कुछ पीले भूरे रग की है। काया के खूब मजबूत। मै उनकी भला क्या मदद कर सकता, कि उन्होने तो मेरी डोगी को ऐसे पलट दिया जैसे वह कोई डोलची हो। वह भी हँसमुख रहते है और चेहरे पर दयाभाव दीखता है। तीसरे का डील खासा है और दाढी बरफ-सी सफेद घुटनो तक आ रही है। सौम्य दीखते है और सख्त। भवे, घनी, आखो पर झूलती मालूम होती है और वह बस कमर से एक चटाई का टुकडा लपेटे रहते है।"

"वे तुमसे कुछ बोले भी ?" धर्माचार्य ने पूछा।

"अधिकतर तो वह सब काम चुप रहकर ही करते है। आपस मे भी बहुत ही कम बोलते है। देखकर ही तीनो एक-दूसरे को समझ जाते है, जैसे आँख से ही बोल लेते हो। जो सब से ज्यादा डील के है उनसे मैने पूछा कि आप क्या यहा बहुत काल से रहते है। सुनकर उनकी भवो मे सिकुडन आई और जैसे नाराजी मे कुछ गुनगुनाया। लेकिन जो सब से वृद्ध थे, उन्होने उनका हाथ अपने हाथ मे लिया और मुस्कराने लगे। तब उनका गुस्सा भी एकदम शान्त हो गया। उन बूढो के मुह से बस इतना निकला—"हम पर दया रक्खो" और कहकर मुस्करा दिये।

केवट यह कथा सुना रहा था कि टापू पास आने लगा।

उन साहसी आदमी ने उगली से दिखाकर कहा—"अब श्रीमान् देखें तो टापू साफ नजर आ सकता है।"

धर्माचार्य ने देखा। सचमुच एक काली लकीर-सी दीखती थी। वही टापू। कुछ देर उधर देखते रहकर आचार्य वहाँसे आये और जहाज के बडे माझी से पूछा—"वह कौन टापू है ?"

"वह ?" उसने कहा, "उसका कोई नाम तो नही है। ऐसे तो यहाँ बहुतेरे टापू है।"

"क्या यह सच है कि वहाँ अपनी आत्मा के उद्धार के लिए तीन फकीर रहते है ?"

"ऐसा सुनता तो हूँ, महाराज। पर मालूम नही यह सच है, या

देख उठा। इसपर वह पुरातन पुरुष मुस्कराया और बोला—"ईश्वर की सेवा तो हमको मालूम भी नही है। ईश्वर के दूत, हम तो बस अपने को पाल लेते है और अपनी सेवा कर लेते है।"

"लेकिन ईश्वर की प्रार्थना आप किस प्रकार करते है ?"

"प्रार्थना ! हम तो इस तरह कहते हैं, 'तीन तुम, तीन हम। हम पर दया रखना, मालिक।"

यह कहने के साथ तीनो ने प्रकाश की तरफ आख उठाई और एक आवाज से दुहराया—"तीन तुम, तीन हम। हम पर दया रखना, मालिक।"

धर्माचार्य मुस्कराये। बोले,—"मालूम होता है आपने त्रिमूर्त्त और त्रिगुणात्मक की कोई बात सुनी है। लेकिन आपकी प्रार्थना सही नही है। आप सन्त पुरुषो ने मेरा प्रेम जीत लिया है। आप ईश्वर की प्रसन्नता चाहते हैं। किन्तु ईश्वर की सेवा का मार्ग आपको ज्ञात नही है। प्रार्थना की वह विधि नही है। देखिये, सुनिये, मैं आपको बताता हूँ। मैं कोई अपनी विधि नही बतला रहा हूँ। शास्त्रो मे सब प्राणियो के मगल के लिए प्रार्थना की जो विधि विहित है, वही मै आपको सिखाना चाहता हूँ।"

कहकर आचार्य ने धर्म का तत्त्व उन फकीरो को समझाना शुरु किया कि कैसे परम पुरुष एक है, वही द्विधा होता है। फिर किस प्रकार प्रकृति, पुरुष और आदि-बीज-पुरुष, यह त्रिविध रूप परमात्मा का सपूर्ण स्वरूप कहाता है।

ईश्वर ने पृथ्वी पर अवतार धारण किया कि धर्म की रक्षा हो। उन अवतारों की वाणी से हमें प्राप्त हुआ है कि ईश्वर की कैसे प्रार्थना करनी चाहिए। सुनिए, मेरे साथ-ही-साथ बोलिये—

"हे परम पिता !"

"हे परम पिता !"—पहले वृद्ध ने दोहराया।

"हे परम पिता !"—दूसरे ने कहा

फिर तीसरे ने कहा—"हे परम पिता !"

"—जिनका कि आकाश मे वास है।"

"—जिनका कि आकाश मे वास है।"—पहले साधूने दोहराया।

लेकिन दूसरा फकीर कहते-कहते भूल गया और तीसरे से उन शब्दो का उच्चारण ही ठीक नही बन पडा। उसके मुँह पर बाल बहुत घने थे, इससे आवाज साफ नही निकलती थी। सबसे वृद्ध वह पुरातन सन्त भी दात न होने की वजह से शब्दो को पूरा-पूरा और सही नही बोल पाते थे।

धर्माचार्य ने प्रार्थना फिर दोहराई और फिर फकीरो ने उसे तिहराया। आचार्य वहा एक पत्थर पर बैठे थे, सामने तीनो बूढे जोगी खडे थे। वे आचार्य के मुँह की हरकत को देख-देखकर उन्हीकी तरह प्रार्थना के शब्दो का ठीक-ठीक उच्चारण करने की कोशिश करते थे। धर्माचार्य ने दिन भर प्रयत्न किया। एक-एक शब्द को बीस-बीस, और कोई तो सौ-सौ बार दोहराया। पीछे-पीछे वे साधु बोलते थे। बार-बार वे लडखडाते, भूलते, और गलत कहे चलते। लेकिन हर बार धर्माचार्य उन्हे सुधार देते थे और फिर नई बार शुरू करते थे। आचार्य ने परिश्रम से जी नही मोडा। आखिर उस ईश-प्रार्थना को अब जोगी आचार्य के बिना भी पूरी-की-पूरी बोल सकते थे। सबसे पहले प्रार्थना उस मझले जोगी ने सीखी। उन्हे याद हुई कि फिर आचार्य ने उन्हीको बार-बार दोहराने को कहा। सो आखिर बाकी दोनो को भी वह कठ होती गई। प्रार्थना सीख गए, तब आचार्य ने शाति पाई।

अब अँधियारा हो चला था और चाद ऊपर दीखने लगा था। अब धर्माचार्य ने अपने जहाज पर लौट चलने की सोची। चले उस समय उन बुड्ढो ने उनके सामने धरती तक झुककर दण्डवत् किया। धर्माचार्य ने बडे प्रेम से उन्हे ऊपर उठाया और सबको गले लगाया। कहा कि आप लोग इसी तरह प्रार्थना किया कीजिएगा। अन्त मे वह नाव पर सवार होकर अपने जहाज लौट चले। नाव मे बैठे थे और मल्लाह नाव को जहाज की तरफ खे रहे थे, तब भी उन्हे फकीरो की आवाज सुन पडती रही। वे आचार्य की सिखाई प्रार्थना जोर-जोर से दुहरा रहे थे। नाव जहाज से आकर लगी। उस समय उनकी आवाज़ तो नही सुन पडती थी, पर चाँद की चाँदनी मे वे ज्यो-के-त्यो खडे हुए वहाँ अब भी

दिखलाई देते थे। सबसे छोटे बीचे मे थे, मझले बाये और लम्बे कद के जोगी दाये थे। धर्माचार्य के पहुँचने पर जहाज का लगर उठा दिया गया। पाल खुल गये और जहाज उद्यत हो गया। बादबानो में हवा भरनी थी कि जहाज चल पडा। धर्माचार्य पीछे बैठकर जहासे आये थे, उस द्वीप के तट को देखते रहे। कुछ देर तक तो वे तीनो साधू निगाह मे रहे। कुछेक देर बाद वे ओझल हो गये। द्वीप का किनारा फिर भी कुछ काल दीखता रहा। कि शनै शनै वह भी मिट गया। अब बस समन्दर की लहराती चाँदी की सतह चाँद की चाँदनी मे चमकती दीखती थी।

यात्री लोग जहाज पर सो गये थे। चारो ओर शाति थी। पर आचार्य की सोने की इच्छा नही हुई। वह अपनी जगह अकेले बैठे समन्दर मे उसी तरफ देख रहे थे जहाँ पर वह टापू था, पर जो दीख नही रहा था। उन्हे उन जोगियो की याद आती थी—"कैसे सज्जन सत प्राणी थे वे और ईश प्रार्थना को सीखकर कैसे कृतार्थ मालूम होते थे।" उन्होने प्रभु को धन्यवाद दिया कि प्रभु ने बडी कृपा की कि ऐसे सज्जन पुरुषो की सहायता का अवसर मुझे दिया और मुझे उन लोगो को वैदिक प्रार्थना सिखाने का सौभाग्य मिला।

आचार्य इस तरह सोचते हुए एकटक समन्दर की सतह पर निगाह डाले उस टापू की दिशा मे मुँह करके बैठे थे। चादनी चमक रही थी। लहरे यहाँ-वहाँ किल्लोले लेकर कभी धीमी आवाज से खिलखिल हँस पडती थी। ऐसे ही समय अकस्मात् क्या देखते है कि चाद की किरणो से समन्दर के पानी पर जो चमकीली राह-सी बन आई है, उसपर कोई सफेद झकझकाती वस्तु बढती चली आ रही है। क्या है ? समन्दरी कोई जन्तु है, या कि किसी किश्ती के छोर में लगी धातु ही ऐसी झलक रही है ? अचरज से आचार्य की आँखे उस पर गड गई।

उन्होने सोचा कि ज़रूर यह कोई नाव हमारे पीछे आ रही है। लेकिन यह तो बडी तेजी से बढी आ रही है। मिनट भर पहले वह जाने कितनी दूर थी, अब कितनी पास आगई है। नही, नाव नही हो सकती।

पाल तो कही दीखते ही नही है। जो हो, वस्तु वह कोई हमारे पीछे आ रही है और हमे पकडना चाह रही है।

लेकिन चीन्ह न पडता था कि क्या है। नाव नही, पक्षी नही, समन्दरी कोई जन्तु नही। आदमी ?—लेकिन आदमी इतना बडा कहाँ होता है। फिर वहाँ समन्दर के बीच आदमी कहाँ से आ जाता ? धर्माचार्य उठे और बडे माझी से बोले—"देखो तो भाई, वह क्या है ?"

धर्माचार्य को मानो दीखा तो कि वे तो वे ही तीनो साधू मालूम होते हैं और पानी पर दौडते चले आ रहे हैं। दाढी उनकी चमक रही है और खुद चाँदनी की भाति उज्ज्वल दीखते हैं।

पर देखकर भी, जैसे आँखो का भरोसा न हो, आचार्य ने दुहराया—"क्या है, क्या चीज है वह, माझी ?"

लेकिन साधू तो ऐसी तेजी से बढे आ रहे थे कि जहाज मानो चल ही न रहा हो, उनके आगे बिलकुल थिर पड गया हो।

माझी तो उन जोगियो को उस भाति पानी पर चला आता देखकर दहशत के मारे सब भूल गया और पतवार से हाथ छोड बैठा। बोला—

"बाबा रे, वे जोगी तो हमारे पीछे ऐसे भागे आ रहे हैं कि मानो पाव-तले उनके सूखी धरती ही हो।"

माझी की आवाज़ सुनकर और यात्री भी जाग उठे और सब वही घिर आये। देखा तो तीनो साधू हाथ मे हाथ डाले चले आ रहे हैं, और उनमे आगे के दो जहाज़ को ठहरने को कह रहे हैं। अचम्भा देखो कि बिना पैर चलाये पानी की सतह पर वह तो चलते चले ही आ रहे है। जहाज ठहर भी न पाया था कि साधू आ पहुँचे। सिर उठाकर तीनो मानो एक स्वर से बोले—"हे उपकारक, ईश्वर के सेवक, हम लोगो को तुम्हारी सिखाई प्रार्थना याद नही रही है। जबतक दोहराते रहे, वह याद रही। ज़रा रुके कि एक शब्द ध्यान से उतर गया। फिर तो सारी कडी ध्यान मे से बिखर कर गिरती जा रही है। अब उसका कुछ भी ओर-छोर हमे याद में पकड नही आता। हे गुरुवर, हमे प्रार्थना फिर सिखाने की कृपा कीजिए।"

आचार्य ने सुनकर मन-ही-मन मे राम-नाम का स्मरण किया और कहा—"हे सन्त पुरुषो, आपकी अपनी प्रार्थना ही ईश्वर को पहुँच जायगी। मै आपको सिखाने योग्य नही हूँ। मेरी विनय है कि मुझ पापी के लिए भी आप प्रार्थना कीजिएगा।"

कहकर आचार्य ने उन वृद्ध जनो के आगे धरती तक झुककर नमस्कार किया। वे जोगी फिर लौटकर समन्दर पार कर गये और जहाँ वे आँख से ओझल हुए, सवेरा फूटने तक वहाँ प्रकाश जगमगाता रहा।

: ११ :

आम बराबर गेहूँ

एक बार एक नदी की अमराई मे कुछ बच्चे खेल रहे थे कि उन्हे एक चीज पाई। देखने मे वह गेहूँ के दाने जैसी मालूम होती थी। अध-बीच मे उसके एक लकीर बनी थी जैसे दो दल जुडे हो। लेकिन दाना वह इतना बडा था जैसे देसी आम।

एक मुसाफिर ने बच्चो के हाथ मे उसे देखा तो दो-एक पैसा देकर उसे ले लिया। वह मुसाफिर फिर उसे ले गया और राजधानी के नगर मे वहाँ राजा के हाथ अजायबात के नाम पर उसे बेच कर दौलत बनाई।

राजा ने अपने दरबार के नवरत्न पण्डित बुलाये। कहा कि यह चीज़ क्या है सो बतावे। पण्डितो ने बहुत सोचा, बहुत विचारा। पर उन्हे उस चीज का कुछ अता-पता नही मिला। आखिर एक दिन वह दाना खिडकी पर रक्खा था कि मुर्गी उडकर आई और उसमे चोंच मारने लगी। इस तरह उसमे छेद होगया। तब पण्डितो ने देखा कि अरे, यह तो गेहूँ का ही दाना है। इस पर पण्डितो ने राजा से जाकर कहा—

"महाराज, यह दाना अन्नराज गेहूँ का है।"

यह सुनकर राजा को बडा विस्मय हुआ। उन्होने पडितो से कहा कि, कहाँ और कब ऐसा नाज का दाना पैदा हुआ, इसका पता आप लगा कर दे। पडित लोग फिर सोच मे पड गये। उन्होने अपनी पोथियाँ टटोली और शास्त्र छाने। लेकिन इस बाबत कोई जानकारी हाथ नही आई। आख़िर राजा के पास आकर बोले—

"हम कुछ नही बता सकते, महाराज। इस बारे मे हमारी पोथियो मे कोई उल्लेख नही मिला। इसके लिए तो किसानो से पूछना होगा,

महाराज। शायद कोई उनमे अपने पुरखाओ से जानता हो कि कहाँ और कब गेहूँ का दाना इतना बडा उगा करता था।"

सो राजा ने हुक्म दिया कि बडी-बडी उमर के किसान लोग उनके सामने लाये जावे। आखिर ऐसा एक आदमी आया, जिससे पता चलने की आस बँधी। वह राजा के सामने हुआ। बुड्ढा था और कमर उसकी झुक गई थी। दात थे नही। चेहरा मुलतानी मिट्टी-सा पीला था। दो वैसाखियो के सहारे ज्यो-त्यो लडखडाता महाराज की उपस्थिति मे वह लाया गया।

राजा ने वह दाना उसे दिखाया। लेकिन बुड्ढे की आँख मुश्किल से देखने लायक थी। उसने उसे हाथ मे लेकर टटोल कर देखा।

राजा ने पूछा—"बता सकते हो कि ऐसा दाना कहाँ और कब उगा। क्या तुमने ऐसे बडे दानो का नाज कभी खरीदा है, या कभी अपने खेत मे बोया या उगाया है?"

वह बुड्ढा कान का कुछ ऐसा निपट बहरा था कि राजा की बात मुश्किल से सुन सका और काफी देर मे वह उसकी समझ मे आई। आखिर उसने जवाब दिया—"नही, ऐसा नाज न मैने बोया है, न कभी काटा है, न कभी खरीदा है। जब नाज बेचा-खरीदा करते थे तब भी दाना जैसा आज है उतना ही छोटा होता था। लेकिन मेरे बाप से आप पूछ कर देखे। उन्होने शायद सुना होगा कि ऐसा दाना कहाँ उगता था।"

इस पर राजा ने बाप को लाने का हुक्म दिया। उसकी खोज-खबर हुई और आखिर महाराज के सामने उसे लाया गया। वह एक वैसाखी से चलता हुआ आया। राजा ने उसे दाना दिखाया। उस किसान ने दाने को गौर से देखा। वह अपनी आँखो से अब भी भली प्रकार देख सकता था।

राजा ने पूछा—"अब बतला सकते हो, चौधरी, कि यह कहाँ पैदा होता है? क्या इस तरह का नाज कभी तुमने खरीदा-बेचा है या अपने खेत मे बोया-उगाया है?"

वह आदमी थोडा ऊँचा तो सुनता था, लेकिन अपने लड़के जैसा उसका बदहाल न था।

उसने कहा—"नही, मैने ऐसे दाने का नाज अपने खेत मे न बोया, न काटा। और बेचने-खरीदने की जो बात आपने कही सो मैने नाज कभी खरीदा ही नही और न बेचा। क्योकि हमारे जमाने मे सिक्के का चलन ही नही था। सब अपना नाज उगा लेते थे और कमी होती या और ज़रूरत होती तो आपस मे बाँट लेते थे। मुझे मालूम नही कि यह नाज कहाँकी उपज है। हमारे जमाने का दाना आज के दाने से तो बेशक काफी बडा होता था और भारी होता था, लेकिन इस जैसा नाज का दाना मैने आज तक नही देखा। हाँ, मैने अपने बाप को कहते सुना है कि उनके जमाने मे गेहूँ बहुत बडा होता था। और एक दाना बहुत चून देता था। आप उनसे पूछे।"

सो राजा ने इन बाप के बाप को भी बुला भेजा। खोज करने पर वह भी मिल गये और राजा के सामने लाये गये। वह बिना किसी लठिया के सहारे सीधे चलते हुए वहाँ आ गये। निगाह उनकी निर्दोष थी। कान ठीक सुनते थे और बोलते भी वह साफ और स्पष्ट थे।

राजा ने उन्हे दाना दिखाया। उन वृद्ध पितामह ने उसे देखा और हाथ मे लेकर परखा। फिर बोले—"आज कही मुद्दत बाद ऐसा गेहूँ हमे देखने को मिला है।" यह कहकर उन्होने दाने को कुतर कर ज़रा जीभ पर लिया।

बोले—"हाँ, यह वही किस्म है।"

राजा ने कहा—"पितामह, बतलाइये कि कब और कहाँ ऐसा गेहूँ उगा करता था? क्या आपने ऐसा अन्न कभी ख़ुद मोल लिया है या अपने खेत मे उगाया है?"

उन वृद्ध पुरुष ने उत्तर दिया—

"राजन्, मेरे जमाने मे ऐसा अन्न सब कही हुआ करता था। मेरी जवानी ऐसे नाज पर ही पली है। औरो को भी ऐसा ही नाज मैने खिलाया है। ठीक इसी तरह का दाना हमारे खेत की बालो मे पडा करता था। उसीको सब बोते, काटते और गाहते थे।"

राजा ने पूछा—"पितामह, यह बताइये कि यह दाना आप कहीसे मोल लाये थे या अपने आप उगा था?"

वृद्ध पुरुष सुनकर मुस्कराये। बोले—"हमारे ज़माने मे अन्न बेचने जैसे पाप की कोई बात भी कभी नही सोच सकता था और सिक्के को हम जानते भी न थे। हरेक के पास अपना काफी रहता था।"

राजा ने कहा—"तो आपके वे खेत कहाँ थे और ऐसा नाज आप कहाँ जाकर उगाते थे ?"

पितामह ने उत्तर दिया—"हमारे खेत क्या ? ईश्वर की यही धरती तब थी। जहाँ हल जोता और मेहनत की कि वही हमारा खेत हुआ। ज़मीन छूटी बिछी थी। मालिक-मिल्कियत की बात न थी। ज़मीन ऐसी कोई चीज़ नही थी कि मेरी-तेरी होती। हमारे जमाने मे एक हाथ की मेहनत ही ऐसी चीज थी जिसमे लोग अपना हक मानते थे, नही तो कोई नही।"

राजा ने कहा—"दो सवालो का और जवाब दीजिए, पितामह। पहला सवाल यह कि धरती पहले ऐसा दाना कैसे देती थी और अब देना क्यो बन्द हो गया ? दूसरा यह कि आपका पोता तो बैसाखियो से चल कर यहाँ आया, बेटा एक लठिया के सहारे पहुँचा और आप बिना किसी सहारे के चलते आ गये। आपकी आँखो की रोशनी भी उजली है, दात मजबूत है और बानी साफ और मधुर है। यह कैसे हुआ ?"

उन पुरातन पुरुष ने उत्तर दिया—

"ऐसा इसलिए हुआ कि आदमियो ने आज अपनी मेहनत के भरोसे रहना छोड दिया है और दूसरो की मेहनत का आसरा थामकर रहते है। पुराने ज़माने मे लोग ईश्वर के नियम पालते थे और वैसे रहते थे। जो उनका था, वही उनका था। दूसरे की मेहनत और उसके फल पर उन्हे लोभ नही होता था।"

: १२ :

काम, मौत और बीमारी

भारत के आदिम लोगो मे एक कथा प्रचलित है—

कहते है कि भगवान् ने पहले-पहल आदमी बनाया तो ऐसा बनाया था कि उसे काम-धाम की जरूरत नही थी। न रहने को मकान चाहिए था, न पहनने को कपडे। तन यो ही पलता था और सबकी सौ बरस की उमर होती थी। और रोग-शोक का किसीको पता न था।

कुछ काल वाद भगवान् ने अपनी सृष्टि की ओर मुह फेरकर देखा कि उसका क्या हाल है। देखते क्या है कि कोई अपने जीवन से खुश नही है और वहाँ कलह मची हुई है। सबको अपनी-अपनी लगी है और हालत ऐसी बना डाली है कि जीवन आनन्द के बदले क्लेश का मूल हो रहा है।

ईश्वर नें सोचा कि यह बात इसलिए हुई कि सव अलग-अलग अपने-अपने लिए रहते है।

इससे हालत को बदलने के लिए ईश्वर ने एक काम किया। ऐसा वन्दोवस्त कर दिया कि काम विना जीवन सभव ही न रहे। सर्दी के दुख से वचने के लिए रहने को जगह बनानी पडे—चाहे खोदकर गुफा बनाओ, चाहे चिनकर मकान खडे करो। और भूख मिटाने के लिए फल या अनाज बोना-उगाना और काटना पडे।

ईश्वर ने सोचा कि कामसे उनमे सघ पैदा होगा और वे सम्मिलित बनेंगे। उन्हे औजार वनाने पडेगे। यहाँसे वहाँ तैयार माल ले जाना होगा। मकान वनायेगे। खेत जोते और नाज वोयेगे। कात-बुनकर कपडा बनायेगे और इनमे कोई काम एक अकेले हो न सकेगा।

तव उन्हे समझ आ जायगा कि जितने एक मन से साथ होकर वे

काम करेगे उतनी ही वढवारी होगी और जीवन फले-फूलेगा। यह वात उनमे एका ले आयेगी और सवकी ऐसे वरकत होगी।

कुछ काल वीता और भगवान् ने फिर सृष्टि की ओर ध्यान दिया कि अव क्या हाल है। अव लोग पहले से चैन से तो है न।

लेकिन देखने मे आया कि हालत पहले से खराव है। काम तो साथ करते है। (क्योकि और कुछ वश ही नही है) पर सव साथ नही होते। उनमे दल-वर्ग वन गये है। वे अलग-अलग वर्ग एक-दूसरे से काम के लिए छीना-झपटी करने है और एक-दूसरे की राह में रोक वनते है। इस खीच-तान मे समय और शक्ति वरवाद जाती है। सो सवकी हालत विगडी है और दिन-दिन विगडती जाती है।

भगवान् ने सोचा कि यह भी ठीक नही हुआ। अव ऐसा करे कि आदमी को अपनी मौत का कुछ पता न रहे। उसके जाने किसी घडी वह आजाय। आयु उसकी निश्चित न रहे। ऐसे आदमी आप सभल आयगा।

सो इसी प्रकार की व्यवस्था भगवान् ने करदी। उन्होने सोचा कि मौत का ठीक-ठिकाना आदमी को नही रहेगा तो एक-दूसरे से छीना-झपटी भी वह नही करेगे। उन्हे खयाल होगा कि जाने कै घडी की जिन्दगी है, सो ऐसे जिन्दगी के थोडे से क्षणो को चलो, क्यो नाहक हम विगाडे।

लेकिन वात उल्टी हुई। भगवान् जव फिर अपनी सृष्टि को देखने आये तो क्या देखते है कि वहाँ तो जीवन पहले से, वल्कि उससे भी ज्यादा, खराव है।

जो वलवान् थे उन्होने यह देखकर कि आदमी तो चाहे जव मर सकता है, कमजोरो को मौत दिखाकर वस कर लिया है। कुछ को मार दिया, औरो को उसके डर से ही डरा लिया। होते-होते यह होने लगा कि वे ताकतवर लोग और उनकी सतान कामसे जी चुराने लगी। उन्हे समय काटना ही सवाल होगया और अपना आलस वहलाने के नाना उपाय वे करने लगे। और जो कमजोर थे उन्हे इतना काम करना पडने लगा

कि दम मारने की फुर्सत न मिलती। ऐसे दोनो तरह के लोग एक-दूसरे से खार खाते थे और बचते और डरते थे। दोनो दुखी थे और आदमी का जीवन पहले से गया-बीता और दूभर होता जाता था।

यह देखकर ईश्वर ने सुधार की एक तदबीर की। सोचा कि यह उपाय पक्का होगा। बहुत सोच-समझकर भगवान् ने आदमी के बीच तरह-तरह की बीमारियाँ भेज दी। सोचा कि हरेक के सिर पर जब बीमारियाँ खेलती रहा करेगी तो जो अच्छे होगे, वे बीमार पर और दुर्बल पर दया करेगे और सहाय करेगे, क्योकि जाने वे खुद बीमारी मे कब न फँस जायँ। वे औरो पर दया करेगे तभी अपने लिए दया की आस उन्हे हो सकेगी।

यह इन्तजाम करके भगवान् निश्चिन्त हुए। लेकिन फिर जो अपनी उस सृष्टि को देखने वह आये जिसे अपनी करुणा मे उन्होने बीमारियो का दान दिया था, तो देखते है कि आदमी की हालत बद से बदतर है। उनकी भेजी बीमारियो से वह मिलना तो क्या, उलटे आपस मे और भी फँटने-बँटने लगे है। ताक़तवर लोग अपनी बीमारी मे कमजोरो से और भी मेहनत कराने और अपनी सेवा लेने लगे है। लेकिन खुद जब वे सेवक बीमार पडते है तो उन्हे पूछते भी नही है। और जिन्हे इस तरह खूब काम मे जोता जाता और बीमारी मे सेवा ली जाती है, वे ख़िदमत करते-करते थकान से ऐसे चूर हो जाते है कि बीमारी मे अपनी या अपनो की कोई मदद नही कर सकते, और बस भाग-भरोसे हो रहते है। तिस पर धनी आदमियो ने इन गरीब लोगो के लिए खैराती अस्पताल वगैरह खडे कर दिये है कि जिससे उनकी अपनी मौज मे विघ्न न पडे और गरीब दूर ही दूर रहे। वहाँ अस्पताल मे गरीब बेचारे अपने सगे-स्नेहियो की सेवा से दूर हो जाते है कि जिससे थोडा ढारस उन्हे पहुँच सकता था। फिर वहाँ ऐसे किराये के आदमियो और नर्सों के पल्ले वे पडते है कि जो बिना किसी दया-ममता के, बल्कि कभी तो झीक और तिरस्कार के साथ, दवा उनके गले उतार दिया करते है। तिस पर कुछ बीमारियो को छूत की मान लिया जाता है, और कही वह लग न जाय, इस डर से बीमारो से बचा जाता है और जो बीमार के पास रहते है उनतक से दूर रहा जाता है।

यह देख भगवान् ने मन मे कहा कि अगर ऐसे भी इन लोगो को यह समझ नही आता है कि इनका सुख क़िसमे है तो फिर दुख ही उन्हे मिलने दो। दुख भोगकर ही वे समझेगे। यह सोच भगवान् ने उन्हे उन पर छोड दिया।

इस तरह आदमी को आज़ाद हुए मुद्दत की मुद्दत वीत गई कि अव कही कुछ उनमे से समझे है कि कैसे वे प्रसन्न रह सकते है और रहना चाहिए। काम कुछ के लिए हौआ हो और दूसरो के लिए नित का कोल्हू, यह ठीक नही है। वल्कि काम से तो सव मिलजुल कर आपस मे हेल-मेल और खुशी के साथ रहना सीखने की सुगमता होनी चाहिए। सिर पर जव मौत अडी खडी है और किसी पल भी वह आ सकती है तो वैसी हालत मे आदमी के लिए समझदारी का काम यही हो सकता है कि वह अपनी आयु के क्षण, छिन-पल और वर्ष प्रीति, सेवा और भक्ति मे विताये। अव कही कुछ समझने लगे है कि वीमारी एकसे एकको हटाने को नही है, वल्कि एक-दूसरे को प्रेम के और सेवा के सूत्र मे पास लाने के लिए मिली है।

: १३ :

तीन सवाल

एक राजा था। एक वार उसने सोचा कि तीन बाते मालूम हो जायँ तो कभी कोई मन की साध अधूरी न रहे और सब काम पूरे हो जाया करे। एक तो यह कि कोई काम कब शुरू किया जाय। दूसरी कि कौन ठीक आदमी है जिनकी सुनी जाय और किनकी अनसुनी छोड दी जाय। तीसरी यह कि जरूरी काम कौन-सा है।

यह विचार आने पर उसने अपने सारे राज मे ऐलान कर दिया कि जो कोई आकर ये तीन सवाल वतायगा, उसे खूब इनाम मिलेगा। एक, कि हर काम का ठीक समय क्या है। दो, कि सबसे जरूरी आदमी कौन है। और तीन, कि सबसे महत्त्व का काम कैसे जाना जा सकता है।

सो बडे-बडे विद्वान दूर-दूर देश से राजा के पास आये। सबने जवाब दिये। पर सबके उत्तर अलग-अलग थे।

पहले सवाल के जवाब मे किन्हीने तो कहा कि हर काम के ठीक वक्त के लिए बरस, महीने, दिन का पहले से एक गोशवारा तैयार रखना चाहिए। उसमे सब काम का समय नियत कर देना चाहिए। बस फिर एकदम उसीके अनुसार करना चाहिए। उनकी राय थी कि सिर्फ इसी तरह हर काम अपने ठीक वक्त से हो सकता है, नही तो नही। दूसरो का कहना था कि पहले से हरेक काम का समय बाध लेना ही मुमकिन नही है। असल मे चाहिए यह कि बिना इधर-उधर की खामखा बातो मे उलझे आदमी अपने आस-पास का खयाल रक्खे। और जो जरूरी-उपयोगी हो वही करता चले। कुछ औरो ने बताया कि महाराज, आस-पास का कितना भी ध्यान रक्खो, लेकिन वास्तव मे एक आदमी ठीक-ठीक हर काम का सही वक्त तै कर नही सकता। इसके लिए पडितो की एक सभा होनी

चाहिए जो इसमे महाराज की सहायता किया करे और प्रत्येक काम का उचित समय निर्धारित कर दिया करे।

लेकिन इस पर और बोले कि वाह, कुछ बाते ऐसी नही होती कि सभा मे आये तब कही जाकर उनपर फैसला हो। उनपर तो तभी-के-तभी निर्णय देना होता है कि क्या करे, क्या नही। ले, कि छोडे ? लेकिन यह तय करने के लिए पहले कुछ पता होना ज़रूरी है कि किसका क्या फल होनेवाला है। और आगे की बात बस ज्योतिषी और तत्र-मत्र जानने वाले जानते है। सो हरेक काम का ठीक मुहूर्त जानने को पूछकर चलना चाहिए।

दूसरे सवाल के भी जवाब उसी तरह सबके अलग-अलग थे। कुछ बोले कि राजा के लिए सबसे जरूरी लोग है राजदरबारी। किसीने कहा कि पुरोहित। औरो ने कहा कि वैद्य। कुछ और बोले कि नही, राज मे सबसे जरूरी सिपाही होते है।

और तीसरे सवाल के जवाब मे कि सबसे जरूरी काम कैसे जाना जाता है, कुछ ने तो जवाब दिया कि दुनिया मे सबसे ज़रूरी वस्तु है विज्ञान।

औरो ने कहा कि जगत् मे रण-चातुरी सबसे बढकर बात है। कुछ अन्य बोले कि धर्म की पूजा से आगे तो कुछ भी नही है, वही श्रेष्ठ है।

जवाब सब अलग-अलग थे। सो राजा किन्हीसे राजी नही हुआ। और किसीको इनाम नही दिया। पर सवालो का ठीक जवाब पाने की साध तो उसके मन मे थी ही। सो एक जोगी से जाकर पूछने की उसने मन मे ठहराई। उस जोगी के ज्ञान की दूर-दूर शोहरत थी।

जोगी वह एक वन मे रहता था। कभी बाहर नही आता था। और देहात के सीधे-सादे लोगो के अलावा किन्ही और से नही मिलता था। सो राजा ने अपना सादा वेष कर लिया और जोगी की कुटिया आने से पहले ही घोडे से उतर पाव-पाव हो लिया। साथ के रक्षक सिपाहियो को वही छोड दिया और कुल एक—अकेला होकर चला।

राजा पास पहुँचा तो देखता है कि जोगी कुटिया के आगे धरती खोद रहे है। राजा को देखकर जोगी ने स्वागत वचन कहे और फिर उसी

तरह अपने खोदने मे लगे रहे। जोगी की काया निर्बल थी और वह कृश थे। धरती मे एक फावडा मारते, कि उनकी सास जोर-जोर से चलने लगती थी।

राजा ने पास जाकर कहा—"हे ज्ञानी जोगी, मै आपसे तीन सवाल पूछने आया हूँ। पहला, कि ठीक काम का ठीक वक्त मे कैसे जान सकता हूँ। दूसरा, कि कौन लोग मेरे लिए सबसे जरूरी है और इसलिए किन का औरो से मुझे विशेष खयाल रखना चाहिए। और तीसरा कि कौन काम सबसे महत्त्व का है जिधर मुझे पहले ध्यान देना चाहिए।"

जोगी ने राजा की बात सुनी, पर जवाब नही दिया। हथेली को थूक से गीलाकर फावडा ले आपने फिर खोदना शुरू कर दिया।

राजा ने कहा—"आप थक गये है, लाइए, मुझे फावडा दीजिए। कुछ देर मै ही आपकी जगह काम करदू।"

"अच्छा—"

कहकर फावडा जोगी ने राजा को दे दिया और खुद अलग जमीन पर बैठ सुस्ताने लगे।

दो क्यारी खोद चुकने पर राजा रुके और उन्होने फिर अपने सवालो को दुहराया। जोगी ने फिर कोई जवाब नही दिया। पर खडे हो गये और हाथ बढाकर बोले—

"लाओ, अब तुम आराम करो। मै खोदे लेता हूँ।"

पर राजा ने फावडा उन्हे नही दिया और आप ही खोदने लगा। एक घटा बीता, फिर दूसरा बीता। ऐसे पेडो के पीछे सूरज छिपने लगा। आखिर राजा ने फावडा धरती मे लगा छोड, कहा—"हे ज्ञानी पुरुष, मै अपने प्रश्नो के उत्तर के लिए आपके पास आया था। अगर आप मुझे कोई जवाब नही दे सकते तो वैसा कहिए, मै घर चला जाऊंगा।"

जोगी ने कहा—"देखो, वह कोई भागा आ रहा है। जाने कौन है ?"

राजा ने मुडकर देखा तो एक दाढीवाला आदमी वन से भागा आ रहा था। उसने दोनो हाथो से पेट को अपने दबा रक्खा था और वहा से लहू बह रहा था। राजा के पास पहुँचना था कि वह धीमी आवाज से

कराहता हुआ गिर गया और वेहोश हो गया। राजा ने और जोगी ने उस आदमी के कपडे खोले। पेट मे उसके एक वडा घाव था। जैसे वन पडा राजा ने उस घाव को धोया और जोगी का अगोछा ले और अपना रूमाल फाड उसकी पट्टी-वट्टी वाधी। लेकिन खून रुकता नही था। राजा ने खून से तर-वतर पट्टी को फिर खोला और धोया और फिर पट्टी वाधी। ऐसे आखिर खून वहना जव वन्द हुआ तो आदमी होश मे आया और उसने पीने को कुछ मॉगा। राजा ने ताजा पानी लाकर उसे पिलाया। इतने मे सूरज छिप गया था और सर्दी होने लगी थी। सो जोगी की मदद से राजा उस घायल आदमी को कुटिया के अन्दर ले गया और वहा विछौने पर लिटा दिया। विछौने पर पहुँच कर आदमी ने आँखे मीच ली और उसे कुछ चैन मालूम हुआ। लेकिन राजा भी अव थक गया था। कुछ तो वह इतना चला था और कुछ काम की थकान थी। सो वह वही देहलीज के पास चौखट का तकिया लगा गुडीमुडी लेट गया। लेटते ही सो गया और नीद ऐसी गाढी आई कि गरमियो की वह छोटी रात जरा मे कव निकल गई, पता नही चला। सवेरे पलक मीजता जो वह उठा तो कुछ देर तो उसे याद न आई कि कहाँ हूँ और यह आदमी कौन है। वह अजनवी दाढीवाला आदमी विछौने पर पडा चमकीली आँखो से गौर वाधकर उसीकी तरफ देख रहा था।

जव देखा कि राजा जग गया है और उसीकी तरफ देख रहा है तो दाढी वाले आदमी ने धीमी आवाज मे कहा—"जी, मुझे माफ कीजिए।"

राजा वोला—"भाई, मै तो तुम्हे जानता नही हूँ। और माफ मै किस वात के लिए तुम्हे कर सकता हूँ।"

घायल वोला—"आप मुझे नही जानते है। लेकिन मै आपको जानता हूँ। मै वही आपका दुश्मन हूँ जिसने आपसे वदला लेने की कसम खाई थी। आपने मेरे भाई को फॉसी दी थी और जायदाद छीन ली थी। मुझे मालूम था कि आप यहा जोगी के पास अकेले आये है। मन मे मैने ठहराया था कि लौटते वक्त मै आपका काम तमाम कर दूगा। लेकिन दिन पूरा हो गया और आप लौटे नही। सो मै अपने छिपने की जगह से देखने के

लिए बाहर आया। बाहर आने पर आपके सन्तरी लोग मिले। उन्होने मुझे पहचान लिया और घायल कर दिया। ज्यो-त्यो उनसे बच मैं भाग तो आया, लेकिन आप मेरे घाव पर पट्टी न बाधते तो मै मर ही चुका था। सो देखो, मैंने तो आपको मारने की ठानी और आपने मेरी जान बचाई। अब मै जीता रहा और आपने चाहा तो मै जन्मभर गुलाम की तरह आपकी तावेदारी करूँगा और अपने बेटो को भी यही ताकीद कर जाऊँगा। आप मुझे माफ कर दे, यह विनती है।"

राजा को बडी प्रसन्नता हुई। ऐसे सहज दुश्मन से सुलह ही नही हो गई, बल्कि दुश्मन की जगह वह आदमी दोस्त हो गया। सो राजा ने उसे माफ ही नही किया, बल्कि कहा कि मै अभी तुम्हारी तीमारदारी मे अपने आदमी और राज-वैद्य भेजे देता हूँ। और जायदाद भी सब लौटाने का वचन राजा ने भरा।

घायल आदमी से रुखसत लेकर राजा जोगी को देखने बाहर आया। जाने के पहले एक बार वह फिर जोगी से अपने सवालो का जवाब पाने के लिए निवेदन करना चाहता था। जोगी बाहर धरती पर घुटनो के बल बैठे कल की खुदी क्यारियो मे बीज बो रहे थे।

राजा पास आकर बोला—"हे ज्ञानी पुरुष, अन्तिम बार मैं फिर आपसे अपने प्रश्नो के उत्तर के लिए प्रार्थना करता हूँ।"

अपनी दुबली टाँगो पर उसी तरह सिकुडे धरती पर बैठे जोगी ने अपने सामने खडे राजा की तरफ देखकर कहा—"जवाब तो तुमको मिल गया है, भाई।"

"मिल गया है?" राजा ने पूछा, "कैसे? आपका क्या मतलब है?"

जोगी बोले—"देखते नही हो? अगर कल मेरी दुर्बलता पर तुम दया नही करते, और मेरी जगह इन क्यारियो को नही खोदने लगते, बल्कि वापिस राह लौट जाते, तो वह आदमी तुम पर हमला कर बैठता कि नही? और फिर यहाँ न ठहरने के लिए तुम पीछे पछतावा करते। सो सबसे जरूरी वक्त तुम्हारे लिए था जब तुम क्यारियाँ खोद रहे थे। और तब सबसे ज़रूरी आदमी तुम्हारे लिए था मैं। और मेरी भलाई

करना तुम्हे उस वक्त सबसे जरूरी काम था । इसके बाद वह आदमी जब भागा-भागा हमारे पास आकर गिरा तो सबमे महत्त्व की घडी थी जब तुम उसकी परिचर्या मे लगे । क्योकि अगर तब तुम घाव न बाँधते तो मन मे वह तुम्हारा वैर साथ लिये-लिये ही मरता । इसलिए उस समय वह तुम्हारे लिए सबसे जरूरी आदमी था और जो उसके अर्थ किया वही तुम्हे सबसे महत्त्व का काम था । इससे याद रक्खो कि क ही घडी है जो महत्त्व की है और वह हाल की घडी है । वही सबसे महत्त्व की है, क्योकि वही घडी है जो हम जीते है और जो हमारे हाथ मे होती है । और सबसे ज़रूरी और महत्त्व का आदमी वह है कि जिसके साथ इस घडी हम हो । क्योकि कौन जानता है कि आगे किसी और दूसरे से मिलना हमारी किस्मत मे बदा भी हो कि नही । और सबसे महत्त्व का काम है उस आदमी की उस वक्त की जो सेवा हो कर देना । क्योकि वही एक काम है जिसको आदमी के हाथ देकर उसे यहाँ भेजा गया है ।

: १४ :

हमसे सयाने बालक

रूस देश की बात है। ईस्टर के शुरू के दिन थे। बरफ यो गल चला था, पर आगन बाहर कही-कही अब भी चकत्ते थे। और गल-गलकर बरफ का पानी गाँव की गलियो मे होकर बहता था।

एक गली मे आमने-सामने के घरो से दो लडकियाँ निकली। गली मे था पानी। पानी वह पहले खेतो मे चलकर आता था इससे मैला था। बाहर गली के चौडे मे एक जगह एक खासी तलैया-सी बन गई थी। दोनो लडकियो मे एक तो बहुत छोटी थी, एक जरा बडी थी। उनकी माओ ने दोनो को अभी नये फ्राक पहनाये थे। नन्ही का फ्राक नीला था और बडी का पीली छीट का। और दोनो के सिर पर लाल रूमाल थे। वे अभी गिर्जे से लौटी थीं कि आमने-सामने मिल गईं। पहले दोनो ने एक-दूसरे को अपनी फ्राक दिखाई और फिर खेलने लगी। जल्दी ही उनका मन हो उठा कि चले पानी मे उछाले मारे। सो छोटी लडकी जूतो और फ्राक समेत पानी मे बढ जाना चाहती थी कि बडी ने रोक लिया।

"ऐसे मत जाओ, निनी" वह बोली, "तुम्हारी माँ नाराज होगी। मै अपने जूते मोज़े उतारे लेती हूँ। तुम भी अपने उतार लो।"

दोनो ने ऐसा ही किया और अपने-अपने फ्राक का पल्ला ऊपर सम्भाल पानी मे एक-दूसरे की ओर चलना शुरू किया। पानी निनी के टखनो तक आ गया और वह बोली "यहाँ तो गहरा है, जीजी, मुझे डर लगता है।"

जीजी का नाम था मिशा। बोली—"चली आओ, डरो मत। इससे और ज्यादह गहरा नही होगा।"

जब दोनो पास-पास हुईं तो मिशा बोली—

"खबरदार निनी, पानी न उछालो। जरा देखकर चलो।"

वह कह पाई ही होगी कि निनी का पाँव एक गड्ढे मे जाकर पडा और पानी उछलकर मिशा की फ्राक पर आया। फ्राक छीटे-छीटे हो गई और ऐसे ही मिशा की आख और नाक पर छीटे हो गये। मिशा ने अपनी फ्राक के धब्बे जो देखे तो वह नाराज हो उठी और निनी को मारने दौडी। निनी घबरा गई और मुसीबत देख वह पानी से निकल घर भागने को हुई। लेकिन ठीक तभी मिशा की माँ उधर आ निकली। अपनी लडकी की फ्राक और उसकी आस्तीने छीटे-छीटे गन्दी हुई देख बोली—

"शैतान कही की, गन्दी लडकी, यह करती क्या रही है ?"

मिशा बोली—"मै नही, निनी ने यह खराब किया है—"

सो मिशा की माँ ने निनी को पकडकर कनपटी पर एक चपत रख दिया। निनी हो-हल्ला करके रोने लगी। ऐसी कि सारी गली मे आवाज़ पहुँच गई। सो उसकी मा निकल बाहर आ गई।

"तुम क्यो मेरी नन्ही को मार रही हो जी ?" कहकर वह फिर अपनी पडोसिन को खूब खरी-खोटी कहने लगी। बात पर बात बढी और उन दोनो मे खासा झगडा होआया। और लोग भी निकल आये। एक भीड ही जो गली मे इकट्ठी हो गई। हर कोई चिल्लाता था, सुनता कोई किसीकी नही था। वे झगडा किये ही गई। यहाँ तक कि धक्कम-धक्का की नौबत आ गई। मामला मार-पीट तक ही आ लगा था कि मिशा की बूढी दादी बढकर उनमे आई और समझाने-बुझाने की कोशिश करने लगी।

"अरी, क्या कर रही हो, भलीमानसो ? अरी, सोचो तो कुछ। भला कुछ ठीक है, और आज त्यौहार परब के दिन ! यह मगल का दिन है, कि फजीते का ?"

पर बुढिया की बात वहाँ कौन सुनता था ? जमघट के धक्कम-धक्के मे वह तो गिरते-गिरते बची। वह तो निनी और मिशा ने ही मदद न की होती तो बुढिया के बसका कुछ न था। वह भला क्या भीड को शात कर पाती ! पर

उधर औरते आपस की गाली-गलौज मे लगी थी कि इधर मिशा ने कीचड के छोटे-छिटक पोछकर फ्राक साफ करली थी और फिर पानी की तलैया पर पहुँच गई थी। पहुँचकर क्या किया कि एक पत्थर लिया और तलैया के पास की मिट्टी को खरोच-खरोच कर हटाने लगी, जिससे रस्ता बन जाय और पानी गली मे बहने लगे। यह देख निनी भी झट आकर उस कारगुजारी मे हाथ बँटाने लगी। लकडी की एक छिपटी ली और उससे मिट्टी खोदने लगी। सो ठीक जब स्त्रिया हाथापाई ही किया चाहती थी, कि पानी उन नन्ही लडकियो के बनाये रास्ते से निकल गली की तरफ बढा। वह उधर बह कर चला जहा बुढिया खडी उन्हे समझा रही थी। पानी के साथ-साथ एक इधर तो दूसरी उधर दोनो लडकिया भी चली आ रही थी।

"अरी, पकड इसे निनी, पकड।" मिशा ने यह कहा तो, पर निनी को हसने से फुर्सत नही थी। पानी मे बही जाती हुई लकडी की छिपटी मे वह बडी मगन थी। पानी की धार मे आगे-आगे छिपटी को तैरते देखती, खूब मगन, वे मुन्निया दौडी-दौडी उन लोगो के झुड ही मे जा पहुँची। उस समय दादी बुढिया इन्हे देख, भीड से बोली—

"अरी, तुम लोगो को अपने पर शर्म नही आती। इन छोकरियो के लिए लडते जा रहे हो, लडते जा रहे हो। और इन्हे देखो कि कैसी ये सब-कुछ भूल चुकी हैं। वे तो मिली-जुली खुश-खुश खेल रही हैं। और तुम—! खुदा के बन्दो, तुम से तो कही वे ही समझदार हैं।"

सब लोगो ने उन नन्ही लडकियो को देखा और शर्मिन्दा हुए। फिर खुद पर ही हँसते हुए सब अपने-अपने घर चले गये।

सो कहा ही है—"जबतक बदलोगे नही, और बच्चो जैसे ही नही हो जाओगे, किसी तरह रामकृपा और स्वर्गलोक न पा सकोगे।"

: १५ :

कितनी ज़मीन ?

(१)

दो वहने थी। वडी का कस्वे मे एक सौदागर से विवाह हुआ था। छोटी देहात मे किसान के घर व्याही थी।

वडी का अपनी छोटी वहन के यहा आना हुआ। निवटकर दोनो जनी वैठी तो वातो का सूत चल पडा। वडी अपने शहर के जीवन की तारीफ करने लगी। देखो, कैसे आराम से हम रहते है। फैसी कपडे और ठाठ के सामान! तरह-तरह के स्वाद की खाने-पीने की चीज़े, और फिर तमाशे-थियेटर, वाग-वगीचे!

छोटी वहन को वात लग गई। अपनी वारी पर उसने सौदागर की ज़िन्दगी को हेच वताया और किसान का पक्ष लिया। कहा, मै तो अपनी जिन्दगी का तुम्हारे साथ अदला-वदला कभी न करूँ। हम सीधे-सादे और रूखे से रहते है तो क्या, चिन्ता-फिकर से तो छूटे है। तुम लोग सजी-वजी रहती हो, तुम्हारे यहाँ आमदनी वहुत है। लेकिन एक रोज वह सव गायव भी हो सकता है, जीजी। कहावत ही है—हानि-लाभ दोई जुडवा भाई। अक्सर होता है कि आज जो अमीर है, कल वही टुकडे को मोहताज है। पर हमारे गाव के जीवन मे यह जोखिम नही है। किसानी जिन्दगी फूली और चिकनी नही दीखती तो क्या, आयु लम्वी होती है और मेहनत से तन्दुरुस्ती भी वनी रहती है। हम मालदार न कहलायेगे, लेकिन हमारे पास खाने की कमी भी कभी नही होगी।

वडी वहन ने ताने से कहा—"वस, वस, पेट तो वैल और कुत्ते का भी भरता है। पर वह भी कोई जिन्दगी है? तुम्हे जीवन के आराम और अदव और आनन्द का क्या पता है? तुम्हारा मर्द जितनी चाहे

मेहनत करे, जिस हालत मे तुम जीते हो, उसी हालत मे मरोगे। वही चारो तरफ गोबर और भुस और मिट्टी! और यही तुम्हारे बच्चो की किस्मत मे बदा है।"

छोटी ने कहा—"तो इसमे क्या हुआ। हाँ, हमारा काम चिकना-चुपडा नही है, लेकिन हमे किसीके आगे झुकने की भी जरूरत नही है। शहर मे तुम हज़ार लालच से घिरी रहती हो। आज नही, तो कल की क्या खबर है, कल तुम्हारे आदमी को पाप का लोभ, जुआ, शराब और अन्य व्यसन फसा सकते है। तब घडी भर मे सब बरबाद हो जायगा। क्या ऐसी बाते अक्सर होती नही है?"

घर का मालिक दीना ओसारे मे पडा औरतो की यह बात सुन रहा था। उसने सोचा कि बात तो खरी है। बचपन से माँ-धरती की सेवा मे हम इतने लगे रहते है कि कोई व्यर्थ की बात हमारे मन मे घर नही कर पाती है। बस, है तो मुश्किल एक है। वह यह कि हमारे पास जमीन काफी नही है। जमीन खूब हो तो मुझे किसीकी परवाह न रहे, चाहे शैतान ही क्यो न हो।

औरतो मे फिर इधर की, उधर की, घर की और परिवार की सब बातचीत हुई। आखिर अलग होकर वह आराम करने लगी।

लेकिन वही कौने मे शैतान दुबका बैठा था। उसने सबकुछ सुना। वह खुश था कि किसान की बीवी ने गाँव की बडाई करके अपने आदमी को डीग पर चढा दिया। देखो न, कहता था कि ज़मीन खूब हो तो फिर चाहे शैतान भी आजाय तो परवा नही!

शैतान ने मन मे कहा कि अच्छा हजरत, यही फैसला सही। मै तुमको काफी जमीन दूगा और देखना है कि उसीकी बदौलत तुम मेरे चगुल मे होते हो कि नही।

(२)

गाँव के पास ही जमीदारी की मालकिन की कोठी थी। कोई तीन-सौ एकड उनकी ज़मीन थी। उनके अपने आसामियो के साथ बडे अच्छे सम्बन्ध रहते आये थे। लेकिन फिर उन्होने एक कारिन्दा रक्खा जो

पहले फौज मे रहा था। उसने आकर लोगो पर जुर्माने डालने शुरू कर दिये।

दीना का यह हाल था कि वह बहुतेरा करता, पर कभी तो उसका बैल जमीदार की चरी मे पहुँच जाता, कभी गाय बगिया को चरती पाई जाती। और नही तो उनकी रखाई हुई घास मे बछिया-बछडा ही जा मुह मारने। और हर बार दीना को जुरमाना उठाना पडता। जुरमाना तो वह देता, पर बेमन। वह कुनमुनाता और चिढा हुआ-सा घर पहुँचता। और अपनी सारी चिढ घर मे उतारता। पूरे मौसम कारिन्दे की वजह से उसे ऐसा त्रास भुगतना पडता। जाडो का पतझड आने पर वह खुश होता कि चलो, अब जानवरो को अन्दर बन्द रखना पडेगा। ढोर तब बाहर चर सकते नही थे और उन्हे घर मे रखकर खिलाना पडता था। पर चलो, दीना को जुरमाने की चिन्ता से तो मुक्ति मिल जाती थी।

अगले जाडो मे गाँव मे खबर पडी कि मालकिन अपनी ज़मीन बेच रही है और मुशी इकराम अली से सौदे की बातचीत चल रही है। किसान सुनकर चौकन्ने हुए। उन्होने सोचा कि मुशीजी की ज़मीन होगी तो वह जमीदार के कारिन्दे से भी ज्यादा सख्ती करेगे और जुरमाने चढावेगे। और हमारी तो गुजर-बसर इस जमीन पर है।

यह सोचकर किसान मालकिन के पास गये। कहा कि मुशीजी को जमीन न दीजिए। हम उससे बढती कीमत पर लेने को तैयार है। मालकिन राजी हो गई। तब किसानो ने कोशिश की कि मिलकर गाँव-पचायत की तरफ से वह सब जमीन ली जा सके ताकि वह सभी की बनी रहे। दो बार इस पर विचार करने को पचायत जुडी। पर फैसला न हुआ। असल मे शैतान की सब करतूत थी। उसने उनके बीच फूट डाल दी थी। बस तब वे मिलकर किसी एक मत पर आ ही नही सके। तय हुआ कि अलग-अलग करके ही वह जमीन ले ली जाय। हर कोई अपने वित के मुताबिक ले ले। मालकिन पहले की तरह इस बात पर भी राजी हो गई।

इतने मे दीना को मालूम हुआ कि एक पडौसी इकट्ठी पचास एकड

कि दरख्त कटे हुए पडे है । वे धरती से सटे है और उनकी जगह खडे ठूँठ मानो दीना को चिढा रहे है । देखकर उसको तैश आगया ।

उसने सोचा कि अगर दुष्ट ने एक यहा का तो दूसरा दूर का दरख्त काटा होता तो भी गनीमत थी । लेकिन कम्वख्त ने आस-पास के सव दरख्त काटकर वगिया को वीरान कर दिया । पता लगे तो खवर लिये बिना न छोडूँ । उसने जानने के लिए सिर खुजलाया कि यह करतूत किसकी हो सकती है । आखिर तय किया कि हो-न-हो यह धुन्नू होगा । और कोई ऐसा नही कर सकता । यह सोच धुन्नू की तरफ गया कि शायद कुछ सूत पकडाई मिले । लेकिन वहाँ कुछ चोरी का सबूत मिला नही और आपस मे कहा-सुन और तेजातेजी के सिवा कुछ नतीजा न निकला । तो भी उसके मन मे पक्का होगया कि धुन्नू ने ही यह किया है और जाकर रपट लिखा दी । धुन्नू की पेशी हुई, मामला चला । एक अदालत से दूसरी अदालत हुई । आखिर मे धुन्नू बरी होगया, क्योकि कोई सबूत और गवाह ही नही थे । दीना इस बात पर और भी झल्ला आया और अपना गुस्सा डिप्टी और मजिस्ट्रेट पर उतारने लगा ।

वोला --"अफसर चोरो को शय देगे तो हो लिया इसाफ । पर क्यो नही, वे कौन ईमानदार है !"

इस तरह दीना का अपने पडोसियो और अफसरो से मनमुटाव होने लगा । यहाँतक कि उसके घर मे आग लगाने की बाते सुनी जाने लगी । सो अगर्चे दीना के पास अब जमीन ज्यादा थी और जमीदारो मे गिनती ा, पर गाँव मे और पचो मे पहला-सा उसका मान न रह गया था ।

इसी वक्त अफवाह उडी कि कुछ लोग गाँव छोड-छोडकर कही जा ।

ना ने सोचा कि मुझे तो अपनी जमीन छोडने की जरूरत है कन और कुछ लोग अगर गाँव छोडेगे तो चलो, गाँव मे भीड ा । मै उनकी जमीन खुद ले लूंगा । तव ज्यादा ठीक रहेगा । ी मालूम होती है ।

ना घर के ओसारे मे बैठा हुआ था कि एक परदेशी-सा

जाना पडता था। अव वह अपने खेतो की तरफ जाता, या लहराती फसल को निहारता, या हरी घास की चरागाहो पर नजर फैलाता तो उसका मन हर्ष से भर जाता था। यह विछी घास, उगते पौधे, और फलते-फूल ऐसे मालूम होते थे कि और सवसे वढकर। पहले जव वह वहा से गुजरता था तो यह जमीन विलकुल ऐसी मालूम होती थी जैसी और ज़मीन। लेकिन अव वात ही दूसरी हो गई थी।

(३)

इस तरह दीना काफी खुशहाल था। उसके सतोप मे कोई कमी न रहती, अगर वस पडोसियो की तरफ से उसे पूरा चैन मिल सकता। कभी-कभी उसके खेतो पर पडोसियो के मवेशी आ चरते। दीना ने वहुत विनय के साथ समझाया, लेकिन कुछ फर्क नही हुआ। उसके वाद, और तो और, घोसी छोकरे गाँव की गायो को दिन-दहाडे उसकी ज़मीन मे छोड देने लगे। रात को वैल खेतो का नुकसान करते। दीना ने उनको वार-वार निकलवाया और वार-वार उसने उनके मालिको को माफ किया। एक अर्से तक वह धीरज थामे रहा और किसीके खिलाफ कार्रवाई नही की। लेकिन कवतक ? आखिर उसका धीरज टूट गया और उसने ज़िला अदालत मे दरख्वास्त दी। मन मे जानता तो था कि मुसीवत की वजह असली यह है कि और लोगो के पास ज़मीन की कमी है, इरादतन दीना को सताने की मशा किसीकी नही है। लेकिन उसने सोचा कि इस तरह मै नरमी दिखाता जाऊँगा तो वे लोग शय पाते जायँगे और मेरे पास जितना है सब बरबाद कर देगे। नही, उनको एक सबक सिखाना चाहिए।

सो उसने ठान ठान ली। एक सवक दिया, दूसरा दिया। नतीजा कि दो-तीन किसानो पर अदालत से जुर्माना होगया। इसपर तो पास-पडोस के लोग दीना से कीना रखने लगे। अब कभी-कभी इरादतन भी तग करने के लिए अपने मवेशी उसके खेतो मे छोड देते। एक आदमी गया और उसे जरूरत अगर घर मे ईंधन की थी तो उसने रात मे जाकर सात पूरे शीशम के दरख्त काट गिराये। दीना ने सवेरे घूमते हुए देखा

कि दरख़्त कटे हुए पडे है । वे धरती से सटे है और उनकी जगह खडे ठूँठ मानो दीना को चिढा रहे है । देखकर उसको तैश आगया ।

उसने सोचा कि अगर दुष्ट ने एक यहा का तो दूसरा दूर का दरख्त काटा होता तो भी गनीमत थी । लेकिन कम्बख़्त ने आस-पास के सब दरख्त काटकर बगिया को वीरान कर दिया । पता लगे तो ख़बर लिये बिना न छोडूँ । उसने जानने के लिए सिर खुजलाया कि यह करतूत किसकी हो सकती है । आखिर तय किया कि हो-न-हो यह धुन्नू होगा । और कोई ऐसा नही कर सकता । यह सोच धुन्नू की तरफ गया कि शायद कुछ सूत पकडाई मिले । लेकिन वहाँ कुछ चोरी का सबूत मिला नही और आपस मे कहा-सुन और तेजातेज़ी के सिवा कुछ नतीजा न निकला । तो भी उसके मन मे पक्का होगया कि धुन्नू ने ही यह किया है और जाकर रपट लिखा दी । धुन्नू की पेशी हुई, मामला चला । एक अदालत से दूसरी अदालत हुई । आखिर मे धुन्नू वरी होगया, क्योकि कोई सबूत और गवाह ही नही थे । दीना इस बात पर और भी झल्ला आया और अपना गुस्सा डिप्टी और मजिस्ट्रेट पर उतारने लगा ।

वोला --"अफसर चोरो को शय देगे तो हो लिया इसाफ । पर क्यो नही, वे कौन ईमानदार है !"

इस तरह दीना का अपने पडोसियो और अफसरो से मनमुटाव होने लगा । यहाँतक कि उसके घर मे आग लगाने की बाते सुनी जाने लगी । सो अगर्चे दीना के पास अव जमीन ज्यादा थी और ज़मीदारो मे गिनती थी, पर गाँव मे और पचो मे पहला-सा उसका मान न रह गया था ।

इसी वक्त अफवाह उडी कि कुछ लोग गाँव छोड-छोडकर कही जा रहे है ।

दीना ने सोचा कि मुझे तो अपनी ज़मीन छोडने की जरूरत है नही । लेकिन और कुछ लोग अगर गाँव छोडेगे तो चलो, गाँव मे भीड ही कम होगी । मै उनकी ज़मीन खुद ले लूँगा । तब ज्यादा ठीक रहेगा । अव तो कुछ तगी मालूम होती है ।

एक दिन दीना घर के ओसारे मे वैठा हुआ था कि एक परदेशी-सा

किसान उधर से गुजरता हुआ उसके घर उतरा। वह वहाँ रातभर ठहरा और खाना भी वही खाया। दीना ने उससे बात-चीत की कि भाई, कहाँ से आ रहे हो ? उसने कहा कि दरिया सतलज के पार से आ रहा हूँ। वहाँ बहुत काम है। फिर एक मे से दूसरी बात निकली और आदमी ने बताया कि उस तरफ नई बस्ती बस रही है। उसके अपने गाँव के कई और लोग वहाँ पहुँचे है। वे सोसायटी मे शामिल हो गये है और हरेक को बीस एकड ज़मीन मुफ्त मिली है। ज़मीन ऐसी उम्दा है कि उसपर गेहूँ की पहली फसल जो हुई तो आदमी से ऊँची उसकी बाले गई और इतनी घनी कि दरात के एक काट मे एक पूला बन जाय। एक आदमी के पास खाने को दाने न थे। खाली हाथ वहाँ पहुँचा कि अब उसके पास निज की दो गाये है, छ बैल, और भरा खलिहान अलग।

दीना के मन में भी अभिलाषा पैदा हुई। उसने सोचा कि मैं यहाँ तग सँकरी-सी जगह पडा क्या कर रहा हूँ, जब कि दूसरी जगह मौका खुला पडा है। यहा की जमीन घर-बार बेच-बाच कर नकदी बना वही क्यो न पहुँचूँ और नये सिरे से शुरू करके देखूँ। यहाँ लोगो की गिचपिच हुई जाती है। उससे दिक्कत पडती है और तरक्की रुकती है। लेकिन पहले खुद जाकर मालूम कर आना चाहिए कि क्या बात है। सो बरसात के बाद तैयारी करके वह चल दिया। पहले रेल मे गया, फिर सैंकडो मील बैलगाडी पर या पैदल सफर करता हुआ सतलज के पार वाली जगह पर पहुँचा। वहा देखा कि जो उस आदमी ने कहा था, सब सच है। सबके पास खूब जमीन है। हरेक को सरकार की तरफ से बीस-बीस एकड जमीन मिली हुई है। या जो चाहे खरीद सकता है। और खूबी यह कि कौडियो के मोल जितनी चाहे जमीन और भी लेलो।

सब जरूरी बाते मालूम करके दीना जाडो से पहले-पहले घर आगया। आकर देश छोडने की बाते सोचने लगा। नफे के साथ उसने सब जमीन बेच डाली। घर-मकान, मवेशी-डगर सबकी नकदी बना ली और पचायत से स्तीफा दे दिया। तब वह कुनबे को साथ ले सतलज-पार के लिए रवाना हो गया।

(४)

दीना परिवार के साथ उस जगह पहुँच गया। जाते ही एक वडे गाँव की पचायत मे शामिल होने की अर्ज़ी दी। पचो की उसने खूव खातिर की और दावते दी। सो ज़मीन का पट्टा उसे सहज मिल गया। शामलात की जमीन मे से उसके और उसके वाल-वच्चो के इस्तेमाल के लिए पाँच हिस्से यानी सौ एकड ज़मीन उसको दे दी गई। वह सव इकट्ठी नही थी, टुकडे कई जगह थे। अलावा इसके पचायती चरागाह भी उसके लिए खुला कर दिया गया। दीना ने जरूरी इमारते अपने लिए खडी की और मवेशी खरीद लिये। शामलात जमीन मे से ही अव उसको इतना मिल गया था कि पहले से तिगुना और जमीन उपजाऊ थी। वह पहले से कई गुना खुशहाल होगया। उसके पास चराई के लिए खुला मैदान-का-मैदान पडा था और जितने चाहे वह ढोर रख सकता था।

पहले तो वहाँ जमने और मकान-वकान वनवाने का उसे रस रहा। वह अपने से खुश था और उसे गर्व मालूम होता था। पर जब वह इस खुशहाली का आदी हो गया तो उसे लगने लगा कि यहाँ भी जमीन काफी नही है, और होती तो अच्छा था। पहले साल उसने गेहूँ वुवाया और जमीन ने अच्छी फसल दी। वह फिर गेहूँ ही वोते जाना चाहता था, पर उसके लिए और पडती जमीन काफी न थी। जो एक वार काम आ चुकती थी, वह उस तरफ एक साथ दोवारा गेहूँ नही देती थी। एक या दो साल उससे गेहूँ ले सकते थे, फिर जरूरी होता था कि धरती को आराम दिया जाय। वहुत लोग ऐसी जमीन चाहने वाले थे, लेकिन सवके लिए आती कहाँसे ? इससे वदावदी और खीचातानी होती थी। जो सपन्न थे, वे गेहूँ उगाने के लिए जमीन चाहते थे। जो गरीव थे, वे अपनी जमीन से जैसे-तैसे पैसा वसूल करना चाहते थे, ताकि टैक्स वगैरह अदा कर सके। दीना और गेहूँ वोना चाहता था। इसलिए एक साल के लिए किराये पर उसने और ज़मीन ले ली। खूव गेहूँ वोया और फसल भी खूव हुई। लेकिन जमीन गाँव से दूर पडती थी और गल्ला मीलो दूर से गाडी मे भर-भर कर लाना होता था। कुछ दिनो वाद

दीना ने देखा कि कुछ बडे-बडे लोग अलग फार्म डाल कर रहते है और वे खूब पैसा कमा रहे है। उसने सोचा—

"अगर मै इकट्ठी कायमी जमीन ले लूँ और वही घर बसा कर रहूँ तो बात ही दूसरी हो जाय। तब आराम रहे और दौड-धूप आवाजाई की इल्लत भी बच जाय। यही करना चाहिए।"

इस तरह इकट्ठी और कायमी जमीन खरीदने का सवाल बार-बार उसके मन मे उठने लगा।

तीन साल इस तरह निकले। ज़मीन किराये से लेता और गेहूँ बोता। मौसम मुनासिब गये, काश्त अच्छी हुई और दीना के पास माल जमा होने लगा। वह इसी तरह सतोष से बढता जा सकता था। लेकिन हर साल और लोगो से जमीन किराये पर लेने और उसके लिए कोशिश और तरद्दुद करने के काम से वह थक गया था। जहाँ ज़मीन अच्छी होती, वही लेने वाले दौड पडते। इससे बहुत चौकस-चौकन्ना और होशियार न रहा जाता तो जमीन मिलना असभव था। यह परेशानी की बात थी। तिसपर तीसरे साल ऐसा हुआ कि दीना ने एक महाजन के साझे मे कुछ काश्तकारो से एक जमीन किराये ली। जमीन जोत-गोड कर तैयार हो चुकी थी कि कुछ तनाजा होगया और किसान लोग झगडा लेकर अदालत पहुचे। अदालत से मामला बिगड गया और की-कराई मेहनत बेकार गई।

दीना ने सोचा कि अगर कही जमीन मेरी कायमी मिल्कियत की होती तो मै स्वाधीन होता और काहे को यह पचडा बनता और बखेडा बढता।

सो वह जमीन के लिए निगाह रखने लगा। आखिर एक किसान मिला जिसने एक हजार एकड जमीन खरीदी थी, लेकिन पीछे उसकी हालत सभली न रही। अब मुसीबत मे पडकर वह उसे सस्ती देने को तैयार था। दीना ने बात उससे चलाई और सौदा करना शुरू किया। आदमी मुसीबत मे था, इससे दीना भाव-दर मे कसा-कसी भी कर सका। आखिर कीमत एक हज़ार रुपये तय पाई। कुछ नकद दे दिया जाय,

बाकी फिर। सौदा पक्का हो ही गया था कि एक सौदागर अपने घोडे के दाने-पानी के लिए उसके घर के आगे ठहरा। उससे दीना की बात-चीत जो हुई तो सौदागर ने कहा कि मै नर्मदा नदी के उस पार से चला आ रहा हूँ। वहाँ १५०० सौ एकड उम्दा जमीन कुल पाँच सौ रुपये मे मैने खरीदी थी। सुनकर दीना ने उससे फिर और सवाल पूछे। सौदागर ने कहा—

'बात यह है कि अफसर-चौधरी से मेल-मुलाकात करने का हुनर चाहिए। सौ से बढती रुपये तो मैने रेशमी कपडे और गलीचे देने मे खर्च किये होगे। फिर शराब, फल-मेवो की डालिया, चाय-सेट वगैरह के उपहार अलग। नतीजा यह कि फी एकड मुझे जमीन आनो के भाव पड गई।" कहकर सौदागर ने अपने दस्तावेज सब दीना के सामने कर दिये।

फिर कहा—"जमीन ऐन नदी के किनारे है और सारे-का-सारा किता इकट्ठा है। जरखेज इतना कि क्या पूछो।"

दीना ने इसपर उत्सुकतापूर्वक सौदागर से सवाल-पर-सवाल किये। उसने बताया—

"वहाँ इतनी जमीन है, इतनी, कि तुम महीनो चलो तो पूरी न हो। वहाँके लोग ऐसे सीधे है जैसे भेड और जमीन समझो मुफ्त के भाव तुम ले सकते हो।"

दीना ने सोचा, यह ठीक रहेगा। भला मै अब कुल हजार एकड के लिए हजार रुपया क्यो फँसाऊँ? अगर वहाँ जाकर इतना रुपया जमीन मे लगाऊँ तो यहाँ से कई गुनी ज्यादह जमीन मुझे पड जायगी।

(५)

दीना ने पूछताछ की कि उस जगह कैसे जाया जाय। सौदागर ने सब बतला दिया। वह चला गया तो दीना ने भी अपनी तैयारी शुरू की। बीबी को कहा कि घर देखना-भालना और खुद एक आदमी साथ ले यात्रा को निकल पडा। रास्ते मे एक शहर मे ठहरकर, वहा से चाय के डिब्बे और शराब और इसी तरह और उपहार की चीजे जो सौदागर ने बताई थी, ले ली। फिर दोनो बढते गये, बढते गये। चलते-चलते आखिर सातवे

रोज वहा पहुँचे जहाँ से कोल लोगो की वस्ती शुरू होती थी। देखा तो यहा सौदागर ने वताई वही वात थी। दरिया के पास ज़मीन-ही-जमीन थी। सव खाली। ये लोग उससे काम न लेते थे। कपडे या सिरकी के तवू मे रहते, शिकार करते, मवेशी पालते, और ऐसे ही मौज करते थे। न रोटी वनाना जानते थे, न नाज उगाना सीखे थे। दूव का छाछ-मठा वनाते, पनीर वनाते, और उसीकी एक तरह की शराव भी तैयार कर लेते थे। ये सव काम औरते करती। मर्द खाने-पीने और फुर्सत के वक्त चैन की वसरी वजाने मे रहते। वे लोग मजवूत और स्वस्थ थे और काम-धाम के नाम विना कुछ किये मगन रहते थे। अपने से वाहर उन्हे कुछ पता न था। पढना-लिखना सीखे नही थे और हिन्दी तक नही जानते थे। पर थे भले सीधे स्वभाव के। दीना को देखते ही वे अपने तम्बुओ से निकल आये और उसके चारो तरफ जमघट लगाकर खडे हो गये। उनमे के एक दुभाषिये की मार्फत दीना ने वतलाया कि मै ज़मीन की खातिर आया हूँ। वे लोग वडे खुश मालूम हुए। वडी आवभगत के साथ वे उसे अपने अच्छे-से-अच्छे डेरे मे ले गये। वहाँ कालीन पर विछे गद्दे पर विठाया और ख़ुद नीचे चारो ओर घिरकर वैठ गय। उसे पीने को चाय दी और दारू दी। उसकी मेहमानी मे ताज़ा वकरा हलाल किया गया और वढ-चढकर दावत हुई। दीना ने भी गाडी मे से अपने पास से भेट की चीजे निकाली और सवको थोडी-थोडी चाय वाटी। कोल लोग वडे ख़ुश थे। उन्होने आपस मे इस अजनवी की वावत खूव चर्चा की। फिर दुभाषिये से कहा कि मेहमान को सव समझा दो।

दुभाषिये ने कहा कि ये लोग कहना चाहते है कि हम आपके आने से खुश है। हमारे यहा का कायदा है कि मेहमान की खातिर जो हमसे वन सके करे। आपकी कृपा के हम कृतज्ञ है। आपने जो हमे भेट दी है, सो अव आप वतलाइये कि हमारे पास कौन-सी चीज है जो आपको सवसे पसन्द है, ताकि हम उसीसे आपकी ख़ातिर कर सके।

दीना ने जवाव दिया कि जिस चीज को देखकर मै वहुत खुश हूँ, वह आपकी जमीन है। हमारे यहा जमीन की कमी है और वह उपजाऊ

भी इतनी नही होती । लेकिन यहाँ उसका कोई पार नही है और वह जमीन ज़रखेज भी ख़ूब है। मैने तो अपनी आखो से यहा जैसी धरती दूसरी देखी नही।

दुभाषिये ने दीना की बात अपने लोगो को समझा दी। कुछ देर वे आपस मे सलाह करते रहे। दीना समझ नही सका कि वे क्या कह रहे है। लेकिन उसने देखा कि वे बहुत खुश मालूम होते है, बडे हस रहे है और जोर-जोर से बोल रहे है। अनन्तर वे चुप हुए और दीना की तरफ देखने लगे। दुभाषिये ने कहा—

"वे चाहते है कि मै आपको कहूँ कि आपके उपहार के बदले मे हम बडी खुशी के साथ जितनी आप चाहते है जमीन आपको देगे। बस हाथ से बतला दीजिए कि यह और इतनी जमीन आपको चाहिए और वह आपकी हो जायगी।"

कोल लोग फिर आपस मे बात करने लगे। मालूम पडा कि जैसे उनमे कुछ दुवधा है। दीना ने पूछा कि उन लोगो मे अब यह किस बात की अटक है। दुभाषिये ने बताया कि उनमे कुछ की राय है कि सरदार से ज़मीन देने के बारे मे और पूछ लेना चाहिए, गैर-हाजिरी मे कुछ कर डालना ठीक नही है। दूसरो का खयाल है कि इस बात मे सरदार के लौटने का इतजार देखने की जरूरत नही है, ज़रा तो बात है।

(६)

यह विवाद चल रहा था कि एक आदमी बडी-सी बालदार टोपी पहिने वहा आन पहुँचा। सब चुप होकर उसके सम्मान मे खडे हो गये। दुभाषिये ने कहा कि यही हमारे सरदार है।

दीना ने फौरन अपने सामान मे से एक बढिया लबादा निकाला और चाय का एक बडा डिब्बा और ये चीज़े सरदार को भेट की। सरदार ने भेट स्वीकार की और अपने आसन पर आ बैठा। बैठते ही कोल लोगो ने उससे कुछ कहना शुरू किया। सरदार कुछ देर सुनता रहा। फिर उसने उन्हे चुप रहने का इशारा किया। उसके बाद दीना की तरफ मुखातिब होकर हिन्दुस्तानी मे कहा—

"इन भाइयो ने जो कहा ठीक है । जो जमीन चाहे चुन लो। हमारे यहा उसका घाटा नही है ।"

दीना ने सोचा कि मै मनचाहे जितनी जमीन कैसे ले सकता हूँ। पक्का करने के लिए दस्तावेज वगैरह भी तो चाहिए । नही तो जैसे आज इन्होने कह दिया कि यह तुम्हारी है, पीछे वैसे ही उसे ले भी सकते है ।

प्रकट मे उसने कहा—"आपकी दया के लिए मै कृतज्ञ हूँ । आपके पास वहुत धरती है और मुझे थोडी-सी चाहिए । लेकिन मुझे भरोसा होना चाहिए कि मेरा अपना छोटा-टुकडा कौनसा है और कि वह मेरा ही है । क्या ऐसा नही हो सकता कि जमीन को नाप लिया जाय और उतना टुकडा फिर मेरे हवाले कर दिया जाय । मरना-जीना ईश्वर के हाथ है और ससार मे यही चक्कर चला है । आप दयावान् लोग तो मुझे यह देते है, पर हो सकता है कि पीछे आपकी औलाद उसीको वापिस ले लेना चाहे । तव—"

सरदार ने कहा—"तुम्हारी वात ठीक है । जमीन तुम्हारे हवाले ही कर दी जायगी ।—"

दीना ने कहा—"सुना है यहा एक सौदागर आया था । उसको भी आपने जमीन दी थी और उस वावत कागज पक्का कर दिया था । वैसे ही मै चाहता हूँ कि कागज पक्का हो जाय ।"

सरदार समझ गया ।

वोला—"हाँ, जरूर । यह तो आसानी से हो सकता है । हमारे यहा एक मुशी है, कस्वे मे चलकर लिखा-पढी पक्की करली जायगी और रजिस्ट्री हो जायगी ।"

दीना ने पूछा—"कीमत की दर क्या होगी ?"

"हमारी दर तो एक ही है । एक दिन के एक हजार रुपये ।"

दीना समझा नही । बोला—"दिन ! दिन का हिसाब यह कैसा है ? यानी आपका मतलव कितने एकड ?"

सरदार ने कहा—"वह सव गिनना-गिनाना हमसे नही होता । हम तो दिन के हिसाब से वेचते है । जितनी जमीन एक दिन में पैदल चल

कर तुम नाप डालो, वही तुम्हारी। और कीमत है ही दिन भर की एक हजार।"

दीना अचरज मे पड गया। कहा—"एक दिन मे तो बहुत सारी जमीन के गिर्द चला जा सकता है।"

सरदार हँसा। कहा—"हा, क्यो नही। बस, वह सब तुम्हारी। लेकिन एक शर्त है। अगर तुम उसी दिन उसी जगह नही आ गये जहासे चले थे तो कीमत जब्त समझी जायगी।"

"लेकिन मुझे पता कैसे चलेगा कि मै इस जगह से चला था।"

"क्यो, हम साथ चलेगे और जहा तुम ठहरने को कहोगे ठहरे रहेगे। उस जगह से शुरू करना और वही लौट आना। साथ फावडा ले लेना। जहा जरूरी समझा निशान लगा दिया। हर मोड पर एक गड्ढा किया और उस पर घास को जरा ऊचा चिन दिया। पीछे फिर हम लोग चलेगे और हल से इस निशान से उस निशान तक हदबन्दी खीच देगे। अब दिनभर मे जितना चाहो बडे-से-बडा चक्कर तुम लगा सकते हो। पर सूरज छिपने से पहले जहाँ से चले थे वहा आ पहुँचना। जितनी जमीन तुम इस तरह नाप लोगे वह तुम्हारी हो जायगी।"

दीना खुश हुआ। तय हुआ कि अगले सवेरे ही चलना शुरू कर दिया जायगा। फिर कुछ गपशप हुई, खाना-पीना हुआ। ऐसे ही करते रात आगई। दीना को उन्होने खूब आराम का परो का बिस्तर बना दिया और वे लोग रातभर के लिए विदा होगये। कह गये कि पौ फटने से पहले ही तडके वे आ जायँगे ताकि सूरज निकलने से पहले-पहले मुकाम पर पहुँच जाया जाय।

(७)

दीना अपने परो के बिस्तर पर लेटा तो रहा, पर उसे नींद नही आई। रह-रहकर वह जमीन के बारे मे सोचने लगता था।

"चलकर मै कितनी जमीन नाप डालूँगा, कुछ ठिकाना है! एक दिन मे पैंतीस मील तो आसानी से कर ही लूगा। दिन आजकल लम्बे होते है। और पैंतीस मील!—कितनी न जमीन उसमे आ जायगी। उसमें

से घटियावाली तो बेच दूंगा या किराये पर उठा दूंगा। लेकिन उसमें जो चुनी हुई उमदा होगी वहाँ अपना फार्म बनाऊँगा। दो दर्जन तो बैल फिलहाल काफी होगे। दो आदमी भी रखने होगे। कोई डेढ़-सौ एकड मे तो काश्त करूँगा। बाकी चराई के लिए।"

दीना रातभर पडा कुलावे मिलाता रहा। गई रात कही थोडी नीद उसे पडी। आँख झपी होगी कि उसे एक सपना दिखाई दिया।...वह उसी डेरे मे है ··कि किसीके बाहर से खिलखिलाकर हँसने की आवाज उसके कानो मे आई। अचरज हुआ कि यह कौन हो सकता है। उठकर बाहर आकर देखा कि कोल लोगो का वह सरदार ही बाहर बैठा ठट्ठा दे-देकर हँस रहा है। हँसी के मारे अपना पेट पकड-पकड रहता है। पास जाकर दीना ने पूछा—"आप ऐसा हँस क्यो रहे है ?" लेकिन अभी पूछ पाया नही था कि देखता क्या है कि वहाँ सरदार तो है नही, बल्कि वह सौदागर बैठा है जो अभी कुछ दिन पहले उसे अपने देश मिला था और जिसने इस ज़मीन की बात बताई थी। तब दीना उससे पूछने को हुआ कि यहा तुम कैसे हो और कब आये। लेकिन देखा तो वह सौदागर भी नही, बल्कि वह पुराना किसान है जिसने मुद्दत हुई तब सतलज पार की ज़मीन का पता दिया था। लेकिन फिर जो देखता है तो वह वह किसान भी नही है, बल्कि खुद शैतान है, जिसके खुर है और सीग है। वही वहाँ बैठा ठट्ठा मारकर हँस रहा है। सामने उसके एक आदमी पडा हुआ है—नगे पैर, बदन पर बस कुर्ता-धोती। ज़मीन पर वह आदमी औंधे मुँह बेहाल पडा है। दीना ने सपने मे ही गौर से देखा कि ऐसे पडा हुआ आदमी वह कौन है और कैसा है। देखता क्या है कि वह आदमी दूसरा कोई नही, खुद दीना ही है और उसकी जान निकल चुकी है। यह देख मारे डर के वह घबरा आया। इतने मे उसकी आँख खुल गई।

उठकर सोचा कि सपने मे आदमी जाने क्या-क्या वाहियात बाते देख जाता है। अह! यह सोचकर मुँह मोड दरवाज़े के बाहर झाककर जो देखा तो सवेरा होनेवाला था। सोचा, समय हो गया। उन्हे अब जगा देना चाहिए। चलने मे देर ठीक नही।

से घटियावाली तो बेच दूँगा या किराये पर उठा दूँगा। लेकिन उसमें जो चुनी हुई उमदा होगी वहाँ अपना फार्म बनाऊँगा। दो दर्जन तो बैल फिलहाल काफी होगे। दो आदमी भी रखने होगे। कोई डेढ़-सौ एकड़ मे तो काश्त करूँगा। बाकी चराई के लिए।"

दीना रातभर पडा कुलावे मिलाता रहा। गई रात कही थोडी नीद उसे पडी। आँख झपी होगी कि उसे एक सपना दिखाई दिया।...वह उसी डेरे मे है कि किसीके बाहर से खिलखिलाकर हँसने की आवाज़ उसके कानो मे आई। अचरज हुआ कि यह कौन हो सकता है। उठकर बाहर आकर देखा कि कोल लोगो का वह सरदार ही बाहर बैठा ठट्ठा दे-देकर हँस रहा है। हँसी के मारे अपना पेट पकड-पकड रहता है। पास जाकर दीना ने पूछा—"आप ऐसा हँस क्यो रहे है ?" लेकिन अभी पूछ पाया नही था कि देखता क्या है कि वहाँ सरदार तो है नही, बल्कि वह सौदागर बैठा है जो अभी कुछ दिन पहले उसे अपने देश मिला था और जिसने इस ज़मीन की बात बताई थी। तब दीना उससे पूछने को हुआ कि यहा तुम कैसे हो और कब आये। लेकिन देखा तो वह सौदागर भी नही, बल्कि वह पुराना किसान है जिसने मुद्दत हुई तब सतलज पार की ज़मीन का पता दिया था। लेकिन फिर जो देखता है तो वह वह किसान भी नही है, बल्कि खुद शैतान है, जिसके खुर है और सीग है। वही वहाँ बैठा ठट्ठा मारकर हँस रहा है। सामने उसके एक आदमी पडा हुआ है—नगे पैर, बदन पर बस कुर्ता-धोती। ज़मीन पर वह आदमी औंधे मुँह बेहाल पडा है। दीना ने सपने मे ही गौर से देखा कि ऐसे पडा हुआ आदमी वह कौन है और कैसा है। देखता क्या है कि वह आदमी दूसरा कोई नही, खुद दीना ही है और उसकी जान निकल चुकी है। यह देख मारे डर के वह घबरा आया। इतने मे उसकी आँख खुल गई।

उठकर सोचा कि सपने मे आदमी जाने क्या-क्या वाहियात बाते देख जाता है। अह! यह सोचकर मुँह मोड दरवाज़े के बाहर झाककर जो देखा तो सवेरा होनेवाला था। सोचा, समय हो गया। उन्हे अब जगा देना चाहिए। चलने मे देर ठीक नही।

सोचता रह गया कि किस तरफ को चलना बेहतर होगा। सभी तरफ का लालच होता था।

उसने तय किया कि आगे देखा जायगा, पहले तो सामने सूरज की तरफ ही चला चलूँ। एक बार पूरब की ओर मुँह करके वह खडा हो गया, अगडाई लेकर बदन का प्रमाद हटाया और धरती के किनारे सूरज के मुँह चमकाने का इन्तजार करने लगा।

सोचने लगा कि मुझे वक्त नही खोना चाहिए और ठड-ठड मे रास्ता अच्छा पार हो सकता है। सूरज की पहली किरन का दिगन्त से उनकी ओर आना था कि दीना, कधे पर फावडा सभाल, खुले मैदान मे कदम बढा चला।

शुरू मे वह न धीमे चला, न तेज। हज़ार-एक गज चलने पर वह ठहरा। वहाँ एक गड्ढा किया और घास ऊँची चिन दी कि आसानी से दीख सके। फिर आगे बढा। अब उसके बदन मे फुर्ती आ गई और उसने चाल तेज कर दी। कुछ देर बाद दूसरा गड्ढा उसने खोदा।

अब पीछे मुडकर देखा। सूरज की धूप मे टेकडी साफ दीखती थी। उसपर आदमी खडे थे और गाडी के पहियो के अरे तक चमकते दीखते थे। कोई अन्दाज तीन मील तो मै आ गया हूँगा। धूप मे ताप आता जाता था। कुर्ते पर से वास्कट उतारकर उसनें कन्धे पर फेक ली और फिर चल पडा। अब खासी गरमी होती जाने लगी। उसने सूरज की तरफ देखा। वक्त हो गया था कि कुछ खाने-पीने की भी सोची जाती।

"एक पहर तो बीत गया। लेकिन दिन मे पहर चार होते है। अँह, अभी क्या लौटना। अभी जल्दी है। लेकिन जूते उतार डालूँ।" यह सोच उसने जूते उतार कर धोती मे खोस लिये और बढ चला। अब चलना आसान था।

सोचा, "अभी तीन-एक मील तो और भी चला चलूँ। तब दूसरी दिशा लूँगा। कैसी उम्दा जगह है। इसे हाथ से जाने देना हिमाकत है। लेकिन क्या अजब बात है कि जितना आगे बढो उतनी जमीन एक-से-एक बढकर मिलती जाती है।"

कुछ देर वह सीधा बढा चला। फिर पीछे मुडकर देखा तो टेकडी मुश्किल से दीख पडती थी और उसपर के आदमी रेंगती चींटी से मालूम होते थे और वहाँ धूप में जाने क्या कुछ चिलकता हुआ-सा दीख पडता था।

दीना ने सोचा, "ओह, मैं इधर काफी बढ आया हूँ। अब लौटना चाहिए।" पसीना बेहद आ रहा था और प्यास भी लग आई थी। "चलो लौटूं।"

वहाँ ठहरकर उसने गड्ढा किया, ऊपर घास का ढेर चिन दिया। उसके बाद पानी पीकर सीधी बाईं तरफ मुड लिया। चला चलता गया, चला चलता गया। घास ऊँची थी और गरमी बढ रही थी। वह थकने लगा। उसने सूरज की तरफ देखा। सिरपर दोपहरी हो आई थी।

सोचा, अब ज़रा आराम ले लेना चाहिए। वह बैठ गया। रोटी निकाल कर खाई और कुछ पानी पिया। लेटा नही कि कही नीद न आ जाय। इस तरह कुछ देर बैठ फिर आगे बढ लिया।

पहले तो चलना आसान हुआ। खाने से उसमे दम आगया था। लेकिन गरमी तीखी हो चली और आँखो मे उसके ऊँघ-सी आने लगी। तो भी वह चलता ही चला गया। सोचा कि तकलीफ घडी-दो-घडी की है, आराम जिन्दगी भर का हो जायगा।

इस तरफ भी उसने काफी लम्बी राह नापी। वह बाई तरफ को मुडनेवाला ही था कि आगे जमीन नशेब की दिखाई दी। उसने सोचा कि इस टुकडे को छोडना तो मूर्खता होगी। यहाँ सनी की बाडी ऐसी उगेगी कि क्या कहना। यह सोच उसने उस टुकडे को भी नाप डाला और पार आकर गड्ढे का निशान बना दिया। फिर दूसरी तरफ मुडा। जो टेकडी की तरफ देखा तो ताप के मारे हवा काँपती मालूम हुई। उस कँपकँपी के धुँधकारे मे से वह टेकडी की जगह मुश्किल से चीन्ह पडती थी।

दीना ने सोचा कि क्षेत्र की ये दो भुजाये मैने ज्यादा नाप डाली है। अब इधर कुछ कम ही रहने दूं। वह तेज़ कदमो से तीसरी तरफ बढा।

उसने सूरज को देखा । सूरज कोई दो-तिहाई अपना चक्कर काट चुका था और दीना अपने रकबे की तीसरी सिम्त मे दो मील मुश्किल से कर पाया था । मुकाम से अभी वह दस मील दूर था । उसने सोचा कि छोडो, जाने भी दो । मेरी जमीन की एक बाजू छोटी रह जायगी तो छोटी सही । लेकिन अब सीधी लकीर मे मुझे वापिस चले चलना चाहिए । जो ऐसे कही मै दूर निकल गया तो बाजी गई । अरे, इतनी ही ज़मीन क्या थोडी है ?

सो दीना ने वहाँ तीसरे गड्ढे का निशान डाल दिया और टेकडी की तरफ मुँह कर ठीक उसी सीध मे चल दिया ।

(६)

नाक की सीध बाँधकर वह टेकडी की तरफ चला । लेकिन अब चलते मुश्किल होती थी । धूप उसका सत ले चुकी थी । नगे पैर जगह-जगह कट और छिल गये थे और टाँगे जवाब दे रही थी । ज़रा आराम करने का उसका जी हुआ, लेकिन यह कैसे हो सकता था ? सूर्यास्त से पहले उसे पहुँच जाना था और सूरज किसीकी बाट देखता बैठा नही रहता । वह पल-पल नीचे ढल रहा था ।

उसके मन मे सोच होने लगा कि यह मुझसे बडी भूल हुई । मैने इतने पैर पसारे क्यो ? अगर कही वक्त तक न पहुँचा तो ?

उसने फिर टेकडी की तरफ देखा, फिर सूरज की तरफ । मुकाम से अभी वह दूर था और सूरज धरती के पास झुक रहा था ।

दीना जी तोड चलने लगा । चलने मे साँस फूलती और कठिनाई होती थी । पर तेज-पर-तेज कदम वह रखता गया । बढा चला, लेकिन जगह अब भी दूर बनी थी । यह देख उसने भागना शुरू किया । कधे से वास्कट फेक दी, जूते दूर हटाए, टोपी अलग की । बस साथ मे टेकन के तौर पर वह लम्बा हल्का फावडा रहने दिया ।

रह-रहकर सोच होता कि मै क्या करूँ ? मैने बिसात से बाहर चीज हथियानी चाही । उसमे बना काम बिगडा जा रहा है । अब सूरज छिपने से पहले मै वहाँ कैसे पहुँचूँगा ?

इस सोच और डर मे वह और हाँपने लगा। कुर्ता पसीने मे तर हो गया था, धोती गीली होकर चिपकी जा रही थी और मुँह सूख गया था। लेकिन वह भागता जाता था। छाती उसकी लुहार की धौकनी की तरह चल उठी, दिल भीतर हथौडे की चोट-सा धडकने लगा। उधर टाँगे बेबस हुई जा रही थी। दीना को डर हुआ कि इस थकान के मारे कही गिर कर ढेर ही न हो जाय।

यह था, पर रुक वह नही सका। इतना भागकर भी अगर मैं अब रुकूँगा तो वे सब लोग मुझपर हँसेगे और बेवकूफ बनायेगे। इसलिए उसने दौडना न छोडा, दौडे ही गया। आगे कोल लोगो की आवाज सुन पडती थी। वे उसको ज़ोर-जोर से कहकर बुला रहे थे। इन आवाजो पर उसका दिल और सुलग उठा। अपनी आखिरी ताकत समेट वह दौडा।

सूरज धरती से लगा जा रहा था। तिरछी रोशनी के सबब वह खूब बडा और लहू-सा लाल दीख रहा था। वह अब डूबा, अब डूबा। सूरज बहुत नीचे पहुँच गया था। लेकिन दीना भी जगह के बिल्कुल किनारे आ लगा था। टेकडी पर हाथ हिला-हिलाकर बढावा देते हुए कोल लोग उसे सामने दिखाई देते थे। अब तो जमीन पर रक्खी वह टोपी भी दीखने लगी, जिसपर उसकी रकम भी रक्खी थी। वही बैठा सरदार भी दिखाई दिया—वह पेट पकडे हँस रहा था!

दीना को अपने सपने की याद हो आई।

उसने सोचा कि हाय, जमीन तो काफी नाप डाली है, लेकिन क्या ईश्वर मुझे उसके भोगो के लिए बचने देगा? मेरी जान तो गई दीखती है। मै मुकाम तक अब नही पहुँच सकूँगा।

दीना ने हसरत-भरी निगाह से सूरज की तरफ देखा। सूरज धरती को छू चुका था। कुछ हिस्सा डूब भी चुका था। वह बची-खुची अपनी शक्ति से आगे बढा। कमर झुकाकर भागा, जैसे कि टाँगे साथ न देती हो। टेकडी पर पहुँचते-पहुँचते अंधेरा हो आया था। उसने ऊपर देखा—सूरज छिप चुका था। उसके मुँह से एक चीख-सी निकल गई! ओह,

मेरी सारी मेहनत व्यर्थ गई ! यह सोचकर वह थमने को हुआ। लेकिन उसे सुन पडा कि कोल लोग अब भी उसे पुकार रहे है। उसे सहसा याद आया कि वे लोग ऊँचाई पर खडे है और उन्हे सूरज अब भी दीख रहा होगा। सूरज छिपा नही है, अगर्चे मुझको नही दीखता। यह सोचकर उसने लम्बी साँस खीची और टेकडी पर वगटुट दौडा। चोटी पर अभी धूप थी। पास पहुचा और सामने टोपी देखी। बराबर सरदार बैठा वही पेट पकडे हँस रहा था। दीना को फिर अपना सपना याद आया और उसके मुँह से चीख निकल पडी। टाँगो ने नीचे से जवाब दे दिया। वह मुँह के बल आगे को गिरा और उसके हाथ टोपी तक जा पहुँचे।

"खूब ! खूब !!" सरदार ने कहा—"देखो, उसने कितनी ज़मीन ले डाली !"

दीना का नौकर दौडा आया और उसने मालिक को उठाना चाहा। लेकिन देखता क्या है कि मालिक के मुँह से खून निकल रहा है !

दीना मर चुका था। कोल लोग दया से और व्यग से हँसने लगे।

नौकर ने फावडा लिया और दीना के लिए कब्र खोदी और उसमे लिटा दिया। सिर से पाँवतक कुल छः फुट जमीन उसे काफी हुई !

: १६ :

बदी छले, नेकी फले

पुराने ज़माने की बात है कि एक आदमी रहा करता था। वह नेक और दयालु था। धन-माल सब तरह का उसके पास खूब था और बहुत से गुलाम थे। गुलाम लोगो को भी अपने इन नेक मालिक पर अभिमान था।

वे कहते थे, "इस धरती पर तो हमारे मालिक जैसे दूसरे कोई होगे नही। हमें अच्छा खाने-पहनने को देते है और काम भी हमारे बस जितना ही हमे देते है। मन मे कीना कोई नही रखते। न कभी किसी को सख्त लफ्ज़ निकालते है। और मालिको की तरह के वह नही है जो गुलामो से ऐसे बरतते है जैसे जानवर। जो कसूर-बेकसूर उन्हे पीटते रहते है और कभी कोई मीठा बैन मुह से नही निकालते। हमारे मालिक हमारा हित चाहते है, हमारी भलाई मे ही रहते है और सदा मीठी बानी बोलते है। हमे तो सब सुख है। और इससे बढकर हालत की इस ज़िन्दगी मे हमे और चाहना क्या हो सकती है?"

इस तरह के वचनो से नौकर लोग मालिक की बडाई किया करते थे। पर पाताल-लोकवासी शैतान को इस पर बडी खीझ होती थी कि देखो, ये नौकर-मालिक दोनो कैसे आपस मे हेल-मेल से रहते है। सो नौकरो मे से उसने आलिब नाम के एक नौकर को फुसलाया। उसे काबू मे करने के बाद फिर कहा कि अब तुम औरो को भी बहकाओ। सो एक दिन जब सब-के-सब जमा थे और मालिक की बडाई की बाते कर रहे थे, उस समय आलिब ऊँची आवाज से बोला—

'मालिक की नेकी की इतनी बडाई क्यो करते हो, जी। हमी बेवकूफ है, नही तो और क्या। देखो, सुनो। अगर पाताल-लोकवासी का सब लोग

कहा करो तो वह हम पर वडी कृपा करने कहते हैं। अब तो हम अपने मालिक की खिदमत मे रहते है और सव काम मे उसकी मरज़ी निहारा करते है। मन मे उनके कुछ आया नही कि झट दौडकर हम उसे पूरा कर देते है। सो वह हमारी तरफ नेक न होगे तो क्या होगे। वात तो तव देखी जाय कि हम उनका कहा न करे और नुकसान करके रख दे। तब देखना है कि वह क्या करते है। उस समय औरो की तरह गलती का वदला गाली से न दे, तव वात है। पर देख लेना कि जैसे वेरहम और मालिक होते है वैसे ही वेरहम हमारे-तुम्हारे मालिक भी निकलेगे।"

पर और नौकरो ने आलिव की वात नही मानी। वोले कि नही जी, यह झूठ की वात है। सो मतभेद पडा और वहस होने लगी। आखिर उनमे एक शर्त ठहरी। आलिव ने कहा कि अच्छी वात है, मै उनमे गुस्सा लाकर दिखला दूँगा, नाकाम रहूँ तो मेरी पोशाक तुम्हारी। और जो जीत गया तो तुम सवको अपनी पोशाक मेरे हवाले करनी होगी। यह भी ठहरा कि जीतने पर सव फिर उसकी हिमायत करेगे और उसका कुछ बिगडने नही देगे। सजा मिलेगी तो वचा लेगे। जो कही पाँव मे वेडी डाल कर हवालात मे डाल दिया गया तो खोलकर रिहा कर देगे। शर्त पक्की हो गई और आलिव ने अगले ही दिन मालिक मे अविवेक ला दिखाने का वायदा किया।

आलिब के जिम्मे चराई का काम था। भेडे उसके सिपुर्द थी। उनके रेवड मे कुछ वडी ही कीमती जात की भेडे भी थी। मालिक उन्हे वहुत चाहते थे और वडी ममता रखते थे। उन भेडो पर उन्हे नाज था।

अगले दिन सवेरे के वक्त मालिक के साथ कुछ मेहमान भेडो के बाडे मे आये। असल मे मालिक उन्हे अपनी वेशकीमती ऊन देनेवाली भेडे बताने को साथ लाये थे। उनके आने पर आलिब ने साथियो की तरफ आँख मटकाकर इशारा किया कि अब देखो, क्या होता है। देखना, मालिक झल्लाते है कि नही ?

नौकर-चाकर लोग बाडे के इधर-उधर घिरकर खडे थे। कोई बाडे के द्वार की जाली मे से देख रहा था। कोई ऊपर से ही उँझककर।

और पाताल-लोक से शैतान महाराज भी आकर ऊपर पेड पर चढकर बैठ गये थे कि देखे, हमारा सेवक अपना काम कैसा करता है ।

मालिक बाडे के अन्दर चलते हुए आये । मेहमानो को मुलायम बालो वाले बचकाने मेमने दिखाते जाते थे । एक उनमे सबसे ही आला किस्म का था, उसे खासतौर से दिखाना चाहते थे ।

बोले कि यो तो ये भेडे भी कम कीमती नही है, लेकिन एक तो बेशकीमती ही है । उसके सीग पास-पास है और ऐसे पेचदार और पैने कि बडे खूबसूरत लगते है । जानवर क्या है, मेरी आँख का तो रुकन है ।

बाडे मे अजनवी सूरतो को देखकर भेडे और उनके बच्चे इधर-उधर छूट-छूटकर भागते थे । सो मेहमान गौर जमाकर उस बेश-कीमती जानवर को नही देख पाते थे । वह कही एक जगह खडा होता कि आलिव अनजान बना नागहानी रेवड को चल-विचल कर देता था । सो फिर भेडे आपस मे रल जाती और किसी खास पर निगाह रखना मुश्किल हो जाता था । ऐसे मेहमान लोग ठीक-ठीक नजर मे ही नही ला सके कि आला किस्म का वह जानवर उनमे है कौन-सा । आखिर मालिक भी इससे परेशान आ गये । बोले, "भैया आलिव, मेहरवानी करके उस मेमने को पडकर तो ज़रा सामने लाओ । हाँ, वही पेचदार सीग का गौहर । देखो, होशियारी से पकडना और छन दो-एक को उसे हाथो मे थामे भी रखना ।"

मालिक का कहना मुह से निकलकर पूरा नही हुआ कि आलिव शेर की तरह उनमे घुसा और जोर से जाकर गरदन पर उस मुलायम मेमने को धर दबाया । उसकी खाल को एक हाथ से जोर से मुट्ठी मे कस कर दूसरे हाथ से पिछली बाई टाँग से पकड कर धरती से अधर मे उठा-कर लटका लिया और मालिक की आँखो के ला आगे किया । ऐसी झोक और झटके के साथ यह किया कि पतली टहनी की तरह उस बिचारे की टाँग मोच खा गई । आलिव ने इस तरह टाँग तोड ही दी और मेमना धरती पर फडफडाता गिरा । बाई टाँग तकलीफ के मारे मुडकर लटक गई थी, कि आलिव ने अब दाई टाँग से पकड लटकाया । मेहमान और आस-पास

घिरे नौकर-चाकर उस समय दर्द से और सहानुभूति के मारे जैसे चीख ही पडे। मगर ऊपर पेड पर चढकर बैठा हुआ शैतान अपने सेवक आलिव की चतुराई पर प्रसन्न हुआ। मालिक गुस्से के मारे ऐसे काले पड गये जैसे बिजली भरा बादल। भवे उनकी जुड आई। पर वह सिर लटकाकर रह गये और एक शब्द भी नही बोले। मेहमान भी और नौकर-चाकर भी चुप्पी बाँधे रह गये थे। सब शान्त था कि अब जाने क्या होगा। कि कुछ देर गुम-सुम रहकर मालिक ने सिर झिटका, जैसे कोई बोझ ऊपर से अलग किया हो। फिर सिर को सीधा कर आँखे अपनी आस्मान की ओर उठाई। कुछ देर ऐसे आकाश मे मुह किये वह खडे रहे। कि इतने मे चेहरे की सलवट उनकी विलय हो गई और वहाँ नीचे आलिव की तरफ देखकर मुस्कराहट के साथ बोले—

"ओ आलिव, तुम्हारे मालिक का तुम्हे हुक्म था कि मुझे गुस्सा दिलाओ। पर मेरे भगवान् तुम्हारे मालिक से जबर्दस्त है। मै तुम पर गुस्सा नही करूँगा, कि उल्टे तुम्हारे मालिक को गुस्सा करना हो जावे। तुम डरते हो कि मै तुम्हे सजा दूँगा। तुम्हारे मन मे मुझसे छूटने की भी बात रही है। तो सुनो आलिव, मै सजा नही दूँगा। और जो तुम्हारी छूटने की मर्जी है तो अपने मेहमानो के सामने मै तुम्हे आजाद करता हूँ। जहाँ चाहे जाओ। और पोशाक और जो पास हो सब साथ लेजा सकते हो।"

इसके बाद मालिक मेहमानो के साथ घर लौट आये। लेकिन शैतान दात पीसता हुआ पेड से धरती पर आ गिरा और गिरकर पाताल मे समा गया।

: १७ :

मूरखराज

एक समय किसी देश मे एक किसान रहता था। खासी खाती-पीती हालत थी और तीन उसके बेटे थे। बलजीतसिंह, धनवीरसिंह और प्यारासिंह। बलजीत फौजी निकला, धनवीर कुशल कारबारी बना, पर प्यारासिंह मूरख था। लोग उसे मूरखराज कहते थे। एक लडकी भी थी, पीतमकौर। वह गूगी और बहरी थी। सो वह बिन-ब्याही ही रही। बलजीत तो राजा की तरफ से फौज मे लडाई करने गया, धनवीर शहर जाकर एक सौदागर के साथ व्यापार मे लग गया। और मूरखराज लडकी के साथ घर ही रहता रहा। वहा धरती के काम मे जुटकर रहता और कुनबे का गुज़ारा चलाता था। इसमे मेहनत उसे इतनी पडती थी कि कमर झुक चली।

बलजीत ओहदे-पर-ओहदा पाता गया। सो एक अपना इलाका उसने खडा कर लिया और एक सरदार की बेटी से ब्याह किया। अच्छी उसे तनख्वाह मिलती थी, ऊपर से भत्ता। और पास का इलाका भी कम नही था, फिर भी खर्च के वक्त हाथ तग ही पाता था। असल मे पति जो लाता श्रीमती सब उडा देती थी। इससे हाथ मे कभी पैसा नही बचता था।

सो बलजीत एक बार अपने इलाके की जमीन मे तहसील करने गया, पर वहाँ कारिन्दा बोला कि अजी, आमदनी हो कहा से और पैसा कैसे जमा हो ? पास हमारे न हल-बैल है, न औज़ार है। गाडी नही, तागा नही। पहले सामान हो, तब तो आमदनी हो।

इसपर बलजीत अपने पिता के पास गया। बोला—"पिताजी, तुम्हारे पास जमीन है, जायदाद है और माल है। लेकिन मुझे कुछ हिस्सा नही

मिला। ऐसा करो कि सब तीन हिस्सो मे बाट दो और मेरा हिस्सा मुझे दे दो। मै फिर उससे अपने इलाके को बढा भी सकूगा।"

बूढे पिता ने कहा—"तुमने घर मे कुछ लाकर रक्खा है जो तीसरा हिस्सा मै तुम्हे दे दूँ? और बिचारे मूरखराज और पीतमकौर के हित मे यह अन्याय होगा।"

बलजीत बोला, "मूरख तो मूरख है और पीतम गूगी-बहरी है। और उमर की भी काफी होगई है। इलाके जायदाद का वे भला करेगे भी क्या?"

बूढे ने कहा—"खैर, मूरख से इस बाबत पूछ तो ले।"

मूरख आया। पिता के पूछने पर बोला—"पिताजी, जो ये चाहे, इनको दे दीजिए।"

सो बलजीत बाप के माल मे से अपना तिहाई हिस्सा ले वहासे चल दिया। उसके बाद फिर वह राजा की फौज मे लडाई के लिए जा पहुँचा।

उधर धनवीर ने भी खासा धन पैदा किया और एक बडे व्यापारी की लडकी से शादी की। पर तबियत और पाने को भी होती थी। सो वह भी बूढे बाप के पास आया और बोला—"मेरा भी हिस्सा मुझे देदो।"

लेकिन धनवीर को भी हिस्सा देने की मर्जी बूढे बाप की नही थी। बोले—"तुम क्या घर मे कुछ ले आये हो जो मागते हो? घर मे अब जो है मूरख की कमाई है। सो उस पर और बिचारी लडकी पर अन्याय मै किस भाति करूँ?"

धनवीर बोला—"मूरख को क्या जरूरत है। वह ठहरा मूरख। शादी उसकी हो ही नही सकती। कौन उसे अपनी बेटी देने बैठा है। और न गूगी पीतम के काम का कुछ है।"

यह कहकर धनवीर मूरखराज से बोला कि सुन मूरख, आधा गल्ला मेरे हवाले करदो। तुम्हारे हल-औजार मे से मुझे कुछ नही चाहिए। और डागरो मे से कुछ नही चाहिए। लेकिन वह जो बादामी रग की घोडी है, बस वह मै ले लूगा। वह तुम्हारे तो किसी खास काम की है भी नही।

मूरख हसा, बोला—"जो चाहो, भाई लेलो। और कुछ मुझे चाहिएगा तो मै मेहनत कर ही लूगा।"

सो धनवीर को तभी अपना हिस्सा मिल गया। नाज-माल ढोकर वह अपने शहर चलता बना और बादामी घोडी भी ले गया। बस एक जोडी बैल और हल लेकर अपने मा-बाप और बहन का भरण-पोषण करने और गुजर-बसर चलाने के लिए मूरखराज घर रह गया।

(२)

लेकिन पाताल मे रहता था एक शैतान। उसको बडी झुझलाहट हुई कि देखो, तीनो भाइयो मे बटवारे का झगडा भी कोई नही हुआ। सब काम अमन-सुलह से हो गया। सो उसने अपने तीन चरो को बुलाया।

बोला—"देखो जी, ये है तीन भाई। बलजीत फौजी, धनवीर व्यापारी और प्यारा मूरख। उन तीनो मे कलह होनी चाहिए। उनमे कलह हुई नही और तीनो हेल-मेल से रहते है। असल मे खराबी सब उस मूरख की है। उसीने मेरा काम बिगाड रक्खा है। देखो, तुम तीनो जाओ और एक-एक करके उन तीनो भाइयो को कब्जे मे लो। ऐसी तदबीर करो कि तीनो आपस मे नोच-खसोट करने लगे और जान के गाहक हो जायँ। बोलो, कर सकोगे ?"

तीनो बोले, "जी, कर लेगे।"

"भला, कैसे करोगे ?"

वे बोले—"पहले तो हम उनका धन-माल बरबाद कर देगे। जब पास उनके खाने को न रहेगा तो तीनो को इकट्ठे एक जगह कर देगे। बस फिर आपस मे वे ऐसे लडेगे कि आप देखियेगा। यह पक्की बात है।"

"वाह, खूब ठीक, तुम लोग काम समझते हो और होशियार हो। अब जाओ और लौटना तब जब वे एक-दूसरे की जान के गाहक हो चले। नही तो तुम जानते हो तुम्हारी जीती खाल मै खिचवा लूगा।

वे तीनो चर वहाँ से चले और एक गढे मे आकर सलाह करने लगे कि काम कैसे शुरू करे। खूब सोचा और खूब बहस की। असल मे सब अपने लिए हल्का और दूसरे को भारी काम चाहते थे। आखिर पक्का हुआ कि परची डालकर तय कर लिया जाय कि किसके जिम्मे कौन भाई आता है। यह भी ठहरा कि अगर एक का काम पहले निबट जाय तो

वह आकर दूसरे की मदद मे लगे । सो चारो ने परचिया डाली और दिन नियत किया कि उस रोज सब जने फिर इसी गढे मे आकर जमा हो। तब देखा जायगा कि किसका काम पूरा हुआ और किसको मदद की जरूरत है ।

आखिर वह दिन आया और निश्चय मुताबिक तीनो चर गढे मे आकर जमा हुए । हरेक फिर अपनी बीती सुनाने लगा । पहला, जिसने बलजीत फौजी का जिम्मा लिया था, बोला—"भाई, मेरा तो काम खूब चल रहा है । कल ही बलजीत अपने बाप के घर पहुँच जायगा ।"

औरो ने पूछा—"यह तुमने किया कैसे ?"

बोला—"पहले तो बलजीत के अन्दर मैने हिम्मत भरी । हिम्मत के साथ घमड । आखिर इतना बूता उसमे हो आया कि अपने राजा से बोला कि आपको मै सारी दुनिया फतह करके दे सकता हूँ । राजा ने इसपर उसे सिपहसालार बना दिया । कहा—'अच्छा, हिन्दुस्तान का मोरचा लो और जाकर वहाके राजा को शिकस्त दो ।' सो दोनो की फौजे मोरचे पर मिली । पर इधर मैने क्या किया कि बलजीत की छावनी की तमाम बारूद नम करदी और हिन्दुस्तानी फौज के लिए रात-ही-रात मे फूस के इतने सिपाही बना दिये कि गिनती से बाहर ।

"सो सवेरे बलजीत की फौज ने उन फूसी सिपाहियो को अपना घेरा डाले देखा तो वह घबरा गई । बलजीत ने गोली चलाने का हुक्म दिया । लेकिन तोप और बन्दूक चल कहाँ से सकती थी । सो बलजीत के सिपाही मारे डर के भेडो की तरह भाग निकले । भागते मे उन्हे पकड-पकडकर हिन्दुस्तान के राजा ने बहुतो को जमघाट उतार दिया । बलजीत की बडी ख्वारी हुई । सो उसका सब इलाका छिन गया है और कल फासी चढा देने की बात है । बस अब मुझे एक दिन का काम बाकी रह गया है । जाकर उसे बस जेल से छुडा देना है कि भाग कर वह अपने घर जा पहुँचे । तुम मे से जिसे मदद की जरूरत हो कल मै मदद को पहुँच सकता हूँ ।"

उसके बाद दूसरा चर जिसने धनवीर को हाथ मे लिया था अपनी

वीती सुनाने लगा। बोला—"मुझे तो भाई, किसी मदद की जरूरत है नही। मेरा भी काम खासी कामयाबी से वढ रहा है। धनवीर को काबू लाने मे एक हफ्ता भी नही लगा। पहले तो खूब आराम दे मैने उसे फुलाकर मोटा कर दिया। फिर तो उसका लोभ इतना वढ गया कि जो दीखे उसी को रुपये से खरीद लेने की तबियत होने लगी। अब दुनिया भर का माल खरीद कर उसने भर लिया है। रुपया सारा उसमे गला जा रहा है, पर खरीद अब भी जारी है। अभी कर्ज का रुपया वह लगाने लगा है। कर्जा उसके गले मे पत्थर की तरह बध गया है। ऐसा वह उसमे उलझता जा रहा है कि छुटकारा हो नही सकता। हफ्ते भर मे रुपया चुकती का दिन आने वाला है। उससे पहले ही जो माल उसने जमा किया है सो सब मै सत्यानाश करके रक्खे देता हूँ। कर्ज वह फिर चुका नही सकेगा और लाचार वाप के घर भागा आयेगा।"

इसके वाद वे दोनो प्यारे मूरख वाले चर से उसकी कहानी पूछने लगे। वोले—"क्यो दोस्त, अव तुम वताओ, तुम्हारा क्या हाल है ?"

वह वोला —"भाई, मेरा मामला तो ठीक रास्ते पर नही आ रहा है। वात कुछ वन ही नही रही है। पहले तो मैने उसके दूध के कटोरे मे कुछ मिला दिया कि पेट मे उसके पीर हो आये। उसके वाद जाकर पीट-पीट कर खेत की धरती को ऐसा कर दिया कि पत्थर। जोतो तो वह जुते ही नही। मैने सोचा था कि वह अब इसे क्या जोतेगा। पर मूरख जो अजव ठहरा। देखता क्या हूँ कि वह तो हल लिये चला आ रहा है। आकर जमीन को गोडना उसने शुरू कर दिया। पेट की पीर से कराह-कराह पडता था, पर वन्दा हल नही छोडता था। मैने फिर क्या किया कि हल तोडकर रख दिया। पर वह मूरख गया और घर जाकर दूसरा हल निकाल लाया और लगा फिर धरती को गोडने। मै फिर धरती के अन्दर घुस गया और हल की पैड को पकड लिया। पर पकडे रहता कैसे ? हल पर अपना सारा वोझ देकर वह चलाने लगा, पैड की धार पैनी थी और मेरा हाथ भी जखमी हो गया। सो उसने सारा खेत जोत डाला है, वस ज़रा किनारी वची रह गई है। भाई, आकर मेरी मदद करो। क्यो

कि उसपर कावू नही चला तो हमारी सारी मेहनत अकारथ जायगी। वह मूरख वाज़ न आया और ऐसे ही धरती के साथ कामयाव होता चला गया तो उसके भाइयो को भूख, की नौवत न आयेगी और सवके पेट के लायक यह अकेला ही पैदा कर लेगा।"

वलजीत वाले चर ने कहा—"अच्छी वात है। मै कल तुम्हारी मदद को आये जाता हूँ।"

इसके वाद तीनो चर अपने-अपने काम पर चले गये।

(३)

प्यारे ने खेत की सारी धरती गोड डाली थी। कुल एक नन्ही किनार वची रह गई थी। उसीको पूरा करने वह आ जुटा। पेट पिरा रहा था पर खेत तो होना ही चाहिए। सो जोता वैल, घुमाया हल, और गुडाई शुरू करदी। एक लीक उसने पूरी करदी। दूसरे पर लौट रहा था तो हल फिसटता-सा मालूम हुआ, जैसे अन्दर किसी जड से अटक गया हो। पर असल मे धरती मे दुवक कर वैठा था वह चर। उसने ही हल की पैंड पर टागे अपनी कसकर लिपटा ली थी और उसे चलने से रोक रहा था।

प्यारे ने सोचा कि यह क्या अजव वात है। कल तो यहाँ कोई जड-वड थी नही। फिर भी यह जड यहाँ आई तो कहाँ से आई!

सो झुककर गहरे हाथ देकर धरती के अन्दर उसने टटोला। अन्दर कुछ गीली-गीली और चिकनी चीज़ उसे छुई। प्यारे ने उस चीज़ को पकड कर वाहर खीच लिया। जड की तरह की कोई काली वस्तु थी और कुलवुला रही थी। असल मे वह उस चर की ही काया थी।

देखकर प्यारे वोला—"छि, क्या गद है।" कहकर हाथ ऊपर उठाया कि उस चीज को हल से दे मारे।

पर यह देखकर वह चर चीख़कर पडा। वोला—"मुझे मत मारो। जो वताओ मै वही तुम्हारे लिए करूँगा।"

"तुम क्या कर सकते हो?"

"जो कहो वही।"

प्यारे ने सिर खुजलाया, बोला—"मेरे पेट मे दर्द है। उसे अच्छा कर सकते हो ?"

"ज़रूर कर सकता हूँ।"

"तो करो अच्छा।"

सुनकर वह चर वही अन्दर धरती मे घुस गया। वहाँ पजो से खरोच-खरोच, आस-पास टटोल, आखिर एक जडी खीचकर बाहर लाया। जड में से उसकी तीन शाख निकल रही थी। लाकर प्यारे के हाथ मे दे दी।

बोला—"यह देखिये, इनमे से जो कोई एक खायेगा उसके सब रोग दूर हो जायँगे।"

प्यारे ने जडी को लिया। तीनो को अलग-अलग किया और एक उनमे से उसने खाली। सो पेट का उसका दर्द खाते ही छन अच्छा हो गया।

इसके बाद चर ने कहा—"मुझे अब छोड दीजिए। मै अब धरती में होकर सीधा पाताल चला जाऊँगा और फिर नही लौटूँगा।"

प्यारे ने कहा—"अच्छी बात है, जाओ। और भगवान तुम्हारा भला करे।"

भगवान् का नाम प्यारे के मुह से निकलना था कि जैसे जल मे ककड गिरकर गायब हो जाय वैसे ही वह चर धरती मे गिरकर लोप हो गया। वहाँ निशानी मे बस एक सूराख रह गया।

प्यारे ने बाकी बची जडी की दोनो जडे टोपी मे खोसली और अपने हल मे लग गया। खेत की बची किनार उसने पूरी कर दी। फिर हल उलटा कर अपने घर लौट चला। बैलो को खोलकर बाँध दिया और घर के अन्दर आया। वहाँ देखता है कि बडा भाई बलजीत और उसकी बीवी जीमने थाली पर बैठे है। बलजीत का इलाक़ा-जायदाद सब ज़ब्त हो गया था और जैसे-तैसे वह जेलखाने से निकल भागकर यहाँ बाप के घर दिन गुज़ारने आया था।

प्यारे को देखकर बलजीत ने कहा—"प्यारे, हम तुम लोगो के यहाँ

रहने आये हैं। दूसरा वन्दोवस्त हो तव तक मै और मेरी वीवी तुम्हारे ऊपर हैं। खयाल रखना।"

प्यारे बोला—"अच्छी वात है। खुशी के साथ यहाँ रहिए।"

पर हाथ-मुँह धोकर प्यारे जो आकर खाने साथ बैठने लगा तो वलजीत की श्रीमती को अच्छा नहीं लगा। प्यारे के कपडो से उसे वास आती मालूम हुई। अपने पति से वोली—"ऐसे गवार देहाती के साथ बैठकर मुझसे तो नही खाया जाता।"

सो वलजीत ने कहा—"प्यारे, तुम्हारी भाभी कहती हैं कि तुम मे वास आती है। सो तुम वाहर जाकर खा सकते हो।"

प्यारे बोला—"अच्छी वात है। यो भी रात मुझे बैलो की सानी-पानी को वाहर रहना था।"

सो रोटी ली और दोहर कन्धे पर डाल वाहर ढोरो की सानी-पानी के काम मे वह लग गया।

(४)

अपना काम निवटा कर वचन मुताविक उस रात वलजीत का चर मूरख वाले अपने साथी की तलाश मे आया। वह मूरख-प्यारे को वस मे लाने मे अपने साथी की मदद करने आया था। पर प्यारे के खेत पर आकर उसने वहुतेरी खोज-ढूँढ की। पर साथी तो मिला नही, मिला वह धरती का सूराख।

सोचा—"जरूर कोई मेरे साथी पर विपत पडी है। सो मुझे उसकी जगह भरनी चाहिए। खेत तो खैर उसने पूरा खोद दिया है। सो चलकर चराई की जगह उस मूरख की खबर लेता हूँ।"

सो जाकर शैतान के वच्चे ने मूरख की जमीन को पानी-ही-पानी से भर दिया जिससे घास सव कीच से लथपथ होगई।

मूरख सवेरे के वक्त वाहर चला। हँसिया उसने पैना लिया कि जाकर घास काटनी है। कटाई उसने शुरू की। पर दो-एक हाथ मारना था कि क्या देखता है कि हँसिया मुड-मुड जाता है और घास कटती नही है। कही और धार पैनाने की तो ज़रूरत नही आगई। कुछ देर तो प्यारे

कोशिश करता रहा। फिर बोला—"ऐसे नही, घर चलकर कुछ लाऊँ कि हँसिया सीधा हो जाय। शाम की चलो रोटी भी लिये आता हूँ। देखा जायगा जो होगा। हफ्ता भर चाहे क्यो न लगे। मुझे भी घास काट-कर ही छोडनी है।"

चर ने यह सुना तो सोचा—"यह मूरख तो लोहे का चना मालूम होता है। ऐसे यह बस मे नही आयेगा। कोई दूसरी तरकीब चलनी चाहिए।"

प्यारे लौटा। हँसिया सीधा किया और पैनाया और फिर घास काटने पर आ भिडा। पर चर इस बार धरती मे घुसकर क्या करे कि हँसिये को बार-बार बेंटे से पकडकर ऐसे घुमाये कि नोक उसकी धरती मे आकर लगे। सो प्यारे को काम मे बडी कठिनाई पडी। पर वह भी लगा ही रहा और दल-दल की जरासी जगह को छोड आखिर सब घास उसने काट डाली। तब चर आकर उस दल-दल की धरती मे बैठ गया। बोला—"चाहे मेरे पजे कट जाँय, घास मै उसे नही काटने दूँगा।"

मूरख अन्त मे उस दलदली जमीन पर पहुँचा। घास वहाँ ऐसी घनी तो नही थी, फिर भी हँसिया के बस न आती दीखती थी। प्यारे को गुस्सा चढ आया और हँसिया को पूरे जोर से घुमाकर मारने लगा। वह चर तब हार रहा। हँसिया का साथ पकडे रहना उसे दूभर होता जाता था। आखिर देखा कि यह बात भी ठीक नही बनी। सो एक झाडी मे वह घुस बैठा। होते-होते प्यारे उधर भी बढ आया। झाडी को हाथ से पकड हँसिया जो उसने चलाया तो चर की आधी पूँछ कटकर अलग हो गई। खैर, घास की कटाई खतम कर उसने बहन को बताया कि इसकी दबिया कर डालो। फिर खुद जई के खेत पर पहुँचा। हँसिया साथ ले गया था। बेपूँछ का चर वहाँ पहले जा पहुँचा था। उसने जई की बालो को ऐसा उलझा दिया था कि हँसिया उनकी कटाई के लिए बेकाम पड गया। सो मूरख घर गया और दाँतेदार दरात ले आया। उससे सारी जई उसने काटली।

फिर बोला—"अब चलो, कल मकई शुरू करेगे।"

पुछकटे चर ने यह सुना और मन में कहने लगा कि खैर, यहाँ काबू

नही आया तो क्या। चलकर मकई मे देखेगे। सवेरे तक की ही तो बात है।

सवेरे जल्दी ही वह चर खेत पर पहुँच गया। पर वहाँ देखता क्या है कि मकई तो सब कटी बिछी है। प्यारे ने रात ही रात मे सब काट डाली थी। सोचा था कि ऐसे दाने कम बिखरेगे और सोफते मे काम हो जायगा। यह देख चर को बडा गुस्सा हुआ।

"देखो न कि कमबख्त ने मुझे लहूलुहान करदिया है और थका मारा है। लडाई न हुई, यह तो आफत हो गई। क्या मूरख से पाला पडा है कि रात को भी नही सोता। पार पाना उससे मुश्किल होरहा है। खैर, मै भी उसके पूलो मे घुसा जाता हूँ और सब अन्दर से सडा दूगा।"

सो वह चर जई के पूलो मे दाखिल हो गया और सडान्द फैलाना शुरू किया। पहले तो वहाँ गरमी पहुँचाई। पर इससे खुद को भी उसे ताप मिला और सरदी मे गरमी पाकर वह चैन मे सो गया।

प्यारे गाडी लेकर बहन के साथ जई ढोने आ पहुँचा। पूलो के ढेरो पर आ एक-एक कर उन पूलो को उसने गाडी मे फेकना शुरू किया। ऐसे दो-एक फेके होगे कि जेली लेकर उसने ढेर को सहलाया। यह करना था कि जेली की नोक जाकर ऐन चर के बदन पर पडी और चर उसकी नोक मे छिद गया। जेली को उठाया तो क्या देखता है कि उसकी नोक पर पुछकटा कोई जतु-सा लिपटा हुआ है, कुलबुला रहा है और छूटने की कोशिश कर रहा है।

"क्यो रे, गन्दगी के कीडे, तू फिर यहाँ ?"

चर बोला—"जी नही, मै दूसरा हूँ। पहला मेरा साथी था और मै अब तुम्हारे भाई बलजीत पर लगा हुआ था।"

प्यारे बोला—"खैर, जो भी हो, तुम्हारी भी वही गति होगी।"

कहकर गाडी के पहिये की हाल से वह उसे दे मारने वाला ही था कि चर बोला—"मुझे छोड दीजिए। मै फिर आपको नही सताऊँगा। बल्कि जो मुझे कहेगे वही कर दूगा।"

"तुम क्या कर सकते हो ?"

"चाहे जितने मैं आपको सिपाही बना दे सकता।"

"और सिपाही वे करेंगे क्या ?"

"जो चाहे काम आप उनसे ले। जो कहेगे वही कर सकेगे।"

"गा-वजा भी सकेगे ?"

"हाँ।"

"अच्छी बात है। तो बनादो मुझे कुछ सिपाही।"

चर बोला—"यह देखिए, ऐसे जई का एक पूला ले लीजिए। उसे धरती पर जमा दीजिए और यह मन्तर पढिए—

पूले-पूले, सुन और मान,
मेरी तुझको यही जुबान।
जहाँ-जहाँ हो तेरी सीक
वहीं हो उठे एक जवान।"

प्यारे ने पूला लिया, धरती पर जमाया और चर का बताया मन्तर पढा। पूला देखते-देखते विनस गया और उसकी एक-एक बाल की जगह वर्दी से लैस सिपाही खडा दिखाई दिया। एक के पास ढोल था, दूसरे के पास तुरही—ऐसे पूरे बैंड का सरअजाम था।

देखकर प्यारे खुश हुआ और खूब हँसा। बोला—"यह तो बढिया बात रही। देखकर लडकियाँ कैसी खुश होगी!"

चर बोला—"अब मुझे जाने दीजिए।"

प्यारे ने कहा—"नही जी, सिपाही मैं खाली पुआल के बनाऊँगा। कोई मैं भला उसके लिए नाज वाली बाल खराब करने वाला थोडे ही हूँ। सो बताओ कि सिपाही फिर पहले पूले की हालत मे कैसे आ सकते है? सोचो, मुझे उनमे से नाज निकालना है कि नही ?"

चर बोला—"तो यह मन्तर पढिए—

"सुनता है तू ओरे ज्वान,
मेरी है बस एक जुबान।
सीक-सींक था जैसा पहले
वैसा ही तू हो जा मान।"

प्यारे का यह मतर कहना था कि सिपाही अन्तर्धान हो गए और जैसा का तैसा वहाँ पूला हो आया।

चर फिर हाथ जोडकर कहने लगा कि अब मुझे जाने दीजिए।

सुनकर जेली की नोक से उसे छुडाया और कहा कि अच्छी बात है, जाओ, भगवान तुम्हारा भला करे।

भगवान का नाम मुह से निकलना था कि ककड पानी मे गिरे, वैसे वह धरती पर छूट कर गायब हो गया। और वहाँ निशानी मे एक सूराख रह गया।

प्यारे लौट कर घर पहुँचा कि वहाँ देखा कि उसका मझला भाई धनवीर आया हुआ है। साथ बीवी भी है और दोनो जने खाने पर बैठे है।

धनवीर अपना देना चुकता नही कर सकता था। सो साहूकारो से बच कर वह भाग आया था और आकर बाप के घर मे शरण ली थी। प्यारे को देख कर धनवीर ने कहा—"सुनो भाई मूरख, दूसरा काम लगे तब तक मै और मेरी बीवी यही है और हमको कोई कष्ट न हो, यह तुम्हारा काम है।"

प्यारे बोला—"अच्छी बात है। आप चाहे तब तक यहाँ रहिए।"

प्यारे दोहर रख, मुह धो, आकर खाने पर बैठने लगा।

पर धनवीर की बीवी बोली—"मै उस गवार के साथ खाना नही खा सकती। सारे बदन मे पसीने की तो बू आ रही है।"

इस पर धनवीर बोला—"प्यारे, तुम्हारे बदन से गन्ध आती है। जाओ बाहर जाकर खालो।"

प्यारे बोला—"अच्छी बात है। मुझे तो वैसे भी इस वक्त बाहर जाना था।"

कहकर रोटी ले मूरख ओसारे मे बाहर चला आया।

(५)

धनवीर का चर भी खाली हो गया था। सो ठहरे मुताबिक मूरख को बस मे लाने मे अपने साथियो की मदद करने वह भी उस रात

आ पहुँचा। पर खेत मे घूम-फिर कर बहुतेरा देखा, वहाँ कोई नही था। मिला तो वहाँ सूराख मिला। वह फिर चरी की धरती मे आया। वहाँ दलदली धरती मे देखे तो उसके साथी की पूछ कटी पडी है और जई वाले खेत मे दूसरा एक सूराख और भी उसे मिला।

सोचा कि साथियो पर मेरे कोई विपत पडी दीखती है। सो उनका काम अब मुझे सभालना चाहिए और उस मूरखराज को काबू मे लाना चाहिए।

यह सोच वह चर मूरख प्यारे की तलाश मे गया। प्यारे ने नाज खलिहान मे रख दिया था और अब जगल के पेड गिरा रहा था। बात यह थी कि दोनो भाई बोले—"यहाँ तो घर मे जगह कम है और गिचपिच मालूम होती है। इससे जाओ प्यारे, पेड गिराकर कुछ जगह साफ कर डालो और वहाँ हमारे लिए नये मकान बनवा कर खडे करो।"

चर दौडा जगल मे पहुँचा। वहाँ दरख्तो की टहनियो मे लुक कर प्यारे के काम मे अडचन डालने लगा। प्यारे ने उस दरख्त को जड से काट लिया था। ऐसे काटा था कि वह कुल साफ धरती पर आ जाय। पर देखता क्या है कि दरख्त गिरा तो नही, बल्कि दूसरे पेड की शाखो से उलझ कर रह गया।

प्यारे ने इसपर बल्ली की मदद से उसे जड से कुछ सरकाया। तब कही पेड धरती पर आकर गिरा। और पेडो के गिराने मे भी ऐसे ही बीती। बहुतेरा करता, पर दरख्त सीधा साफ धरती पर न गिरता। तीसरा पेड काटा और वही बात हुई।

उम्मीद थी कि छोटे-मोटे पचास पेड तो आज काट ही गिराऊँगा। पर दस-एक भी नही हुए होगे कि साझ हो चली और वह थककर चूर हो गया। सरदी के मारे बदन से निकली पसीने की भाप जगल मे धुए की मानिन्द फैली दीखती थी। पर उस बन्दे ने भी काम नही छोडा, चिपटा ही रहा। एक और दरख्त उसने काट लिया। लेकिन अब कमर इतनी दुखने लगी कि खडा रहना मुश्किल था। आखिर कुल्हाडी पेड मे लगी छोड धरती पर बैठ कर वह दम लेने लगा।

चर ने देखा कि प्यारे काम से हार वैठा है। इस पर वह वडा खुश हुआ। सोचा, आखिर अव आकर थका तो। अव आगे भला क्या काम उठायगा। सो चलो, मुझे भी सुस्ताने को वक्त हो गया।

यह सोच चर पेड की शाख़ पर फेलकर आराम से होगया। चैन की साँस ली। पर थोडी ही देर मे प्यारे तो उठ खडा हुआ और कुल्हाडी खीच सिर के ऊपर से घुमाकर परली तरफ जोर से जो मारी कि एक-दम पेड ढहता हुआ आ गिरा। चर को यह आस न थी। उसे सँभलने का समय नही मिल पाया और पेड गिरा तो उसके पजे उसमे फँसे रह गये। प्यारे एक-एक कर पेड की टहनियाँ काटने लगा। इतने मे देखता क्या है कि दरख्त से चिपटे यह हजरत जीते-जागते वहाँ लटके हुए है। प्यारे को अचम्भा हुआ। बोला—"क्यो जी, फिर तुम यहाँ आ पहुँचे ?"

चर बोला—"जी, मै वह नही, दूसरा हूँ। अवतक तुम्हारे भाई धनवीर के साथ था।"

' जो हो। चलो, तुम्हे अपने कर्मो का फल मिला।"

यह कहकर कुल्हाडी घुमा मूठ उसकी उसके सिर पर दे मारनेवाला ही था कि वह चर दया के लिए गिडगिडाने लगा।

बोला—"मुझे मारो नही। जो कहोगे मै वही तुम्हारे लिए करूँगा।"

"तुम क्या कर सकते हो ?"

"मैं अशर्फी वना सकता हूँ। जितनी कहो उतनी।"

"अच्छी बात है, वनाकर दिखाओ।"

वह चर अशर्फी बनाने की तरकीब वताने लगा। बोला—"उस बड के कुछ पत्ते हाथ मे ले लीजिए और फिर मसलिए। धरती पर गिरकर बस अशर्फियाँ ही अशर्फियाँ हो जायँगी।"

प्यारे ने कुछ पत्ते लिये और हाथो से मला। देखता है कि हाथो से अशर्फियो की धार की धार गिर रही है।

बोला—"यह तो खूब बात है। चलो, बाल-बच्चो के मन-वहलाव का यह तो अच्छा सामान होगया।"

चर बोला—"अब मुझे जाने दीजिए।"

प्यारे ने उसको पेड से छुडा दिया। बोला—"अच्छी वात है, जाओ भगवान् तुम्हारा भला करे।"

और भगवान् का नाम आना था कि पानी मे पत्थर को तरह वह चर धरती मे गिरकर अन्तर्धान होगया। वस एक सूराख रह गया।

(६)

सो दोनो भाइयो के लिए हवेलियाँ खडी होगई और वे अलग-अलग मकान मे रहने लगे। प्यारे ने खेत की कटाई-लुनाई निबटा कर तैयारी की और एक त्यौहार के रोज़ भाइयो को अपने घर खाने का निमत्रण दिया। पर भाई दोनो उसके घर आने को राजी नही हुए।

बोले—"बडी आई कही की दावत! जो इन गवारो को खाने का सलीका भी हो! सो भला हमी उसमे जाने को रह गये है!"

भाई लोग नही आये तो प्यारे ने गाँव के और स्त्री-पुरुषो को ही जिमाया जुठाया। बडी हँसी-खुशी रही। दावत के बाद वाहर के चौक मे प्यारे आया। वहाँ स्त्रिया मगन होकर गरवा नाच रही थी। प्यारे आकर उनसे बोला कि वाह-वाह, एक नाच भाई, हमारे नाम का भी हो जाय। उसके वाद मै ऐसी चीज तुम्हे बाँटू कि पहले जिन्दगी मे तुमने देखी भी न हो।

स्त्रियाँ और भी हँसी और खुश-खुश प्यारे की तारीफ मे गाना गाती नाचने लगी। उसके वाद वोली—"लाओ देखे, तुम्हारी वह क्या चीज है।"

प्यारे ने कहा—"अभी लो।"

कहकर उसने नाज भरी एक डलिया ली और चला जगल की तरफ। स्त्रियाँ हँसने लगी। वोली—"है असल मूरख।" उसके वाद फिर अपने इधर-उधर की चर्चा करने लगी।

इतने मे देखती क्या है कि प्यारे डलिया लिए जगल की तरफ से भागा चला आ रहा है। डलिया भारी मालूम होती है और किसीसे भरी हुई है।

आकर वोला—"वोलो, दूँ तुम्हे?"

"हाँ-हाँ, दो न।"

प्यारे ने एक मुट्ठी अशर्फियाँ ली और वीच मे वखेर दी। वस अनुमान कर लीजिए कि कैसी भगदड वहाँ मची होगी। सव जनी उन्हे वीनने और छीनने झपटने लगी। आस-पास के लोग भी टूटकर पडे। एक विचारी वुढिया की तो जान जाते-जाते बची।

प्यारे वहुत हँसा। वोला—"अरे, मूरखो, वुढिया विचारी को क्यो कुचले डाल रहे हो ? जरा सवर करो। लो, मै और वखेरता हूँ।"

कहकर उसने एक पस सोना और विखरा दिया। तव तो और भी लोग आ जुटे और प्यारे ने जितनी थी सव मुहरे वहाँ फेक वखेरी। उसके वाद लोग फिर और माँगने लगे।

पर प्यारे वोला—"अव तो मेरे पास और रही नही। फिर किसी वक्त और सही। तो आओ, अव नाचे-कूदे। और अजी, तुम लोग रुक क्यो गई ? गाना अपना जारी रक्खो न।"

स्त्रियाँ पहले की भाति गाने लगी।

वोला—"नही जी, ये तो तुम्हारे गीत कुछ वढिया नही है।"

स्त्रियाँ बोली—"खूव ! वढिया गीत भला हम और कहाँ से लाये ?"

वोला—"देखो, मै वताता हूँ।"

कहकर प्यारे खलिहान की तरफ वढा। एक पूला लिया, नाज के दाने उसके अलग किये और फिर सकेर कर उसे धरती पर जमाकर रख दिया।

वोला—अव देखो—

'पूले-पूले सुन और मान
मेरी तुझको यही जुबान।
जहाँ-जहाँ हो तेरी सीक
वहीं हो उठे एक जवान।'

उसका यह कहना था कि पूला विलीन होगया और हरेक सीक की जगह एक-एक सिपाही लैस खडा हो आया। ढोल-ताशे वजने लगे और तुरही वोलने लगी। प्यारे ने सिपाहियो को हुक्म दिया कि हाँ, ऐसे ही

गा-बजाकर सबको खुश करो। इसके बाद आगे-आगे वह और पीछे-पीछे बैण्ड-पार्टी, ऐसे गली-गली जुलूस घूमा। लोगो को बडा विनोद मालूम हुआ। सिपाही खूब गाते-बजाते थे। अन्त मे प्यारे ने कहा, "अब कोई साथ मत आना।" कहकर सिपाहियो को अलग एक तरफ ले गया और फिर सबको सोक बनाकर पूले मे बाध अपनी जगह डाल दिया।

ऐसे सब हँसी-खुशी दिन बीता। उसके बाद रात हुई और प्यारे घर जाकर तबेले मे धरती पर अपना कबल डाल चैन से सो गया।

(७)

अगले दिन फौजी बलजीत के कान मे इस बात की खबर पडी। सो वह भाई के पास आया। बोला—"प्यारे, यह बताओ कि वह सिपाही तुमने कैसे बनाये थे और फिर उन्हे वहाँ लेजाकर क्या किया?"

प्यारे ने पूछा—"उससे तुम्हे भला मतलब क्या है?"

"मतलब क्या है? क्यो? सिपाही हो तो कोई कुछ भी कर सकता है। उनसे राज का राज जो जीता जा सकता है।"

प्यारे अचरज मे बोला—"अच्छा, सचमुच? पहले से तुमने क्यो नही बताया? लो, जितने कहो उतने सिपाही बनाकर मै तुम्हे दिये देता हूँ। बहन और मैने दोनो ने मिलकर कितना ही भूसा छोडा है। सो सिपाहियो की क्या कमी!"

प्यारे अपने भाई को खलिहान के पास ले गया। बोला, "देखो, मै सिपाही बना तो देता हूँ, लेकिन सबको अपने साथ ही तुम ले जाना। अगर जो कही उन्हे घर से खिलाना पड गया तब तो एक दिन मे वे गाँव का गाँव खा जायँगे।"

बलजीत ने कहा, "हाँ, सिपाही सब मै साथ ले जाऊँगा।"

इस पर प्यारे सिपाही बनाने लगा। एक पूला धरती पर जमा के रक्खा—कि फौज का एक दस्ता तैयार हो गया। दूसरा रक्खा, तो दूसरी टुकडी तैयार। सो इतने सिपाही बना दिये कि वह मैदान तो कुल उनसे भर गया।

फिर पूछा—"क्यो भाई, इतने काफी होगे?"

बलजीत की प्रसन्नता का ठिकाना नही था। बोला—"हाँ, इतने बहुत होगे। मैं तुम्हारा अहसान मानता हूँ, प्यारे।"

प्यारे बोला—"एहसान क्या। और चाहिए तो आ जाना, मैं और बना दूँगा। इस मौसम मे अपने यहाँ भूसे की कोई कमी तो है नही।"

फौजी बलजीत ने फौरन उन सब टुकडियो का कमान सभाला, उन्हे जमा किया, तरतीब दी और सबको साथ ले जग का मोर्चा लेने चल दिया।

जगी बलजीत का जाना था कि वैश्य धनवीर आ पहुँचा। उसे भी कल की बात की ख़बर लगी थी। सो आकर भाई से बोला—"भाई, बताओ सोने की मोहरे तुमने कहाँ और कैसे पाई ? मेरे पास जरा शुरू करने को भी कुछ धन हो जाता तो उससे मैं तमाम दुनिया का पैसा खीचकर दिखा देता।"

प्यारे अचरज मे भरकर बोला—"अरे, सचमुच ही तुमने पहले से मुझे क्यो नही बताया ? लो, जितनी कहो उतनी अशर्फियाँ मैं तुम्हे बनाये देता हूँ।"

धनवीर हुआ बडा खुश। बोला—"शुरू मे तो मुझे तीन टोकरी भर अशर्फियाँ बस हो जायँगी।"

प्यारे बोला—"अच्छी बात है। चलो, साथ मेरे जगल की तरफ चलो। या बेहतर हो घोडा साथ ले लो और गाडी। क्योकि वह सब बोझ तुमसे उठेगा कैसे ?"

सो दोनो जगल मे आये। वहाँ प्यारे ने बड के पत्ते हाथ मे लिये और मलकर सोने की धार धरती पर छोड दी। सो देखते-देखते अशर्फियो का अम्बार लग गया।

पूछा—"क्यो भाई, इतनी काफी होगी ?"

धनवीर का मन बासो उछल रहा था। बोला—"हाँ, हाल तो इतनी काफी होगी। तुम्हारा अहसान मानता हूँ, प्यारे।"

"यह कोई बात नही," प्यारे बोला, "और जरूरत हो तो आ जाना, मैं और बना दूँगा। बड के पेड मे अभी अनगिनत पत्ते बाकी है।"

धनवीर व्यापारी ने वह सारा गाडी भर धन बटोरा, भरा और व्यापार करने चल दिया ।

ऐसे दोनो भाई चले गये । वलजीत युद्ध जीतने गया, धनवीर लेन-देन से धन बढाने । सो जगी वलजीत ने तो एक राज्य जीत लिया और धनवीर ने व्यापार मे खूब धन कमा लिया ।

फिर दोनो भाई मिले तो अपनी-अपनी कहानी सुनाने लगे । वलजीत ने बताया कि कैसे मुझे सिपाही मिले और धनवीर ने अपनी अशर्फियाँ मिलने की वात वताई ।

वलजीत अपने भाई से बोला, "धनवीर, राज्य तो मैंने जीत लिया है और ठाट-बाट से रहता हूँ । पर सिपाहियो को रखने के लिए काफी पैसा मेरे पास नही है ।"

इस पर व्यापारी धनवीर ने कहा—"धन तो मेरे पास अकूत है । पर मुश्किल यह है कि उसकी रखवाली के लिए सिपाही नही है ।"

जगी वलजीत ने कहा—"एक काम करे—प्यारे के पास चले । मै तो कहूँगा कि तुम्हारे धन की रखवाली के लिए तुम्हे वह कुछ सिपाही वनाकर दे दे । और तुम कहना कि मेरे सिपाहियो के गुजारे के लिए धन की जरूरत है सो मुझे मोहरे बना दे ।"

आपस मे यह ठहराकर दोनो प्यारे के पास आये ।

वलजीत बोला—"भाई प्यारे, मेरे पास सिपाही काफी नही है । सो दो-एक टुकडी उनकी मुझे और चाहिए । वना दो ।"

प्यारे ने सिर हिला दिया । वोला—

"नही, अव मै और सिपाही नही वनाकर दूगा ।"

"लेकिन तुमने वचन दिया था कि वना देगे ।"

"हा, दिया था । लेकिन अव और नही वनाऊँगा ।"

"वडे मूरख हो ! क्यो नही वनाओगे ?"

"तुम्हारे सिपाहियो ने एक आदमी की जान लेली, मैने सुना है । उस दिन सडक के किनारे का खेत मै जोत रहा था, तभी एक औरत गाडी मे बैठी रोती जा रही थी । मैने कहा, क्या वात है, कोई मर गया

है ? बोली कि मेरे पति को लडाई मे बलजीत के सिपाहियो ने मार डाला है। मै तो समझता था कि सिपाही अपना गाना-बजाना किया करेगे और लोगो का मन बहलायँगे, पर उन्होने तो यह आदमी की हत्या कर डाली है ! अब मै और सिपाही बनाकर नही दूँगा।"

फिर उस अपनी बात से प्यारे डिगा नही और सिपाही नही बनाए।

धनी धनवीर ने भी प्यारे को कुछ और सोना बना देने को कहा। लेकिन उस पर प्यारे ने सिर हिला दिया। कहा—

"नही, मै अब सोना नही बनाऊँगा।"

"और जो तुमने वायदा किया था ?"

"किया था, लेकिन अब मै नही बनाता।"

"भला क्यो, मूरख ?"

"क्योकि तुम्हारी सोने की मुहरो ने हमारे हरिया की बेटी की दुधार गाय हरली है।"

"सो कैसे ?"

"कैसे क्या, हर ही जो ली है। उसके पास एक गाय थी। बाल-बच्चे उसका दूध पिया करते थे। पर उस दिन हरीचन्द की धेवती हमारे घर दूध माँगने आई। मैने कहा—'क्यो, तुम्हारी गाय क्या हुई ?' बोली—'महाजन धनवीर का कारिन्दा आया था। उसने सोने के तीन सिक्के अम्मा को दिये, सो अम्मा ने गाय उसे दे दी। अब कहाँ घर मे दूध रक्खा है ?' मै तो समझता था कि सोने की मुहरे लेकर तुम अपना और लोगो का जी बहलाव करोगे। पर उनसे तो तुम बच्चो का दूध छीनने लगे हो। नही, मै और मुहर तुम्हे बनाकर नही दूँगा।"

और इस पर प्यारे अचल होकर अड गया और मोहरे बनाकर नही ही दी। सो दोनो भाई अपने मुँह लौटकर चले गये। जाते-जाते आपस मे सलाह-मशवरा करने लगे कि कैसे अपनी मुश्किल हल करनी चाहिए।

बलजीत ने कहा—"सुनो, मै बताता हूँ। एक काम करो। तुम तो सिपाहियो के लिए मुझे धन दो और मै तुम्हे अपना आधा राज्य दिये

देता हूँ। बस, फिर धन की रक्षा के लिए काफी सिपाही भी तुम्हारे पास हो जायँगे।"

धनवीर इसमे राजी हो गया।

सो दोनो भाइयो ने आपस मे बँटवारा कर लिया। इस तरह वे दोनो ही राजा बन गये। दोनो के पास रियासत हो गई और किसीके पास धन की कमी नही रही।

(८)

प्यारे अपने देहात के घर ही रहा। गूगी बहन के साथ खेत मे काम करता और माता-पिता को पालता था।

एक दिन ऐसा हुआ कि उनके पालतू कुत्ते को कहीसे खाज लग गई। वह ऐसा क्षीण होने लगा कि जीने की आस ही नही रही। बिलकुल मराऊ हो आया। प्यारे को उस पर दया आई। बहन से कुछ रोटी माग टोपी मे रख कुत्ते को डालने वह बाहर आया। टोपी फटी थी, सो टुकडा जो कुत्ते को फेका तो उसके साथ उस जडी की एक जड भी आ गिरी। कुत्ते ने रोटी खाई और साथ वह जड भी खा गया। खाना था कि वह तो एमदम चगा हो गया। सब रोग जाता रहा और वह उछल-कूद मचाने लगा। कभी भौकता और दुम हिलाता और किलोले करता। यानी बिल्कुल पहले की भाति चुस्त तन्दुरुस्त वह हो गया।

मा-बाप को यह देख बडा अचम्भा हुआ। पूछने लगे, "कुत्ते का रोग तुमने कैसे छिन मे हर दिया?"

प्यारे बोला—"मेरे पास एक जडी की दो जड थी। एक उनमे कोई खाले तो सब रोग मिट जाय। सो उनमे से एक इस कुत्ते ने खा ली है।"

उसी समय की बात है कि राजा की बेटी बीमार पडी। राजा ने गाँव-शहर सब दूर ऐलान करा दिया कि जो बेटी को आराम कर देगा उसे खूब इनाम मिलेगा। और वह कुँआरा हुआ तो राजा की बेटी भी उसे ब्याह दी जायेगी। दूसरे गाँवो की तरह प्यारे के गाँव मे भी यह ऐलान हुआ।

मा-बाप ने यह खबर सुनकर प्यारे को बुलाया। बोले—"तुमने राजा

की ड्योढी की बात सुन तो ली है न ? तुम कहते थे कि जडी है जिससे सब रोग कट जाते है । सो जाओ और उससे राजकुमारी को आराम कर देना । बस जनम-जीते को फिर चैन हो जायगा ।

प्यारे बोला—"अच्छी बात है ।"

कहकर वह चलने को उद्यत हुआ । हाथ-मुह धोया, कपडे पहने, पर द्वार से बाहर होना था कि वहाँ एक भिखारिन मिली । उसका हाथ गल रहा था और वह लूली हुई जा रही थी । बोली—"अजी, मैंने सुना है कि तुम रोगो को आराम कर देते हो । बडी दया हो कि मेरी इस बाँह को आराम कर दो । मुझसे इसके मारे कुछ भी करते-धरते नहीं बनता है ।"

"अच्छी बात है ।"

कहकर बाकी बची जडी उसने निकाली और भिखारिन को दे दी । कहा—"लो, इसे खालो ।"

जडी को मुह के नीचे उतारना था कि भिखारिन अच्छी-भली हो गई । अब वह पहले की भाति चल-फिर सकती थी और सब काम के लायक थी ।

इतने मे अन्दर से प्यारे के माँ-बाप भी राजा के यहाँ साथ चलने के लिए आये । उन्होने सुना कि जडी तो इस मूरख ने गँवा डाली है, अब राजा की बेटी को काहे से आराम होगा ? सुनकर दोनो प्यारे को खूब झिडकने लगे । बोले—"एक भिखारिन पर दया करते हो ? भला राजा की बेटी का तुम्हे खयाल नही है ?"

पर राजा की बेटी के लिए भी प्यारे के मन मे दुख था । सो बैल गाडी मे जोत, पुआल से उसकी बैठक मुलायम बना, उसपर सवार हो, प्यारे आगे बढ लिया ।

माँ-बाप बोले—" अरे, मूरख अब कहाँ जा रहा है ?"

प्यारे बोला—"क्यो, राजा की बेटी का औगुन हरने जा रहा हूँ ?"

"बडा जा रहा है ! अरे, तेरे पास अब जडी कहाँ रह गई है, बेवकूफ ?"

बोला—"कोई बात नही । देखा जायगा ।"

कहकर वह गाड़ी हाँके चला। चला-चलता राजा के महल आया। पर महल की देहली पर उसका पाँव रखना था कि राज-कन्या को एकदम आराम हो गया।

राजा उसपर बडा खुश और विस्मित हुआ। प्यारे का आदर-सत्कार किया और कीमती कपडे दिये।

बोला—"अब तुम ही मेरे जमाई हो।"

प्यारे बोला—"अच्छी बात है।"

और राजकुमारी का प्यारे मूरख के साथ विवाह हो गया। उसके थोडे अरसे के बाद राजा का देहान्त हो गया और मूरख ही राजा बना।

इस तरह अब तीनो भाई राजा हो गये।

(६)

तीनो अपने-अपने राज्य मे राज करने लगे। जेठा बलजीत खूब कामयाब हुआ। उसने अपने राज्य का विस्तार बढा लिया। जादू के सिपाही तो थे ही, अलावा भी उसने भर्ती किये। सारे राज्य मे दस घर पीछे एक सिपाही देने का हुक्म था। उसका अच्छा कद हो और बदन मे हट्टा-कट्टा भी। ऐसे जवानो की बहुत-बडी फौज उसने खडी की और सबको कवायद सिखाई। कोई विरोध मे चूँ भी करता तो झट बलजीत अपनी फौज भेज देता। सो उसका मनचाहा हो जाता था। इस तरह आस-पास के सब राजे उसका डर मानते थे। इस तरह बलजीत की खूब आराम और वैभव मे गुजर होती थी। जिस पर नजर पडती, और जो भी चाहता, वही उसका था। क्योकि सिपाही थे और वह मनचाही चीज़ जीत कर उसको ला सकते थे।

धनवीर वैश्य भी अपने आनन्द से रहता था। प्यारासिह से जो रकम पाई थी, उसमे से उसने रत्ती भी नही खोया था, बल्कि उस दौलत को खूब बढा-चढा लिया था। अपने राज्य मे अमन और आईन का उसने दौर डाल दिया था। पैसा खजानें मे जमा रखता था, ऊपर से लोगो से कर उगाहता था। चुगी-कर एक उसने जारी किया था और सडक पर चलने या गाडी ले जाने का भी टैक्स डाला था। कपडा-लत्ता और

सामान-रसद इस तरह की चीज़ो पर भी टैक्स था । जो वह चाहता, उसे सुलभ था । पैसे की खातिर लोग सब उसे ला देते थे और खुद गुलामी को राजी थे । क्योकि हर किसीको पैसे की चाह थी ।

उधर उस मूरख प्यारे की भी हालत वुरी नही थी । ससुर के क्रिया-कर्म के अनन्तर उसने क्या किया कि राजसी सब पोशाक ली और वीवी से कहा कि इसे वक्सो मे वन्द करके रख दो । खुद वही अपने गाढे का कुर्त्ता तन पर ले लिया और काम पर चल पडा । वोला—"ठाली तो मेरा जी नही लगता है । देखो, वदन पर चर्वी भी जमती जा रही है । भूख नही लगती और नीद भी खोई मालूम होती है ।"

सो वह माँ-वाप को और अपनी गूँगी-वहन को भी पास ही ले आया और पहले की तरह खेत पर काम करने जाने लगा ।

लोग वोले—"लेकिन आप तो राजा है ।"

प्यारे वोला—"हाँ, पर राजा भी तो खाने को चाहता है न ?"

एक दिन राजा का एक मत्री आया । वोला—"तनखा देने के लिए खजाने मे पैसा नही है ।"

प्यारे—"अच्छी वात है । तो मत तनखा दो ।"

"ऐसे कोई नौकरी नही करेगा ।"

"अच्छी वात है । मत नौकरी करने दो । ऐसे उन्हे काम का और भी वक्त निकल आयगा । चलो, सब खाद ढोयें । कितना तो घूरा जगह-जगह पडा है । यह सब खाद है कि नही ।"

और लोग राजा के पास अपने मुकदमे लेकर आये । एक वोला—"अजी, इसने मेरा धन चुराया है ।"

प्यारे ने कहा—"अच्छी वात है । चुराने से तो मालूम होता है कि उसके पास कुछ था नही ।"

सो इस तरह सब लोग जानते गये कि प्यारेसिंह राजा मूरख है ।

वीवी उसकी वोली—"लोग कहते है, तुम मूरख हो ।"

प्यारे ने कहा—"ठीक तो कहते है ।"

पति की वात सुनकर वह सोच मे रह गई । पर असल मे वह भी

मूरख ही थी । मन मे बोली कि पति के खिलाफ मैं भला कैसे जा सकती हूँ । सुई जहाँ जाय, धागे को भी तो वही से जाना है न । यह कहकर उसने भी अपनी राजसी पोशाक उतार कर बक्स मे बन्द कर दी और अपनी गूँगी ननद से काम सीखने चली । सीखकर होशियार हो गई और अपने पति को खूब सहाय देने लगी ।

इसका नतीजा यह हुआ कि चतुर-सयाने जितने जन थे, सब प्यारे का राज छोडकर चले गये । बस मूरख-मूरख रह गये ।

किसीके पास कोई पैसा-सिक्का नही था । सब रहते थे और काम करते थे । भरपेट खाते और दूसरो को खिलाकर खुश रहते थे ।

(१०)

और उधर पाताल-लोक मे शैतान बाबा इन्तजार मे थे कि अब कुछ खबर मिले, अब मिले । तीनो भाइयो की बरबादी को तीन चर गये थे । पर गये मुद्दत हुई, खबर उनकी कोई नही आई । सो पता लगाने वह बाबा खुद-बखुद नर-लोक आये । यहाँ बहुत खोज-छान की । पर वे तीन चर तो कही मिले नही । मिले तो उनकी जगह तीन सूराख मिले ।

सोचा कि मालूम होता है वे तीनो नाकाम रहे और विपता के शिकार हुए । सो चलो, अब मै उन तीनो को खुद ही भुगतता हूँ ।

यह मन मे धार वह उन तीनो की तलाश मे चला ।-पर अपनी पहली जगह तो कोई उनमे से था नही और देखता क्या है कि तीनो अपने अलग-अलग राजधानी मे राज्य करते है । इससे उस शैतान बाबा को बडी खीझ हुई । बोला—"खैर, अब मै उन पर अपना हाथ आज़मा कर देखता हूँ ।"

सो पहले तो वह राजा बलजीत के यहाँ गया । पर ऐसे नही गया । भेष बदलकर गया । एक फौजी सरदार का बाना उसने बनाया और घोडा-गाडी पर सवार महल पर पहुँचा । वहाँ जाकर बोला—"हे राजा बलजीत, सुना है कि तुम बडे बहादुर, बडे पराक्रमी हो । मैने भी कई युद्ध देखे है । जगी मैदान का मुझे अनुभव है और मै तुम्हारी सेवा मे काम आना चाहता हूँ ।"

राजा वलजीत ने उससे पूछ-ताछ की और सवाल किये। देखा कि आदमी होशियार है। सो उसे नौकरी मे रख लिया और सिपहसालार वना दिया।

इन नये सेनापति ने राजा वलजीत को वताया कि कैसे एक मज़वूत सेना तैयार करनी चाहिए। ऐसी कि कोई न हरा सके। इसके लिए पहले तो हमे भरती वढानी चाहिए। राज्य मे वहुत-से लोग वेकाम है। जवानो को तो सवको फौज मे आना लाजिमी वना देना चाहिए। इस तरह फौज की ताकत अव से पचगुनी हो जायगी। फिर तोप और वन्दूक भी नये वनाने और मँगाने चाहिए। ऐसी वन्दूक मै ईजाद करूँगा कि एक वार मे सौ छर्रे छोडेगी। और तोप ऐसी कि क्या आदमी और क्या घोडा या सवार और क्या दीवार, जो सामने पडे सव उसकी मार से भस्म हो जाये। जिसके ध्वस के आगे कुछ नही ठहर सकेगा।

राजा वलजीत ने सेनापति की वात पर गौर किया। हुक्म हो गया कि अच्छा, जवान लोगो को सवको फौज मे भर्ती होना लाज़मी है और कारखाने वनवाये जहा नई तरह की वन्दूक और तोपे वडी तादाद मे तैयार होसके। यह होते ही पडोस के राजा से लडाई ठान दी गई। आमने-सामने दोनो फौजो का मिलना था कि वलजीत ने सिपाहियो को हुक्म दिया कि जवानो, कसकर छर्रे छोडो और तोपो का जौहर दिखाओ। वस क्या था। एक धावे मे दुश्मन की आधी फौज खेत रही। कुछ कट-कटा गये, वहुत ध्वस हो गये और वाकी भाग निकले। दुश्मन राजा ऐसा भयभीत हुआ कि हथियार डाल दिये और सारा राज्य अपना सौप दिया। राजा वलजीत अपनी विजय पर खुश हुआ।

वोला—"अच्छा अव हिन्दुस्तान की सल्तनत की वारी आनी चाहिए।"

लेकिन हिन्दुस्तान के राजा ने राजा वलजीत के वारे मे पहले से सव हाल-चाल ले रक्खा था। उसने भी वहा की ईजादो की नकल करली थी और कुछ अपनी नई ईजादे भी की थी। उस तरह खूब तैयारी उसने कर रक्खी थी। सारे जवान मर्द ही नही, वल्कि विन-व्याही औरतो को

भी सेना मे भरती किया था और फौज उसकी बलजीत से भी बढ़ी-चढ़ी बन गई थी। हूबहू बलजीत की-सी तोप और बन्दूक उसने ढलवाली थी। बल्कि हवा मे उडकर ऊपर से आग के बम फेकने का भी तरीका ईजाद कर लिया था।

बलजीत हिन्दुस्तान की सीमा पर चढ़ाई करके आया। खयाल था कि पहले राजा की तरह इसे भी हाथो-हाथ हार गिराऊँगा। पर पहली धार अब मोथरी होगई थी। हिन्दुस्तान के राजा ने बलजीत की फौज को पास भी न फटकने दिया। पहले ही हवा के रास्ते अपनी ज़नाना पल्टन को भेज दिया कि बलजीत की फौज पर जा आग के बम बरसाओ। जनाना पल्टन ने वहा जाकर ऐसी आग की वर्षा की कि पतगो की तरह बलजीत की फौज के लोग भुनने लगे। यह देख फौज भाग निकली और राजा बलजीत अकेला ही रह गया। सो हिंदुस्तान के बादशाह ने बलजीत का इलाका भी हथिया लिया और बलजीत ने जैसे-तैसे भाग कर जान बचाई।

इस तरह सबसे जेठे को निबटाकर शैतान अब राजा धनवीर के पास पहुँचा। इस बार व्यापारी का उसने भेप बनाया और धनवीर की राजधानी मे जाकर डेरा डाला। वहा अपनी फर्म खोलदी और लगा पैसा लुटाने। हर चीज ऊचे दाम उसने खरीदनी शुरु की। सो ज्यादा कीमत पाने के लिए दौड-दौड सब लोग उसके पास पहुँचने लगे। बदले मे लोगो के पास इतना सिक्का फैल गया कि सबके सब अपना पूरा टैक्स वक्त पर अदा कर देते थे और पहला बकाया भी सब चुका दिया था। राजा धनवीर इस पर खूब खुश हुआ। सोचा कि यह नया व्यापारी तो अच्छा आया है। अब तो और भी धन मेरे पास जुड जायगा और जिन्दगी और ऐश से कटेगी।

सो धनवीर राजा ने नयी तामीर के नक्शे बनाए और एक नया महल खडा करने का हुक्म दिया। ऐलान कर दिया कि लोग लकडी और पत्थर लाकर दे और मजदूरी के लिए भी लोगो की जरूरत है। दर हर जिस की ऊची मिलेगी। धनवीर राजा का खयाल था कि लोग पहले

की तरह झुड-के-झुड आयेगे। पर अचरज से देखता क्या है कि पत्थर और लकडी सिर ले-लेकर सब लोग उस व्यापारी के पास पहुँच रहे है और मजदूर भी उधर ही जाते है। राजा ने दर और भी ऊची चढा दी। लेकिन व्यापारी ने उससे भी सवाई करदी। धनवीर के पास बहुत धन था, लेकिन व्यापारी के पास उससे भी अकूत था। सो हर जगह व्यापारी ऊचे दाम चढा ले जाता था और वाजी उसके हाथ रहती थी।

नतीजा यह कि राजा के महल पर सन्नाटा रहने लगा। नये महल की शुरुआत भी नही हो सकी।

धनवीर के मन मे एक वडा वाग करने की आई। सो वारिश बीतते उसने लोगो को वुलाया कि आये और वाग तैयार करे। पर कोई न फटका। सब लोग उस व्यापारी का एक तालाब खोद कर तैयार करने मे लगे थे। जाडो के दिन आये, और धनवीर को कुछ पर और मुलायम पशमीनो की जरूरत हुई। आदमी खरीदने वाजार भेजे, लेकिन वे खाली हाथ लौट आये। वोले कि वाजार मे तो ये चीजे मिलती ही नही है। सव-की-सव व्यापारी ने ले ली है। वढी-चढी कीमत दे उसने वढिया से वढिया पशमीने खुद खरीद लिये है और पहिनने की जगह उन्हे विछाने के काम लाता है।

धनवीर ने कुछ उम्दा घोडे खरीदने चाहे। भेजा खरीदारो को। लेकिन उन्होने आकर खवर दी कि अच्छे-अच्छे जानवर तो सब व्यापारी ने खरीद लिये है और पानी ढो-ढोकर उसका तालाब भरने के काम वे आ रहे है।

इस तरह राजा का सारा कारवार रुकने लगा। कोई उसके लिए काम करने को राजी न होता था, क्योकि सब व्यापारी के काम में लगे थे। वस सब लोग राजा के आगे वक्त पर अपना टैक्स चुकाने चले जाते थे, क्योकि व्यापारी की कृपा से सिक्के की उनके पास कमी न थी। वाकी कोई राजा को नही पूछता था।

सो राजा के पास इतना धन जमा हो गया कि समझ न आता था,

कहा उस सबको भर के रक्खा जाय। जिन्दगी ऐसे दूभर होने लगी। नये मनसूबे बनाने तो उसके छूट ही गये। अब तो गुज़ारा चले जाता तो बहुत था। लेकिन गुज़ारे तक की मुसीबत होने लगी। हर चीज की उसके पास कमती हो आई। एक-एक कर रसोइये, कोचवान, नौकर उसे छोड व्यापारी की खिदमत मे जाने लगे। ऐसे उसे खाने के भी लाले पड आये। बाजार से ख़रीदने को भेजता तो वहाँ कुछ मिलता ही नही। सब व्यापारी ने ख़रीद लिया था और लोग बस आकर राजा का टैक्स चुका जाते थे, अधिक उन्हे राजा से मतलब नही था।

आख़िर राजा धनवीर को इसपर बडी झुँझलाहट हुई। उसने व्यापारी को देशनिकाला दे दिया। पर व्यापारी वहाँ से गया तो देश की हद के पार ही एक जगह जाकर जम बैठा। यहाँ भी उसने पहले की तरकीब की। पैसे की खीच थोडी नही होती। सो राजा के बजाय सब लोग व्यापारी के पास जा-जाकर अपने माल के ऊँचे दाम उठाने लगे।

राजा धनवीर की हालत यो खराब-पर-खराब होती गई। दिन के दिन हो जाते, और खाने को नसीब न होता। अफवाह यहाँतक उडी कि व्यापारी का कहना ह कि ठहरो, अभी मै ख़ुद राजा को ही जो ख़रीदे लेता हूँ। धनवीर सुनकर बडा हैरान था। उसे कुछ समझ-बूझ न मिलता था कि क्या किया जाय।

इसी वक्त बलजीत उसके पास आया। बोला—"हिन्दुस्तान के राजा ने मुझे हरा दिया है। सो मेरी कुछ सहायता करो।"

लेकिन यहाँ धनवीर ही गले तक अपनी मुसीबतो मे डूबा था। बोला—"यहाँ मुझे ही जो दो दिन से खाने को नही मिला है, भाई। तुम अपनी कहते हो!"

(११)

इस तरह दोनो भाइयो को ठिकाने लगा अब शैतान मूरखराज की तरफ मुडा। उसने फौजी जनरल का वेश बनाया और आकर मूरख को समझाया कि राजा के पास एक फौज जरूर रहनी चाहिए।

बोला—"फौज बिना राजा की भला शोभा क्या है। बस मुझे आप

हुक्म दे दीजिए और मैं आपके राज्य की प्रजा मे से ही सिपाही निकाल लूँगा और फौज खडी हो जायगी।"

मूरख प्यारे ने उसकी वात सुनी। वोला—"अच्छी वात है। वनाओ फौज और उन्हे अच्छे-अच्छे गाने सिखाओ। गाती-वजाती फौज जरूर वडी भली मालूम होगी।"

सो राजाज्ञा पाकर वह शैतान प्यारे के तमाम राज मे फौज की भरती करता घूमने लगा। कहने लगा कि सिपाही वनोगे तो मौज रहेगी। रोज शराव भी मिला करेगी। और उम्दा लाल पोशाक मिलेगी और भत्ता और

लोग सुनकर हँसते थे। कहते थे कि शराव तो घर चाहे जितनी हम खीच सकते । और पोशाक की जो वात है तो हमारी वहन-वीवी जैसी कहो रग-विरगी पोशाक हमे तैयार कर सकती है। और...

सो कोई भरती नही होता था।

इसपर शैतान आया और प्यारे राजा से वोला—'आपकी प्रजा तो वडी मूरख है। अपने मन से कोई भरती ही नही होता है। सुनिए, उन्हे भरती कराना होगा।"

प्यारे वोला—"अच्छी तो वात है। करो कोशिश।"

सो उस वूढे ने जाहिर ऐलान कर दिया कि सबको भरती होना होगा। जो इन्कार करेगा, राजा के यहाँसे उसे मौत की सजा दी जायगी। लोग सुनकर फौजी जनरल के पास आये और वोले—"तुम कहते हो कि हम भरती नही होगे तो राजा से हमे मौत की सजा मिलेगी। लेकिन भरती होगे तो क्या होगा, यह भी तो वतलाओ। हमने सुना है कि सिपाही भरती होकर लडाई मे मारे जाते है ?"

"हाँ, ऐसा कभी होता तो है।"

यह सुना तो लोग और हठ पकड गये। वोले—"तव तो हम नही भरती होगे। हर हालत मे मरना ठहरा ही तो वाहर से घर मरना अच्छा है।"

"तुम मूर्ख हो, जाहिल वेवकूफ हो।" शैतान वोला, "अरे, सिपाही

तो मरे या नही भी मरे। लेकिन भरती नही होगे तो फिर राजा के हाथ तुम्हारी मौत पक्की है।"

सुनकर लोग झमेले मे पड गये। मूरखराज के पास पूछ-ताछ करने पहुँचे। बोले—"एक जनरल साहब आये है। कहते है कि सब फौज मे भरती होओ। सिपाही बनकर तुम मर भी सकते हो और बच भी सकते हो। लेकिन भरती को राजी नही हुए तो प्यारे राजा तुम्हे जरूर सज़ा देकर मार देगे। क्यो जी, यह सच है?"

प्यारे हसा। बोला—"मै अकेला तुम सबको कैसे मार दूँगा? मूरख न होता तो मै तुम्हे सब समझा भी सकता था। पर सच तो यह है कि मेरी खुद की भी समझ मे यह मामला नही आता है।

लोग बोले—"तो हम भरती नही होगे।"

प्यारे ने कहा—"अच्छी तो बात है। मत होओ।"

सो लोग जनरल के पास गये और भरती होने से इन्कार कर दिया।

शैतान ने देखा कि यहाँ तो उसकी दाल गलती नही। सो उसने फतेहिस्तान के शाह के पास जाकर साठ-गाँठ करनी शुरू की।

शाह के पास पहुँचकर बोला—"सुनिए शाह साहब, चलकर राजा प्यारेसिह के इलाके पर आप हमला क्यो नही करते है। धन तो बेशक उस राज्य मे नही है। पर जमीन खूब है और चौपाये है, और गल्ला है और सब किस्म के कच्चे माल की इफरात है।"

सो फतेहिस्तान के शाह ने लडाई की तैयारी शुरू कर दी। बडी फौज इकट्ठी की। बारूद, और तोप और बन्दूक जमा की और दुश्मन के राज पर चढाई बोल दी। फौज कूच करती हुई हद लाघ उस राज के अन्दर दाखिल हो गयी।

प्रजा के लोग अपने प्यारे राजा के पास आये। बोले—"फतेहिस्तान के शाह ने हम पर चढाई कर दी है।"

प्यारे बोला—"अच्छी तो बात है। उन्हे आने दो।"

हद के अन्दर आकर फतेहिस्तान के नवाब ने पल्टन की सफरमैना टुकडी आगे भेजी कि देखो दुश्मन की फौज कहाँ छावनी डाले हुए ह।

पर इधर-उधर देखा छाना, दुश्मन की फौज का कोई पता-निशान न दीखता था। शाह इन्तजार में रहे कि अब कहीसे फौज का सूराग मिले, अब मिले। पर फौज के नाम एक आदमी नजर नही आया कि जिससे लडा जाय। इसपर फतेहिस्तान के राजा ने हुक्म दिया कि जाओ, बढकर गाँवो पर कब्जा कर लो। सिपाही चलते हुए एक गाँव पर पहुँचे। गाव के मर्द-औरत सब निकलकर अचरज से उन सिपाहियो को देखने लगे। सिपाहियो ने उनका गल्ला और चौपाये झपटकर काबू करने शुरू किये। पर उन लोगो ने कोई बाधा नही दी। बल्कि खुद सब बता-कर आसानी कर दी। फिर सिपाही दूसरे गाँव गये। वहाँ भी यही हुआ। इसी तरह दिनभर वे बढते गये। फिर अगले दिन भी सब जगह वही बात हुई। लोग सब माल योही ले-लेने देते थे, कोई विरोध नही करता था। बल्कि सिपाहियो से लोग कहते थे कि बडी खुशी की बात है, आओ न, हमारे साथ तुम भी रहो सहो।

लोग कहते, "भाई, तुम्हारे यहाँ मुश्किल है और धरती पर खाने को नाज काफी नही है तो अच्छी बात है, सब आकर यहाँ हमारे साथ क्यो नही रहने लगते हो ?"

सिपाही बढते गये। पर फौज़ कोई न मिली कि लडाई हो। अमन से रहने लोग मिले जो अपने खुद खाते थे और आव-भगत के साथ औरो को खिलाने को तैयार थे। सिपाहियो का उन्होने कोई मुकाबिला नही किया। बल्कि स्वागत-सत्कार किया। और अपने साथ आकर रहने का न्यौता दिया। सिपाहियो का जी सो इस लूट-मार के काम मे लगा नही। वे उकता गये। अपने शाह के पास आकर बोले—"यहा हम नही लडेगे, कही और का हुक्म दीजिए। लडाई तो ठीक है, पर यह भी कोई लडाई है। यह तो दूध मे छुरी भौकने के समान है। यहाँ हम अब बिल्कुल नही लड सकते है।"

शाह सुनकर बडे झल्लाये। बोले—"जाओ, सारा राज्य तहस-नहस कर डालो। गाव लूट लो, मकान जलादो, और नाज भी फूक डालो। चौपाये मार कर खत्म कर दो। अगर हुक्म मेरा न माना तो एक-एक को फासी दे दूगा।"

सिपाही मारे डर के नवाब के हुक्म के मुताबिक करने लगे। मकानो मे आग लगाई और गल्ला फूका और गायो के गले काटने लगे। पर उस राज की मूर्ख प्रजा ने अब भी मुकाबिला नही किया। बस, वे आँसू गिराते थे। क्या बुड्ढे-बुजुर्ग, क्या बूढी स्त्रिया और क्या जवान—आँसू गिराने से ज्यादा कोई कुछ नही करते थे।

बोले—"भले लोगो, हमे क्यो सताते हो ? नाज ईश्वर की नियामत है और चौपाये कुदरत को बहाल करते है। इन्हे क्यो नाहक बरबाद करते हो ? जरूरत हो तो अपने लिए ही तुम उन्हे क्यो नही ले जाते ?"

आखिर सिपाहियो का मन इस अत्याचार को और नही सहार सका। आगे बढने से उन्होने इन्कार कर दिया। सो फौज इस तरह तितर-बितर हो गई और भाग गई।

(१२)

शैतान की यह युक्ति भी काम न आई। सिपाहियो को लेकर प्यारे का कुछ नही बिगाडा जा सका। सो उसने दूसरी राह पकडी। इस बार एक भले सौदागर के वेश मे प्यारेसिंह के राज मे पहुचा और वहाँ घर बसा कर बैठ गया। सोचा कि ताकत के जोर से नही तो धनवीर की तरह पैसे के जोर से तो वह काबू मे आ ही जायगा।

जाकर राजा से बोला—"मै आपकी भलाई करने आया हूँ। देखिए, एक नफे की और उपकार की बात मै कहता हूँ। असल मे आपको समझदारी सीखनी चाहिए। मेरा इरादा है कि आपके राज मे एक बडा फर्म खोलूँ और व्यापार का सगठन करूँ।"

प्यारे राजा बोला—"अच्छी तो बात है। मरजी हो तो आइये क्यो नही। आइए और हम लोगो के साथ रहिए।"

अगले दिन वह भला व्यापारी बडे चौक मे पहुंचा। सोने की मोहरो का थैला पास मे रख लिया और लिखते जाने को एक कागज का खरीता। वहाँ बीच चौक खडे होकर बोला—"ए लोगो, सुनो! तुम पशुओ की भाति रहते हो। मै तुम्हे सिखाना चाहता हूँ कि कैसे रहना चाहिए। इल्म और अदब मै तुम्हे बताऊँगा। देखो, इस नकशे के मुताबिक मेरे लिए एक

मकान तैयार किया जाना है । मै वताता जाऊँगा, वैसे काम करते जाना। काम के वदले सोने की मुहरे तुम्हे मिलेगी ।"

यह कहकर बोरे मे भरी मोहरे उसने लोगो को दिखाई ।

उस राज्य की प्रजा के मूरख लोग वडे अचरज मे पडे । उनके यहाँ धातु के सिक्के का चलन नही था । अपना माल अदल-वदल लेते थे और मेहनत करके लेना-देना चुकाते थे । सोने की मोहरो को वे अचम्भे से देखते रह गये । वोले—"चीज तो भाई, यह खूबसूरत दीखती है ।"

सो अपना माल लाकर वह देने लगे या मेहनत करने को राजी हुए । एवज मे कुछ मोहरे ले लेते थे । धनवीर के-राज की तरह यहाँ भी शैतान वावा ने हाथ अपना खोल दिया । आओ और लूटो । लोग आ-आकर अर्शाफिया ले जाते, वदले मे अपना सामान दे जाते, या कुछ मेहनत का काम कर देते ।

यह देख वह वडा खुश हुआ । मन-मन मे कहने लगा कि इस वार मामला ठीक चल रहा है । वस, धनवीर की तरह अव इस प्यारे को भी चगुल मे लिया । देखते जाओ । क्या दीन, क्या दुनिया, सोने के मोल कुल-का-कुल उसे खरीदे लिये लेता हूँ ।

पर वे लोग थे मूरख । सोने की मुहरे पाई कि उन्होने अपनी औरतो को देदी । औरतो ने गहने बनवा लिये । लडकियाँ उसके ज़ेवर गले मे पहनती और भाति-भाति के आकार मे बनाकर अपने जूडो मे बाधती। होते-होते गली-सडक मे बालक उन सोने के टुकडो से खेलने लगे । सबके पास ही ऐसे टुकडे बहुतेरे हो चले थे । और अब किसी को उनकी ज़रूरत न रह गई थी । सो सबने उन्हे लेना बन्द कर दिया । लेकिन अभी उन नये महाजन की हवेली आधी भी नही बनी थी और सालभर के लायक भी माल-सामान उनके पास इकट्ठा नही हो पाया था । सो उन्होने ऐलान किया कि अभी काम बहुत बाकी है और लोगो की जरूरत है । अभी बहुत से गाय-बैल भी उसे चाहिये और गल्ला भी चाहिये । हर चीज और हर काम का नकद सोना दूँगा, और पहले से ज्यादा ।

पर कोई बन्दा काम करने न आया । न कोई कुछ बेचने लाया ।

हाँ, कभी हुआ तो कोई लडका या कोई नन्ही बच्ची हाथ मे बेर-अमरूद ले उसके वदले मे सोने की मुहर लेने वहाँ चली जाती तो चली भी जाती। और तो कोई पास फटकता नही था। सो उस महाजन को खाने के लाले पडने लगे। आखिर मारे भूख के वह भला आदमी गाव मे घूमने निकला कि कही कुछ सिक्का देकर खाना मिल जाय। एक घर पर जाकर उसने मोहरे देनी चाही और कहा—"यह मुहर लो और मुझे दो रोटी देदो।"

लेकिन घर मे से स्त्री बोली—"मुहर का मै क्या करूँगी। यह तो वैसे ही मेरे घर मे वहुतेरी पडी है।"

फिर दूसरे मकान पर उसने जाकर कोशिश की। कहा—"यह अशर्फी लो और मुझे एक रोटी दे दो।"

उस घर की मालकिन विधवा थी। बोली—"अजी, मुझे यह नही चाहिए। मेरे कोई वच्चा भी नही जो इनसे खेल सके। और ऐसे तीन सिक्के तो मुह देखने को मेरे पास पडे है।"

फिर एक किसान के घर जाकर उसने आजमाया। पर किसान को भी सिक्के की जरूरत नही थी। वोला—"यह सिक्का तो तुम्हारा मुझे चाहिए नही। पर राम के नाम पर जो माँगते हो तो जरा ठहरो। मै घर मे कह देता हूँ कि तुम्हे दो मुट्ठी चून दे दे।"

राम का नाम सुनना था कि मुँह बिचका शैतान वहा से भागा। राम के नाम पर कुछ लेना तो दूर की बात थी, वह नाम ही उसे ऐसा लगा जैसे वर्छी।

सो उसे खाने को कुछ भी नही मिला। मोहरे सभीके पास हो गई थी। जहाँ-कही जाता, वही लोग कहते कि इन ठीकरो की एवज मे तो देने को हमारे पास कुछ है नही। या तो कुछ और लाओ, नही तो आओ और मेहनत करो। या चाहो तो हा, राम के नाम पर हम जरूर तुम्हे दे सकते है।

पर शैतान के पास पैसे-रुपये के सिवा कुछ था नही। काम करे तो शैतान कैसा। और राम के नाम पर जो लेने की वात—सो वावा रे, वह तो उससे बन ही नही सकता था। सो उसको बडी खीझ

हुई और झुंझलाहट आई।

बोला—"जब नकद पैसा देता हूँ तो इससे ज्यादा तुम्हे और क्या चाहिए। पैसे से तुम चाहे जो खरीद सकते हो और चाहे जैसा काम निकाल सकते हो।"

पर मूरख लोगो ने उसकी बात को कान पर नही लिया। बोले—"जी नही, हमे पैसा नही चाहिए। हमे किसी का देना नही है और कोई टैक्स नही है। सो भला हम इसका बनायेंगे क्या ?"

आखिर शैतान भूखे पेट ही रात को पडकर सो गया।

बात यह मूरख राजा प्यारे के पास भी पहुँची। लोग आये और पूछने लगे—"जी, बताओ हम क्या करे ? एक भला सौदागर आया है। वह खाना तो अच्छा-अच्छा चाहता है और आराम का सब सामान चाहता है और ठाठ के कपडे। पर काम नही करना चाहता। न राम के नाम कुछ लेने के वह लायक है। बस हर किसी को हर चीज के बदले नकद सोने के सिक्के दिखाता है। पहले तो लोगो ने उनके चाव मे उसे सबकुछ दिया। सिक्के वे देखने मे बडे सुहावने लगते थे। पर हरेक के पास काफी सिक्के हो गये तो सबका जी भर गया। अब कोई उन्हे नही पूछता है। सो उस भले सौदागर आदमी का बताओ क्या किया जाय ? ऐसे तो जल्दी बिचारा भूखो मर जायगा।"

प्यारे ने पूरी बात सुनी। फिर बोला—"अच्छी बात है, उसके पेट पालने का बन्दोबस्त तो हमे करना ही चाहिए। ऐसा करो कि उसकी बारी बाँध लो। गॉव के चौपाये उसे चराने दे दिये जायँ। और एक-एक दिन एक-एक घर से उसे खाने को मिल जाया करे। है न ठीक ?"

ऐसा ही हुआ। बिचारे को दूसरा कोई चारा न था। सो वह बारी-बारी एक-एक घर से रोटी पाकर पलने लगा।

होते-होते प्यारे के घर की भी एक बेर बारी आई।

शैतान घर के अन्दर खाना खाने के लिए पहुँचा तो रसोई मे वह गूगी पीतम बहिन सब तैयारी कर रही थी।

पर वह चतुर थी और अनुभवी थी। जो काम-चोर होते और अपना

काम निवटाने से पहले आकर खाने पर पहुँच जाते थे, उनको खूब पहचानती थी। धोखा उसकी आँखो को देना मुश्किल था। उसने असल मे हाथो की पहचान कर रक्खी थी। जिनकी हथेली खुरदरी और सख्त होती उन्हे तो परोसकर थाली देती थी। औरो को अलग और पीछे बैठाया जाता था।

वह बूढा शैतान आकर रसोई मे थाली पर बैठ गया। पर गूँगी लडकी पकडकर उसका हाथ देखने लगी। देखा तो उसकी हथेलियाँ मुलायम थी और चिकनी थी। नाखून भी घिसे हुए नही थे। हाथो मे खुरदरापन बिल्कुल नही था। इस पर वह गूगी बहिन गुस्से मे बडबडाने लगी और खीचकर उसे पटडे से उठा अलग कर दिया।

इस पर प्यारे राजा की स्त्री बोली—"इस बात पर आप नाराज न होना, बाबा। मेरी ननदजी ऐसे आदमी को थाली-पटडे पर नही बैठाती जिसके हाथ काम से खुरदरे न हो। थोडा सबर कीजिए। लोग जब खा चुकेगे तो पीछे आपको मिलेगा।"

बूढे शैतान को इस पर बडी झुझलाहट हुई कि राजा के घर मे आकर उसका इस तरह अपमान किया गया। वह मूरखराज से बोला—"तुम्हारे राज्य मे यह क्या बेवकूफी का कायदा है कि सबको हाथ से काम करना पडे। तुम मे अकल नही है। जभी तो ऐसा कानून बनाया है। क्या लोग हाथ से ही काम करते है? अक्लमन्द लोग किससे काम करते है, कुछ जानते हो?"

प्यारे बोला—"हम लोग मूरख है। कैसे वह सब जानेगे। हम तो अपना ज्यादातर काम हाथ से और जिस्म से करते है।"

"तभी तो तुम लोग मूरख हो। लेकिन मै बताऊँगा कि दिमाग से कैसे काम किया जाता है, तब तुम्हे पता चलेगा कि हाथ से काम करने के बजाय सिर से काम करने मे ज्यादा फायदा है।"

प्यारे अचरज मे रह गया। बोला—"अगर ऐसी बात है तब तो ठीक ही है कि हमको मूरख कहा जाता है।"

पर बूढा शैतान अपनी ही कहता रहा। बोला—"लेकिन एक बात

है। दिमाग का काम आसान नही होता। मेरे हाथो पर दाग नही है सो तुम मुझे थाली पर नही बैठाते हो। लेकिन यह तुमको नही पता कि दिमाग का काम उससे सौगुना कठिन होता है। कभी तो सिर उसमे फटने जैसा हो जाता है।"

प्यारे सुनकर जैसे सोच मे पड गया। बोला—"तो बाबा, इतनी तकलीफ क्यो कोई अपने को दे? सिर फटने को होता है तो क्या यह कुछ अच्छा लगता है? इससे क्या यह बेहतर न होगा कि हाथ और बदन के सहारे मोटा ही काम कर लिया जावे, जिससे सिर सही रहे?"

पर शैतान बोला, "यह सब हमे तुम मूरख लोगो की खातिर करना होता है। अगर अपने सिर पर हम जोर न दे तो तुम लोग हमेशा को मूरख रहे आओ। सिर से काम लेने की वजह से अब मै तुम्हे कुछ सिखा तो सकता हूँ।"

प्यारे अचम्भे मे भरकर बोला—"जरूर सिखाइए। जिससे हाथ दुख आये तो जी-बहलाव के लिए हम अपने सिर भी कभी इस्तेमाल कर लिया करे।"

बूढेबाबा ने वचन दिया कि अच्छा सिखाऊँगा। सो प्यारे ने सारे राज्य मे डौडी करवा दी कि एक भलेमानस आये है। वह सब को सिर से काम करना सिखायेगे। बतायेगे कि कैसे हाथ से ज्यादा सिर से काम किया जा सकता है। सब लोगो को चाहिए कि आवे और सीखे।

प्यारे की राजधानी के नगर मे एक ऊँचा मीनार था। काफी सीढिया चढकर उसकी चोटी पर पहुँचना होता था। वहा एक लालटेन थी। प्यारे उन भलेमानस को वही चोटी पर ले गया कि सब लोग उनके दर्शन कर सके।

वह बाबा उस ऊँची जगह पर जमकर बैठ गये और बोलने लगे। लोग सुनने के लिए नीचे आये। उनका खयाल था कि उपदेशक महोदय हाथो को बिना इस्तेमाल मे लाये सचमुच सिर से काम करने का तरीका बतायेगे। पर असल मे जो उन्होने बताया, वह तो यह था कि बिना काम किये कैसे रहा जा सकता है। लोगो को उनका व्याख्यान कुछ ठीक
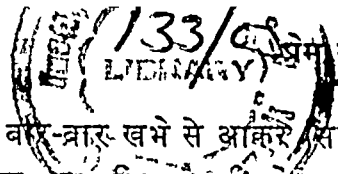
था। बार-बार खभे से आकर सिर उसका टकराता था। प्यारे का वहाँ पहुँचना था कि शैतान ढेर होकर ढह पडा और धम-धम जीने की सीढियो पर से गिरता-लुढकता आने लगा।

मूरखराज बोला—"भाई, इनका कहना सच था कि सिर के काम से कभी वह सिर बिलकुल फटने जैसा हो जाता है। छाला-गूमडी तो भला ऐसे मे चीज क्या है। अचरज नही सिर के ऐसे सख्त काम के बाद मरहम-पट्टी की जरूरत हो आवे।"

लुढकती-पुढकती वह काया आई और नीचे की पैडी पर धरती मे धडाम से उसका सिर लगा। प्यारे पास पहुँचकर देखता ही था कि इन महोदय के सिर ने कितना कुछ करतब किया है, लेकिन तभी धरती फटी और उस काया का जीव वही जाने कहाँ पाताल मे समा गया। बस एक सूराख वहाँ बाकी रह गया।

यह देख प्यारे ने अपना सिर खुजलाया। बोला—"छि, यह तो वही नरक की गध है। उसी योनि का कोई जीव मालूम होता है। पर राम-राम, यह तो पहले सबका बाप ही रहा होगा।"

× × ×

मूरखराज अपने राज्य मे अब भी राज करता है और बहुत लोग उसके राज मे जाकर बसने पहुँचते है। उसके दोनो भाई भी वही आगये है और वह उनका भी पालन करता है। जो भी परदेसी कोई पहुँचे सब को प्यारे राजा का कहना है कि आओ भाई, सब आओ। आओ, रहो। हमारे यहाँ किसीको कोई कमी नही।

बस राज मे एक नियम है। वह यह कि जिसके हाथ काम से खुरदरे होगे उसे तो मान की रोटी मिलेगी। बाकी को बचे-खुचे मे से ही मिल सकेगा।

सस्ता साहित्य मण्डल

'सर्वोदय साहित्य माला' की पुस्तकें

[नोट—× चिन्हित पुस्तकें अप्राप्य हैं]

१—दिव्य जीवन ।=)
२—जीवन-साहित्य १।)
३—तामिल वेद ।।।)
४—व्यसन और व्यभिचार ।।।=)
५—सामाजिक कुरीतियाँ× ।।।)
६—भारत के स्त्री-रत्न ३)
७—अनोखा× १।=)
८—ब्रह्मचर्य-विज्ञान ।।।=)
९—यूरोप का इतिहास २)
१०—समाज-विज्ञान ।।।)
११—खद्दर का सम्पत्ति शास्त्र× ।।।≡)
१२—गोरो का प्रभुत्व× ।।।=)
१३—चीन की आवाज× ।-)
१४—दक्षिण अफ्रिका का सत्याग्रह १।)
१५—विजयी बारडोली× २)
१६—अनीति की राह पर ।।=)
१७—सीता की अग्नि-परीक्षा ।-)
१८—कन्या शिक्षा ।)
१९—कर्मयोग ।=)
२०—कलवार की करतूत =)
२१—व्यावहारिक सभ्यता ।।)
२२—अँधेरे मे उजाला ।।)
२३—स्वामीजी का बलिदान× ।-)
२४—हमारे ज़माने की गुलामी× ।)
२५—स्त्री और पुरुष ।।)
२६—घरो की सफाई ।=)
२७—क्या करे ? १)
२८—हाथ की कताई-बुनाई× ।।-)
२९—आत्मोपदेश× ।)
३०—यथार्थ आदर्श जीवन× ।।।-)
३१—देखो नवजीवन माला
३२—गगा गोविंदसिह× ।।=)
३३—श्रीरामचरित्र १।)
३४—आश्रम-हरिणी ।)
३५—हिंदी मराठी कोष× २)
३६—स्वाधीनता के सिद्धान्त× ।।)
३७—महान् मातृत्व की ओर ।।।=)
३८—शिवाजी की योग्यता ।=)
३९—तरगित हृदय ।।)
४०—नरमेध १।।)
४१—दुखी दुनिया ।=)
४२—जिन्दा लाश× ।।)
४३—आत्मकथा (गाधीजी) १) १।।)
४४—जब अग्रेज़ आये× १।=)
४५—जीवन विकास १।)
४६—किसानो का बिगुल× =)
४७—फाँसी ! ।=)
४८—(दे० नवजीवन माला)
४९—स्वर्ण विहान× ।=)

५०—मराठों का उत्थान-पतन २॥)
५१—भाई के पत्र १)
५२—स्वगत× ।=)
५३—युगधर्म× १=)
५४—स्त्री-समस्या १॥)
५५—विदेशी कपड़े का मुकाबिला× ॥=)
५६—चित्रपट ।=)
५७—राष्ट्रवाणी× ॥=)
५८—इग्लैण्ड मे महात्माजी ॥)
५९—रोटी का सवाल १)
६०—दैवी सम्पद् ।=)
६१—जीवन-सूत्र ॥)
६२—हमारा कलक ॥=)
६३—बुद्बुद ॥)
६४—सघर्ष या सहयोग ? १॥)
६५—गाधी-विचार-दोहन ॥)
६६—एशिया की क्रान्ति× १॥)
६७—हमारे राष्ट्र-निर्माता-२ १॥)
६८—स्वतत्रता की ओर १॥)
६९—आगे बढो ! ॥)
७०—बुद्ध-वाणी ॥=)
७१—काग्रेस का इतिहास २॥)
७२—हमारे राष्ट्रपति १)
७३—मेरी कहानी (ज० नेहरू) २॥)
७४—विश्व-इतिहास की झलक (जवाहरलाल नेहरू) ८)
७५—पुत्रियाँ कैसी हो ? ॥)
७६—नया शासन विधान-१ ॥)
७७—(१) गाँवो की कहानी ॥)
७८—(२-९) महाभारत के पात्र ॥)
७९—सुधार और सगठन १)
८०—(३) सतवाणी ॥)
८१—विनाश या इलाज ॥)
८२—(४) अग्रेज़ी राज्य मे हमारी आर्थिक दशा ॥)
८३—(५) लोक-जीवन ॥)
८४—गीता-मथन १॥)
८५—(६) राजनीति प्रवेशिका ॥)
८६—(७) अधिकार और कर्तव्य ॥)
८७—गाधीवाद समाजवाद ॥)
८८—स्वदेशी और ग्रामोद्योग ॥)
८९—(८) सुगम चिकित्सा ॥)
९०—प्रेम मे भगवान् ॥=)
९१—महात्मा गाधी ।=)
९२—ब्रह्मचर्य ॥)
९३—हमारे गाँव और किसान ॥)
९४—अभिनन्दन-ग्रथ १॥) २)